THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY
OU_178841
UNIVERSAL LIBRARY

मंजिल

स्व० कुशवाहा कान्त

प्रकाशक

त्रिलोक कुशवाहा

कान्त साहित्य सदन,

महुवरिया, मिर्जापुर

●

नवीन संस्करण

चार रुपया

●

मुद्रक

चिनगारी प्रेस, वाराणसी

'तुरन' को

बड़ा सा कमरा !

जैसे दुनिया भर की दौलत इकट्ठी कर दी गई थी उसमें। संसार का सारा सौंदर्य वहाँ हाथ पसारे खड़ा था। आराम और ऐश की सभी चीजें, शाहंशाह का इन्तजार कर रही थीं।

मणिमुक्ता-जसित चार बड़े-बड़े झाड़ लटक रहे थे, चित्र-विचित्रित छत की छाती पर।

दरवाजों पर रेशमी परदे झूल रहे थे, जिसमें गुथे हुए मोती चमक रहे थे, चमाचम !

सोने की पलंग पर रेशमी गुलगुला गद्दा लगा हुआ था।

पलंग के पास रखे हुए एक छोटे से चाँदी के तख्त पर साकी बैठी हुई थी। उसकी बगल में दिलरुबा निस्पन्द पड़ा था।

साकी का बदन चाँद का एक टुकड़ा था।

चाँदी के टुकड़े पर जवानी खिल उठी थी। बदन का रेशा-रेशा मदहोश बन चुका था। वक्षस्थल बोझिल हो गये थे। कमर, जवानी के दबाव से सिसकियाँ भर रही थी।

साकी का नाम था नरगिस।

नरगिस-सी खूबसूरत थी वह। उसकी रग-रग में नदी की लहरें भरी हुई थीं, जिससे उसकी अदा में और भी मदहोशी आ गई थी।

साकी तख्त पर बैठी हुई शाहंशाह की प्रतीक्षा कर रही थी। उसकी आँखें आधी खुली, आधी बन्द थीं। नयन कोटरों की दरार से शरबते अनार की मादकता झाँक रही थी। शरीर अवश होकर, कलापूर्ण ढंग से तख्त पर पड़ा था।

"बाअदब, बामुलाहजा होशियार!—"

ख्वाजासरा की पुकार कानों में पड़कर गूँज उठी—

और गूँज उठी, शाही महल की खूबसूरत दीवालें, उस तेज आवाज से। चारो ओर सन्नाटा छा गया।

साकी के बदन में हरकत हुई और वह तख्त से नीचे उतर कर अदब के साथ खड़ी हो गई।

ख्वाजासरा की तेज आवाज पुनः सुनाई पड़ी—

"बाअदब बामुलाहजा होशियार!...साकीये शाहंशाह होशियार!..."

साकी अब और अदब के साथ झुककर, कोर्निश करती खड़ी हो गई—बेजान पत्थर की पुतली की तरह।

उसी समय दरवाजे का रेशमी पर्दा एक ओर को हटा दिया गया। उस ख्वाबगाह में शाहंशाह-तातार ने प्रवेश किया।

पचास साल की उम्र!

मुँह पर रोबीली मूँछें और दाढ़ी।

बदन पर मूल्यवान शाही चोगा और सर पर बादशाही ताज।

शाहंशाहे-तातार बूढ़ी उम्र में भी जवान लग रहे थे। मुखाकृति क्रूरतापूर्ण एवं निर्दयी थी।

पीछे-पीछे पचासों नौजवान खूबसूरत बाँदियाँ उनका लबादा उठाये हुए आ रही थीं।

शाहंशाह आकर पलंग पर बैठ गये और हाथ से कुछ इशारा किया।

वे बाँदियाँ सर नीचा किये हुए पीछे हटती हुई बाहर हो गईं और दरवाजे पर का रेशमी परदा पुनः यथास्थान कर दिया गया।

शाहंशाह ने चुभती दृष्टि से एक बार कमरे का निरीक्षण किया।

साकी अब तक कोर्निश की अदा में झुकी हुई थी।

साकी की जवानी, शाहंशाह की निगाहों में कसक उठी।

"साकी !..." शाहंशाह ने पुकारा।

"....."

साकी निश्चल रही, पूर्ववत्।

"नरगिस।...साकी !..." पुनः पुकारा शाहंशाह ने।

साकी ने सर उठाया—मादक मुस्कुराहट झाँक उठी सलोने होठों से।

"हजूरे आलम !—" शहद बरस पड़ा, उस छोकरी के हसीन मुँह से।

"इधर आओ हूर !...पास आओ !..." शाहंशाह ने कहा और हूर आकर उनके बुढ़ापे से सटकर खड़ी हो गई।

शाहंशाह ने उसका खूबसूरत चिबुक ऊपर उठाया—

"शाबाश !—" शाहंशाह बोले—"तुम्हारी जवानी तो किसी दिन दुनिया में तूफान मचा देगी साकी !...आफरीं ! तुम्हारे हुस्न के सदके !..."

"जिल्ले सुब्हानी !..."

साकी ने मुस्कुराकर कर केवल इतना कहा।

और तब उसकी कमर पर दरिया की लहरें लहरा उठीं। उसके नाजुक पतले-पतले हाथ आगे बढ़े।

बाँदा के हाथ ने सुराही और प्याला ले लिया।

छल-छल की आवाज हुई।

सोने के प्याले ने अपने मुँह तक शरबते अनार भर लिया।

साकी ने अपनी उमड़ती हुई जवानी शाहंशाह की गोद में डालकर उन्हें शरबते-अनार पिलाया।

चार जाम पीते ही शाहंशाह की क्रूर आँखों में वासना की लालिमा नृत्य करने लगी।

साकी उठकर अपने तख्त पर चली गई।

दिलरुबा उठाकर, छेड़ दिया उसके तारों को।

दिलरुबा मधुर ध्वनि से गाने लगा।

शरबते-अनार की मदहोशी, दिलरुबा के मादक स्वर से जा लिपटी। दोनों विभोर हो उठे।

"बाअदब, बामुलहजा होशियार।"—बाहर ख्वाजासरा की पुकार पुनः सुनाई पड़ी—"साकीये शाहंशाह होशियार!...मलकये आलम, शाहंशाह सलामत के दरे दौलत पर हाजिर हैं..."

दिलरुबा का बजना रुक गया।

कमरे का रेशमी पर्दा हटा। एक बाँदी कोर्निश करती हुई नजर आई।

"मल्का को हाजिर होने दिया जाय!" शाहंशाह ने आज्ञा दी।

बाँदी चली गई। साकी पुनः कोर्निश करती हुई खड़ी हो गई। एक बार पुनः ख्वाजासरा की पुकार सुन पड़ी।

उसी समय सल्तनत तातार की मलकये-आलम ने वहाँ प्रवेश किया।

झुककर उन्होंने शाहंशाह को आदाब बजाया।

शाहंशाह ने मल्का का हाथ पकड़कर पलंग पर बैठा लिया।

"हजूर आलम की तबियत तो दुरुस्त है न?" पूछा मल्का ने।

मल्का की उम्र पैंतीस के ऊपर थी। सौंदर्य की देवी थीं वे, राजसी परिधान में बड़ी आकर्षक लगती थीं।

"दुरुस्त है—" शाहंशाह ने कहा—"क्या मैं मल्का के इस बेवक्त तशरीफ लाने का सबब जान सकता हूँ?"

"मेरे आने का कोई खास सबब नहीं है आलम पनाह!—" मल्का ने कहा—"एकाएक शाहजादा रशीद की याद आ जाने से दिल बेताब हो उठा। सोचा, चलकर आप से उनकी खैरियत दरियाफ्त करूँ।"

"उसके लिये तुम बड़ी बेचैन हो मल्का!...." शाहंशाह के मुख पर थोड़ी देर के लिए एक क्रूर मुस्कान चमक कर विलीन हो गई—"वह

मेरा भाई है...सगा भाई !...तुमसे यजदा मुझे उसकी फिक्र होनी चाहिए...मगर मैं देखता हूँ कि उसने तुम्हारे दिल पर मुझसे भी ज्यादा असर डाल रखा है...."

"बजा फरमाते हैं हजूर शाहंशाह !—" मल्का बोली—"जब आप दोनों के माँ बाप मौत के शिकार हुए, तो मैंने ही उस छोटे से बच्चे रशीद की परवरिश की और उसे इतना बड़ा किया..."

"मगर अब तो वह काफी जवान हो चुका है मल्का !..." तेज आवाज में शाहंशाह ने कहा—"अब उसकी मुहब्बत से अपने को ज्यादा बेताब बनाना, तुम्हारी शराफत में धब्बा लगा देगा मल्का !..."

"हजूर का ख्याल गलत है...नौजवान शाहजादे के लिए मेरे दिल में माँ का सच्चा प्यार है...हजूरे आलम खामखाह दूसरी बातें सोचकर अपने को परेशान करते हैं...मैं शाहंशाह सलामत को यकीन दिलाती हूँ कि अपना कोई खास बच्चा न होते हुए भी, शाहजादा रशीद मेरे बेटे की तरह है..."

"हो सकता है कि तुम्हारा कहना ठीक हो...मगर इन्सान के अन्दरूनी ख्यालात जान लेना मेरे लिए गैरमुमकिन है मल्का !—" शाहंशाह ने कहा।

उनके मुख पर घृणित क्रूरता नाच रही थी। उनकी आकृति से यह स्पष्ट था कि उन्हें मल्का और शाहजादे के सम्बन्ध में बहुत पहले से सन्देह है।

"हजूर सुलतान एक दिन इन बातों का सबूत पा जायँगे..." मल्का ने कहा, धीरे से। शाहंशाह की सन्देहात्मक बातों से उनका हृदय ग्लानि से भर उठा था!

"मैं तो कहता हूँ कि तुम्हें उसके लिये परेशान होने की कत्तई जरूरत नहीं—" शाहंशाह बोले—"मैं उसका भाई हूँ, सरपरस्त हूँ, शाहंशाह हूँ। उसकी भलाई-बुराई का जिम्मेदार मैं हूँ, तुम नहीं..."

"बजा फरमाते हैं आलीजाह !"

"काशगर में जलील डाकुओं ने बगावत मचा रखी थी—" शाहंशाह कहने लगे—"शाहजादा रशीद का, वहाँ जाकर उन्हें सजा देना वाजिब था और इसीलिये वह गया भी है..."

"मगर इस काम में कितना खतरा है हजूर सलामत ?—"

"खतरा ?..." हो-हो कर कठोर मुद्रा में हँस पड़े शाहंशाह—"तुम्हारा मतलब है कि खतरों से डरकर इन्सान बुजदिल और काफिर बन जाय...मर्द के बच्चों के लिये खतरों की सेज, फूलों का बिस्तर है मल्का !...तुम समझती हो कि शाहजादे के लिये सिर्फ तुम्हारे दिल में ही मुहब्बत है और मेरे दिल में नहीं ?..."

"....."

निस्तब्ध बैठी रहीं मल्का ।

"मल्का !"—मल्का कहते-कहते शाहंशाह की आवाज नम्र हो गई थी—"यह न भूलो कि तुम अगर शाहजादे की माँ जैसी हो, तो मैं बाप जैसा...जाओ, जाकर आराम करो....दरबार-आम का वक्त हो चुका है । मुझे भी जाना है ।"

उठ खड़ी हुई मल्का ।

शाहंशाह को आदाब बजाकर धीरे-धीरे कमरे के बाहर हो गईं ।

इस समय उनका हृदय अत्यन्त सन्तप्त था । आज शाहंशाह की बातों ने उनके मर्मस्थल पर चोट पहुँचाई थी ।

मल्का ने शाहजादा रशीद को अपने बच्चे की तरह पाला था । अपना समग्र मातृत्व, अपने पति के भाई के लिए उड़ेल दिया था । मल्का के लिये रशीद उनका देवर न था, स्वयं उनका पुत्र था ।

परन्तु दुनिया पाक मुहब्बत का बात क्या समझेगी ?

जब स्वयं शाहंशाह को ही सन्देह है तो औरों की क्या बात है !

मल्का के जाने के बाद शाहंशाह ने साकी की ओर देखा, जो अब तक सर झुकाये हुये दरवाजे के पास खड़ी थी ।

"साकी !"

पुकारा शाहंशाह ने।

कम्पन हुआ उस नाजुक बदन में। सर उठाया साकी ने।

चार आँखों ने आपस में इशारेबाजी की और साकी का प्याला लबालब तैयार हो गया।

मदिरा की मादकता ने शाहंशाह के हृदय से पूर्ण भाव दूर भगा दिया।

"देखो नरगिस !..." शाहंशाह बोले।

नगरिस उनकी गोद में थी।

उसने आँख उठा कर पुतलियों द्वारा 'क्या ?' का भाव प्रदर्शित किया।

"मल्का की बातें सुनी तुमने ?..." पूछा शाहंशाह ने।

"सुनीं हजूरे आलम ! खूब गौर से सुनीं..."

"मल्का मेरी बीबी है...शाहजादे के लिये उनकी यह बेताबी मेरे डाह का सबब बन सकती है—" शाहंशाह बोले।

"मेरी जान बख्शें हजूर !—" साकी बोली—"मल्का औरत हैं। उनके दिल में भी अरमानों की दरिया है, उनके जिस्म पर भी जवानी का आलम है..."

"तुम्हारा मतलब ?—" शाहंशाह ने पूछा—"साकी ! तुम्हारा मतलब क्या है ?"

"बहुत साफ है मेरा मतलब जहाँपनाह !—" साकी बोली—

"हजूर मर्द हैं—सैकड़ों मुलायम जवानियाँ बरबाद कर सकते हैं आप...मगर मल्का औरत हैं, उनका दूसरे मर्द की ओर बेटे की मुहब्बत से भी देखना गुनाह है..."

चुप हो रही साकी। उसने दीन-दुनिया के मालिक के आगे कितनी धृष्टतापूर्ण बात कह दी थी।

मगर शाहंशाह एकाएक गम्भीर हो उठे।

उनका चरित्र अभेद्य था। उनके अन्तस्तल का भेद लेना असम्भव था।

उनकी गम्भीरता से साकी घबड़ा उठी। वह नहीं जानती थी कि एकाएक उससे ऐसी गुस्ताखी हो जायगी।

न जाने कैसे उसने वे वाक्य कह डाले थे।

शाहंशाह की मुखाकृति उत्तरोत्तर गम्भीर होती गई।

अब साकी के पैर भय से थर-थर काँपने लगे। बदन का रेशा-रेशा हिलने लगा। जवानी की लालिमा कालिमाच्छन्न हो गई।

शाहंशाह ने सर उठाया—

"खातू!..." गम्भीर स्वर में पुकारा उन्होंने।

रेशमी पर्दा हटा। एक भयानक तातारी औरत ने वहाँ प्रवेश किया। उसकी कमर में बहुत से छूरे लटक रहे थे।

उसने शाहंशाह को कोर्निश की और अदब के साथ खड़ी हो गई।

साकी का भय चरम सीमा तक पहुँच गया, उस खूँखार औरत को देखकर।

"देखो...?—" शाहंशाह तेज आवाज में बोले—"इस छोकरी की जान जितनी छोटी है, जबान उतनी ही दराज है.....ले जाओ इसे..."

खातू ने आगे बढ़कर साकी का हाथ मजबूती से पकड़ लिया। नरगिस दर्द से चीख उठी।

वह रोती हुई बोली—"शाहंशाहे आलम! रहम!....."

जो छोकरी, अपनी जवानी का दरिया लेकर चन्द लमहे पहले शाहंशाह को मय चिल्लू पिला रही थी, वही जबान फिसल जाने की वजह से तड़प रही थी अब।

शाहंशाह ने कुछ इशारा किया।

और उस चीखती छोकरी के मुँह पर, ख्वातू की वजनी हथेली आ बैठी। नाक से खून बह चला। आवाज बन्द हो गई।

"इसके लिए और कोई सजा ?—" अदब के साथ पूछा ख्वातू ने।

"तीन दिन तक खाना पीना बन्द !—" शाहंशाह ने सजा सुनाई—"चौथे दिन पचास कोड़े सीने पर लगाकर खवासों के हवाले कर देना..."

"जो हुक्म आलमपनाह !..."

नरगिस को घसीटती हुई ख्वातू बाहर चली गई।

एक फूल !

खिलने से पहले डाल से तोड़ लिया गया।

उसके सौंदर्य के साथ मनमाना खिलवाड़ हुआ।

और तब उसे रौंद कर दूर फेंक दिया।

कोमल फूल का दयनीय जीवन यही तो है—

और शाहंशाह की ऐशपरस्ती का नमूना भी।

शाहंशाह के मस्तक की रगें उभर आई थीं।

उन्होंने धीरे से हथेली बजाई।

एक जवान बाँदी हाजिर हुई।

"देखो !—" शाहंशाह बोले—"नरगिस निकाल दी गई। उसकी जगह एक दूसरी साकी शाम को यहाँ मौजूद रहे... .."

"जो हुक्म आलीजाह !....."

बाँदी चली गई।

● ●

दरबारे आम की रौनक अजीब था।

बड़े से प्राङ्गण में जहाँ ऐश्वर्य एवं धन का पारावार नहीं था, दरबार का आयोजन होता था।

दरबारी यथायोग्य आसनों पर आसीन थे।

वजीरे आजम कार्यप्रणाली का विवरण हाथ में लिये हुए बैठे थे।

शाहंशाह-तातार का स्वर्णसिंहासन खाली था। अभी तक शाहंशाह दरबार में पधारे न थे।

सबकी आँखें, उनकी प्रतीक्षा कर रही थीं।

"बाअदब बामुलाहजा होशियार !....."

प्रकोष्ठ की दीवालें गूँज उठी।

दरबार में एकाएक सन्नाटा छा गया। दरबारी सम्हल कर बैठ गये।

पुनः आवाज आई—

"दरबारे आम होशियार !.....गरीबपरवर, जहाँपनाह, हजूर, शाहंशाहे आजम, आलीजाह शाहे तातार, सुलतान मुहम्मद अली बिन ताहिर, दरबार अफरोज होते हैं...बाअदब बामुलाहजा होशियार !... दरबारे आम होशियार !....."

आवाज की गूँज अभी विलीन नहीं हुई थी कि रेशमी पर्दा हट गया।

वजीरे आजम तथा अन्य दरबारी उठकर कोर्निश करते खड़े हो गये। सभी के सर झुके हुए थे, आँखें जमीन की छाती पर केन्द्रित थीं।

"बैठने की इजाजत है !....." ख्वाजासरा की आवाज आई।

सबने अपना सर उठाया, धीरे से अपने आसनों पर बैठ गये।

शाहंशाह मुहम्मद अली बिन ताहिर, शाही तख्त पर विराजमान थे। सर पर वही मूल्यवान ताज था, चेहरे पर वही दाढ़ी मूँछ और नेत्रों में वही निर्दयता का भाव।

"वजीरे आजम !" शाहंशाह ने पुकारा।

वाणी में कठोरता थी और मुखपर क्रूरता की छाप।

वजीरे आजम उठकर खड़े हो गये। सर झुका कर कोर्निश की।

"हुक्म शाहंशाहे आलम ?"—कहा उन्होंने।

"शाहजादे रशीद का कोई परवाना आया ?"

"नहीं हुजूर सलामत !" धीरे से कहा वजीर ने।

"उसे गये हुए काफी अरसा हो चुका, मगर उसने अपनी खैरियत की खबर नहीं भेजी—" शाहंशाह बोले—"पता नहीं डाकुओं की बगावत को उसने शिकस्त दी या नहीं....."

"इलाही खैर करे आलम पनाह !—" वजीर ने कहा—"हुजूर शाहजादे आलम का बाल भी बाँका न होगा..."

"तुम ठीक कहते हो बुजुर्ग !...मगर मलकये आलम शाहजादे की खैरियत के लिये बेहद गमगीन हैं—उनको दिलजोई के लिए कुछ करना चाहिये।"

"जो हुक्म आलाये हजरत !...मैं आज ही काशगर की तरफ एक प्यादा रवाना कर दूँगा..."

"बेहतर होगा..." बोले शाहंशाह।

घंटे की तेज आवाज दरबार में गूँज उठी।

शाहंशाह ने चौंककर सर उठाया।

ख्वाजासरा पुकार रहा था—

"रैय्यत तातार की तरफ से अमीर सफ्दर साहब, कुछ खास लोगों के साथ तशरीफ लाये हैं और इन्साफ के लिये हजूर शाहंशाहे सलामत की कदमबोसी की आरजू रखते हैं...

अमीर सफ्दर का नाम सुनकर शाहंशाह की आँखों में बल आ गया। वे जानते थे कि सफ्दर नौजवान है, शाहजादे रशीद का मित्र है और सबसे बढ़कर तातार की प्रजा का हितचिन्तक है।

प्रजा सफ्दर के इशारे पर चलती है और सफ्दर प्रजा का शोषण नहीं देख सकता। उसने आजकल सारी प्रजा को शाहंशाह के विरुद्ध उभाड़ दिया है और युगों से सताई हुई जनता आज अपने अधिकार पाने पर कटिबद्ध है।

चाहे शांति से अथवा क्रांति से।

प्रजा जानती है कि उसका शासक, उसका शाहंशाह, निर्दयी है, क्रूर है, उनपर जुल्म ढाने वाला है, शरबते अनार की मदहोशी में खड़े होकर भोली नारियों की अस्मत लूटनेवाला है।

जनता ऊब उठी है, इन सब अत्याचारों से।

वह नहीं चाहती थी कि शाहंशाह पेश करें और वह करुणा के आँसू बहाये।

आज उसे अमीर सफ्दर के रूप में एक सच्चा जननायक मिल गया है। जो शाही फरेबों से पूरा जानकार है।

अब वह इस नौजवान अमीर के नेतृत्व में, शोषण करने वाली शक्ति से भरपूर मुकाबिला करेगी।

शाहंशाह कुछ सोच रहे थे।

सर उठाकर उन्होंने वजीर को कुछ इशारा किया।

वजीर ने पास ही खड़े एक दरबान को आज्ञा दी—"अमीर सफ्दर साइब को इज्जत के साथ दरबार में पेश किया जाय..."

दरबान सर झुकाकर बाहर चला गया।

थोड़ी ही देर बाद लगभग दस बारह साथियों के साथ सफ्दर ने वहाँ प्रवेश किया।

सफ्दर युवक था। पचीस का रहा होगा। अच्छे खानदान की पैदाइश थी। मुखाकृति सौम्य एवं प्रतिभापूर्ण थी।

उसने और उसके साथियों ने अदब के साथ शाहंशाह को कोर्निश की।

शाहंशाह की आँखें सफ्दर को देखकर हिंसक हो उठी, परन्तु उन्होंने प्रयत्न करके अपना आन्तरिक भाव छिपाया।

"अमीर सफ्दर! अच्छे तो हो!"—पूछा शाहंशाह ने उस युवक से, जो उनके सामने अदब और निर्भयतापूर्ण ढङ्ग से खड़ा था और जिसके कारनामों को सुनकर शाहंशाह का हृदय भयभीत होने से बचा न था।

"इनायत है जहाँपनाह!—" सौम्य वाणी में उत्तर दिया सफ्दर ने।

"कैसे तशरीफ लाये हो?—"

"शाहेआलम की कदमबोसी के लिये—" सफ्दर बोला—"इसके अलावा और भी एक काम था—"

"कौन-सा?"—जानते हुए अनजान बन गये शाहंशाह।

"हजूर सलामत ने रियाया की उस अर्जी पर अभी तक गौर फरमाया या नहीं, जिसमें रियाया ने अपने ऊपर होते हुए जुल्मों की तहकीकात करने का अर्ज किया था..."

"बल्लाह!..." क्रूर मुस्कान छा गई शाहंशाह के होठों पर—"वह अर्जी क्या थी, बच्चों का तमाशा था। अमीर सफ्दर! उसपर यकीन करने की जरा भी गुञ्जाइश नहीं..."

"मगर गरीबपरवर! उसका एक-एक लफ्ज, रियाया के दिल की आह है—उसका एक-एक हरुफ़, मजलूम बेगुनाहों के खून से लिखा गया है..." सफ्दर बोला।

"रियाया चाहती क्या है सफ्दर?—" शाहंशाह की आवाज कठोर हो गई थी।

दरबार सन्नाटे में आ गया, शाहंशाह का क्रोध देखकर।

सफ्दर निश्चल रहा, केवल जबान हिली।

"रियाया इन्साफ चाहती है आलमपनाह!..."

"उसके साथ क्या बेइन्साफी की गई है ?"—पूछा शाहंशाह ने।

"गरीब रियाया को तड़पाने के लिए सैकड़ों काले कानून बनाये गये हैं, सैकड़ों नये किस्म के कर लगाये गये हैं..." सफ्दर बोला—"रियाया चाहती है कि जुल्मी कारिन्दों की जाँच हो और उन्होंने अब तक जो कहर ढाया है उसके लिए उन्हें सजा फरमाई जाय..."

"और क्या चाहती है रियाया ?"—उत्तेजित स्वर में बोले शाहंशाह। उनकी आँखें रक्तवर्ण हो रही थीं।

"वह चाहती है कि सल्तनत तातार के कारिन्दे रियाया की राय से चुने जायँ—" सफ्दर निर्भयपूर्ण भाव से कहता गया—"इस सरजमीं पर रियाया की सल्तनत कायम की जाय..."

"सफ्दर !..." चिल्ला उठे शाहंशाह। उनका क्रोध देखकर कितने दरबारी गिरते-गिरते बचे।

"शाहे आलम !—" कहता गया सफ्दर—"और रियाया यह भी चाहती है कि खुद उसके सुलतान सलामत भी, अपने ऐश वह इशरत पर खर्च की गई दौलत का रत्ती-रत्ती हिसाब दें और बतायें कि उन्हें खुदायेपाक की ओर से क्या यही अख्तियार मिले थे कि रियाया तड़पे और खुद शरबते अनार और साकी के साथ ऐशपरस्तों की जिन्दगी बसर करें..."

"सफ्दर !..."

तेजी से उठ खड़े हुए शाहंशाह। क्रोध से उनका सारा बदन काँप रहा था।

"आलमपनाह !..." सर झुकाकर कहा सफ्दर ने।

"यह न भूलो कि तुम रैयत हो और मैं शाहंशाह !...तुम शाहजादे रशीद के जिगरी दोस्त हो। ऐसा न हो कि मुझे मजबूर होकर तुम्हारी जुबान बन्द करनी पड़े..."

"इस वक्त मैं शाहजादा सलामत का दोस्त बनकर नहीं, रियाया का अदना खादिम बनकर आया हूँ—" सफ्दर संयत वाणी में बोला—"इस

वक्त मेरी जुबान से सल्तनत तातार की गरीब रियाया के अल्फाज निकल रहे हैं हजूरे आलम !...आप मेरी जबान बन्द कर सकते हैं, मगर मजलूमों के दिल की आह नहीं बन्द कर सकेंगे..."

गुस्ताखी पर गुस्ताखी करता जा रहा था सफ्दर, मगर किसमें इतना साहस था कि उस शेर की जबान पकड़ सके ?

स्वयं शाहंशाह भी उत्तेजित और बेबस थे ।

शाहंशाह मुहम्मदअली बिन ताहिर ।

जिन्होंने अपनी साकी नरगिस की जरा-सी गुस्ताखी पर, उसे कठोरतम दण्ड दिया था—

वही इतने बड़े गुस्ताख के सामने अपने को विवशता से घिरे पा रहे थे ।

वे जानते थे कि नरगिस तो उनके आसरे जिन्दगी गुजारने वाली एक नाचीज बाँदी थी—

परन्तु सफ्दर तो सारी प्रजा का प्राण है । उसके एक इशारे पर सारे तातार में खून की नदी बह सकती है ।

"जिल्ले सुब्हानी !..." सफ्दर ने शाहंशाह को कुछ सोचते देखकर पुकारा ।

"सफ्दर !..." पुनः तेज आवाज में बोले शाहंशाह—"तुम और तुम्हारे जलील साथियों ने मिलकर, रियाया को बुरे रास्ते पर चलने को मजबूर कर दिया है । तुम बगावत करना चाहते हो । अपनी रियाया के लिये मेरे दिल में रहम हो सकता है । मगर बागियों के लिये मेरी तोपें हमेशा तैयार खड़ी रहती हैं..."

"हजूर सलामत हमें तोपों का मुँह दिखाकर, हमारी जबान बन्द करना चाहते हैं—" पहली बार सफ्दर की आवाज तेज हुई थी—"शाहे आलम समझ लें कि सदियों से जुल्म सहते-सहते अब रियाया का खून उबल उठा है । अब हम इन धमकियों से डरनेवाले नहीं..."

शाहंशाह ने कुछ इशारा किया और दरबार के गुप्त द्वार पर सिपहसालार सैकड़ों सिपाहियों के साथ आ खड़ा हुआ।

सफ्दर कहता गया—

"सल्तनत की तोपें, सल्तनत के सिपाही, शाहीमहल, शाही फौज सब पर रियाया का अख्तियार है...अगर इनका इस्तेमाल, शाहंशाह सलामत रियाया पर जुल्म ढाने के लिये करते हैं, तो रियाया यह कभी बरदाश्त न करेगी..."

"नातजुर्बेकार !...." गरजकर बोले शाहंशाह—"तेरे लिए कैद ही बेहतर है..."

शाहंशाह ने पुनः इशारा किया।

सिपहसालार, सिपाहियों के साथ आ उपस्थित हुआ। दूसरे ही क्षण सफ्दर के हाथ पैर जंजीरों में थे।

"शाहे तातार ने आग को छेड़ा है—" गरजकर बोला सफ्दर—"एक दिन यह आग, शाही रुतबे को जलाकर खाक कर देगी...मगर अभी उस आग के भड़कने का वक्त नहीं आया है। मैं अपने भाइयों से मिन्नत करूँगा कि वे मेरी गिरफ्तारी से जोश में न आवें और अपने दिलों में धधकती हुई कहर की आग को और भी रौशन करें...वक्त आने पर ये लोहे की जंजीरें मेरे जिस्म को बाँध रखने में बेकाबू हो जायँगी..."

तातार का वह शेर और शाहजादे का वह दोस्त कठोर कारागार में डाल दिया गया। जाते समय उसने रियाया से शान्त रहने की प्रार्थना की।

शाहंशाह का हृदय इस घटना से क्षुब्ध हो उठा था, अतः दरबार समाप्त कर दिया गया।

शाहंशाह ख्वबागाह में आये, तो नई साकी ने कोर्निश की।

शाहंशाह ने उसे ऊपर से नीचे तक ध्यानपूर्वक देखा। आकर्षक परिधान से छन-छनकर उसकी जवानी बाहर छितरा रही थी।

"पास आओ"—शाहंशाह ने हुक्म दिया।

साकी अदब से पास आकर खड़ी हो गई।

"तुम्हारा नाम ?—" पूछा शाहंशाह ने।

"नज्मा, हजूरे आलम ?—"

"वल्लाह ! नाम तो बहुत प्यारा है तुम्हारा और तुम्हारा जिस्म भी...तुम्हारा शबाब भी काबिले तारीफ है हूर !" शाहंशाह ने कहा।

"इनायत है आलमपनाह !..." नज्मा ने कहा। वह अपने जिस्म और जवानी का आखिरी अञ्जाम जानती थी।

उसके जिस्म ने शाहंशाह के कामुक हृदय को शरबते अनार का जाम पिलाया और उसकी जवानी ने शाहंशाह की दिलबस्तगी की।

● ●

शहर जोमन की एक सराय !

टूटी-फूटी चहारदीवारी की मरम्मत कर दी गई है। प्रवेशद्वार का जर्जर फाटक रंगीन दुलहिन-सा सजा हुआ है। सराय के भीतर का कूड़ा-कर्कट साफ कर दिया गया है। रोज-रोज होने वाला झगड़ा आज शान्त है।

नीरवता है सराय के अन्दर।

सल्तनत तातार के शाहजादे रशीदअली बिन ताहिर का काफिला आज वहाँ ठहरा हुआ है, इसीलिये आज इतना जश्न है।

नीले आस्मान की छाती पर चाँद उग आया है। बादलों के कुछ सफेद टुकड़े चाँद का आलिङ्गन करने को बेताब हैं।

चारों ओर चन्द्रमा का सौन्दर्य बिखर गया है।

पेड़ की टहनियाँ मधुर चाँदनी देखकर धीरे-धीरे अपना सर हिला

रही हैं। मादक वायु लम्बे खजूर के पेड़ों पर चढ़कर चाँद पकड़ना चाहता है।

सराय का एक सजा कमरा। कमरे के दरवाजे पर खड़ी हुई दो हथियारबन्द तातारी औरतें।

दरवाजे पर पड़ा हुआ परदा—

और पर्दे के अन्दर, खुली हुई खिड़की के पास खड़े होकर चाँद की खूबसूरती देखता हुआ शाहजादा रशीद।

बीस-बाईस साल की उम्र, साँचे में ढला हुआ सुगठित शरीर। मुँह पर छोटी-छोटी मूँछें-आँखों में अनोखा तेज एवं सौम्य भाव।

बड़ी देर तक खड़ा रहा शाहजादा, खिड़की के पास। चाँदनी, हवा पर सवार होकर वहाँ तक पहुँच रही थी। तल्लीन था शाहजादा, पर लुभावना दृश्य देखने में।

थोड़ी देर बाद घूम पड़ा वह। पलंग पर आकर बैठ गया।

छत से लटकते हुए मोमी शामादान की बत्तियाँ जल रही थीं।

शाहजादा की नजर, पलंग के पास सर झुकाकर खड़ी, एक नाजुक छोकरी पर पड़ी।

"अरे!....." चौंक पड़ा शाहजादा—"तुम अभी तक खड़ी हो? गई नहीं तुम..."

"कैसे जा सकती हूँ हजूर!"—छोकरी बोली—"आपकी दिलबस्तगी का सारा जिम्मा मेरे ऊपर है.....मेरे चले जाने से मेरे मालिक नाराज होंगे..."

शाहजादे ने दूसरी बार उस छोकरी की ओर देखा।

उसे ऐसा लगा जैसे अभी-अभी वह आसमान पर के जिस चाँद को देख रहा था, वह रास्ता भूलकर सराय के उस कमरे में आ गया।

छोकरी कमसिन थी। शरीर पर जवानी का फल गदरा रहा था। आकर्षक ढंग से अदब के साथ खड़ी थी वह।

"तुम्हारे मालिक का मैं निहायत शुक्रगुजार हूँ"—शाहजादा बोला—

"उन्हें मेरा इतना ख्याल है, इसके लिये मैं उनका एहसानमन्द हूँ... अब तो मेरे आराम की सभी चीजें इकट्ठी कर दी गई हैं। उम्मीद है, अब जरा भी तकलीफ न होगी मुझे... जा सकती हो अब तुम !"

"मगर शाहजादा सलामत !"—हिचकिचाती हुई बोली वह—"मालिक का हुक्म है कि मैं आपके साथ सारी रात ठहर कर आपकी दिलबस्तगी करूँ....."

"ऐसी बात है !—" लुभावने ढङ्ग से शाहजादा हँसा—"बेहतर होगा, रात भी मजे में कट जायगी। तुम्हारे साथ रात गुजारने में अच्छा लुफ्त रहेगा.....हाँ ! तो तुम्हारा नाम क्या है बानू...?

"मुझे मुमताज कहते हैं आलमपनाह !"—छोकरी के होठों पर धीरे-धीरे मुस्कान आई और विलीन हो गई—परन्तु आँखों पर चढ़ा हुआ कटाक्ष का तीर न उतरा, न उतरा।

मगर उसका वार खाली गया। शाहजादा रशीद उस समय खिड़की से बाहर, पुनः चाँद की ओर देखने लगा था।

"क्या कहा ?" चौंककर बोला शाहजादा—"मुमताज ? अच्छा, प्यारा नाम है तुम्हारा.....मुझे यहाँ का रेगिस्तानी नजारा बड़ा ही सुहावना मालूम होता है। देखो ! सलोने चाँद की रंगरेलियाँ देखो !..."

"दिलकश नजारे हैं हजूरे आलम !—" मुमताज ने कहा।

मगर उसका दिल इन सब दृश्यों को देखने में नहीं लग रहा था। ये दृश्य तो रोज ही उसके सामने से गुजरते थे। उसके हृदय में इनके लिए तनिक भी आकर्षण न था। वह तो, सराय में आनेवाले अमीर-उमरा के लिए साकी थी। उन्हें शराब पीलाना, उन्हें अपनी जवानी से खुश करना ही उसका काम था। सराय का मालिक उसे इसीलिए रखे हुए था।

मुमताज आज से सैकड़ों बार पहिले, अच्छे-अच्छे अमीरों की गोद का खिलौना बन चुकी थी और आज उसे शाहजादे के साथ रात गुजारने की तीव्र लालसा थी—

परन्तु शहजादा तो उसके मादक सौन्दर्य से अधिक, वहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य पर रीझा था।

मुमताज को यह नौजवान शाहजादा सभी से भिन्न मालूम पड़ा।

"अरे तुम खड़ी हो ?—" शाहजादा बोला—"बैठ जाओ...कोई जगह न हो, तो आकर इस पलंग पर ही बैठो..."

युवती मुमताज के सीने में गुदगुदी भर उठी।

बोली—

"एक नाचीज बाँदी की यह मजाल कैसे हो सकती है बन्दा-नेवाज ?"

"तुम अपने को इतनी रजील क्यों समझती हो बानू ?—" शाहजादा मुमताज का हाथ पकड़कर बोला—"दुनिया के दौरान में सभी इन्सान बराबर हैं। खुदायेपाक की निगाह में दौलत, हशमत, कद्र इज्जत कोई चीज नहीं। उसे इन्सान की जान प्यारी है—इन्सान का ईमान प्यारा है..."

शाहजादे ने मुमताज को अपने बगल में बिठा लिया।

मुमताज अपनी गदराई जवानी समेटकर बैठ गई।

"तुम डरती हो मुमताज ?"—शाहजादा ने मुस्कुराकर कहा—"याद रखो ! शाहजादे का जिस्म फौलाद का है। वह तुम्हारी जवानी की आँच से कभी पिघलेगा नहीं। मेरी निगाह में औरतों की अस्मत, मर्द की सबसे बड़ी ताकत है। जब मर्द किसी औरत पर बुरा निगाह डालता है, तो वह खुद अपनी ताकत बरबाद करता है..."

"....."

आश्चर्य से देखा मुमताज ने उस शरीफ नवजवान की ओर।

नवजवान ?

शाहजादा था वह।

दुनिया की सारी दौलत उसके पास थी—गलत रास्ते पर ले जाने वाले साधन-प्रसाधन भी थे।—

मगर वह पत्थर का बना था।

उसके दिल में ऐश व इशरत के लिए जगह न थी।

"शाहजादे सलामत अजीब हैं—" कहा मुमताज ने।

"ताज्जुब है कि तुम भी मुझे ऐसा समझती हो—" शाहजादा बोला—"अपनी जिन्दगी के दौरान में क्या तुमने ऐसा शख्स देखा ही नहीं था?'

"नहीं शाहजादे आलम!—" मादक स्वर में कहा मुमताज ने—"आप मेरी नजर में पहले इन्सान हैं, जिसकी अदायें मेरे जिगर में उतर गई हैं..."

एक मनमोहक मुस्कराहट छा गई उस छोकरी के रक्तिम होठों पर।

"शुक्रिया...!" शाहजादे ने कहा।

"क्या हजूर सलामत शरबते अनार का शौक करेंगे?—" पूछा मुमताज ने।

"नहीं बानू!"—संयत स्वर में उत्तर दिया शाहजादे ने—"शरबते अनार को पीने की कौन कहे; मैं छूना भी गुनाह समझता हूँ, अपने दिल और दिमाग पर काबू रखना इन्सान का पहला फर्ज है। शरबते अनार वह शय है, जो इन्सानियत को हैवानियत में तबदील कर देती है..."

"शाहजादये आलम फरिश्ते हैं—" कहा मुमताज ने। आज उसका पाला आश्चर्यजनक मनुष्य से पड़ा था।

"क्या तुम्हें नींद आ रही है बानू?" शाहजादा बोला—"आँखें तुम्हारी आधी खुली, आधी बन्द हैं, सोना चाहो, तो इस पलंग के एक किनारे सो सकती हो..."

"लाख-लाख कोर्निश, हजूरे आलम!"—मुमताज ने कहा—"मगर इस वक्त हजूर शाहजादे, साहब को आराम फरमाने की सख्त जरूरत है..."

"क्यों?"

शाहजादे की आँखों में प्रश्न का भाव था।

"क्योंकि शाहजादे साहब एक मंज़िल तय करके यहाँ तशरीफ लाये हैं—"

"मंज़िल ?—" हँस पड़ा शाहजादा—"काशगर से चले हुए चार दिन गुजर चुके हैं, यूँही थोड़ी-थोड़ी दूर पर रुकता ठहरता आ रहा हूँ...मुझे तो जरा भी थकावट महसूस नहीं हो रही है। मैं तुम्हारे साथ खुशी से सारी रात बात कर सकता हूँ..."

"तो शाहजादे सलामत का काफिला शहर काशगर से आ रहा है ?—"

"हाँ !—" बोला शाहजादा—"डाकुओं के एक गिरोह ने बगावत कर दी थी...शाहेआलम के हुक्म से मुझे वहाँ जाना पड़ा था..."

"आखिर उनके बगावत करने का सबब ?—"

मुमताज ने पूछा।

सारी रात उन दोनों को बात-चीत करनी थी, अतः प्रश्नों का सिलसिला चालू रहा।

"सदियों से गुलाम बना हुआ इन्सान, अब आजादी की हवा में साँस लेना चाहता है बानू !—"

"ठीक है आलमपनाह !—" मुमताज ने कहा—"हुक्म हो तो एक बात अर्ज करूँ..."

"कहो...बेखौफ होकर कहो..."

"शाहजादे आलम मेरी जान बख्शें—" मुमताज बोली—"मैं पूछना चाहती हूँ कि आपने आजादी के तड़पते हुए परवानों को क्यों जलाया ?...क्या हजूर के दिल में अपनी बेकस रियाया के लिए जरा भी हमदर्दी नहीं है।..."

"बानू ?" गम्भीर स्वर में बोला शाहजादा—"यह न भूलो, कि दिल में लाख हमदर्दी होते हुये भी, मैं शाहे आलम का भाई हूँ, उनके अदने इशारे पर अपनी जान कुर्बान कर सकता हूँ..."

"मगर रियाया पर आये दिन होने वाले जुल्मों की, क्या हजूरे आलम को खबर नहीं है ?—"

"जरूर है.. मगर लाचार हूँ मुमताज !...भाईजान का साया मुझ पर है..."

"मुझे यह जानकर सख्त ताज्जुब है आलमपनाह !—" मुमताज कहने लगी—"कि ऐशपरस्त शाहे आलम के सगे भाई इस कदर साफ व पाक दिल रखते हैं..."

"....."

"मगर इतना सब होते हुए भी शाहजादा सलामत अपनी सल्तनत में रात दिन होने वाले जुल्म को बन्द क्यों नहीं करते ?"

कहकर चुप हो रही मुमताज।

इसी तरह बातों का सिलसिला तमाम रात जारी रहा।

दो घड़ी रात रह गई थी।

सफेद चाँद क्षितिज की गोद में डूबने जा रहा था—

तो शाहजादे ने कहा—

"बानू ! अब तुम सो जाओ !...तुम्हारी आँखों में नींद खेल रही है..."

"शाहजादा सलामत भी बिस्तरे-राहत पर आराम फरमायें !—" बोली मुमताज।

"बेहतर है—"

कहकर शाहजादा पलंग पर लेट गया।

मुमताज जमीन पर बिस्तर लगाकर लेट रही।

शाहजादे ने बहुत कहा, पलंग पर सोने के लिए, परन्तु वह राजी न हुई।

कैसे राजी होती ? शाहजादा उसकी नजर में फरिश्ता था।

● ●

सुबह हुई।

चिड़ियाँ चहचहा उठीं।

क्षितिज के बिस्तरे पर लेटी हुई ऊषा, आकाश से लिपटकर सिसकियाँ भरने लगी, जैसे रातभर के मिलन के बाद, वियोग की घड़ी का आगमन, उसके लिये पीड़ाद्योतक हो।

खजूर का लम्बा शरीर प्रातः समीरण का आनन्द लेता हुआ, निश्चल खड़ा रहा।

मुमताज की नींद खुल गई।

उसने देखा शाहजादा अब तक सोया हुआ है। उसने तृष्णा की नजर शाहजादे के सुगठित अवयव पर डाली। लम्बी श्वाँस उसके हृदय के कोने से निकल पड़ी।

और तब कमरे से बाहर चली गई वह।

सराय में और बहुत सी छोकरियाँ, साकी का काम करती थीं। सभी ने मुमताज को घेर लिया। कुछ तो उसे ईर्ष्या की दृष्टि से देखने लगीं, क्योंकि उसे शाहजादे के साथ रात गुजारने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

"कहो जानेमन!—" उनमें से एक मुमताज की ठुड्ढी पकड़कर बोली—"कैसा लुफ्त रहा? शाहजादे साहब के साथ कैसी गुजरी?"

"मरहबा!" दूसरी बोली—"क्या पुरलुफ्त सवाल पूछा है शफक ने?...तहजीब का जरा भी ख्याल नहीं इस बेवकूफ को...अरी तितलियों! अब बेगम मुमताज को हजूरे आलम कहकर पुकारो...रातभर तक शाहजादये आलम की गोद आबाद करती रही हैं ये!...."

"भूल हुई बेगम मुमताज!—" पहली ने कहा—"बाँदी के जबान की खता माफ फरमायें..."

"हाँ! तो शाहजादे सलामत का जिस्म मुलायम मालूम होता

है—" तीसरी ने कहा—"तभी तो प्यारी मुमताज की जवानी पर जरा भी शिकन नहीं आई..."

"होठों का शरबते अनार न पिया होगा शाहजादे साहब ने—" चौथी बोली—"सीने में दस्तंदाजी करके गुदगुदी न की होगी..."

"खामोश न रहोगी, तुम लोग ?—" बनावटी क्रोध से मुमताज ने कहा।

उन छोकरियों का, शाहजादे के प्रति ऐसे वाक्य प्रयोग करना, कदाचित उसे पसन्द न था।

"ये लो !—" पहली बोली—"चुप रहो तितलियों, चुप रहो तुम लोग...मुमताज बेगम के तो पर लग गये हैं...अब पैर जमीन पर नहीं पड़ेंगे..."

"वल्लाह !—" दूसरी बोली—"कैसी प्यारी सूरत है शाहजादे सलामत की ?...चाहो तो सीने के किसी कोने में उन्हें छिपा लो मुमताज ! तुम्हारी जवानी चाँद-सी चमक उठेगी किसी दिन..."

"ज्यादा दिक करोगी, तो मैं यहाँ से चली जाऊँगी—" मुमताज ने कहा।

"तुम सब मुमताज बेगम को फजूल परेशान करती हो"—तीसरी ने कहा—"अपनी-अपनी जबान रोको, नहीं तो उसकी शरबती आँखों में आँसू आ जायँगे और वह जाकर शाहजादये आलम की गोद में मुँह छिपाकर रो उठेगी...या खुदा ! जरा भी शराफत नहीं तुम सबों में... शर्म करो..."

"जाओ प्यारी जाओ !—" चौथी ने कहा—"शाहजादये आलम को सारी रात तुमने जगाया है। अब जाकर उन्हें उठाओ और गुसल से फारिग कराकर नाश्ता तो पेश करो..."

व्यंग की बौछारों से घबड़ा उठी थी मुमताज।

कैसे समझाये वह इन छोकरियों को, कि जवानी का आलम आते ही वह मदहोश बन गई हैं।

अपना पीछा छुड़ाकर मुमताज अपने खास कमरे में आई।

नित्य क्रिया से छुट्टी पाकर अपना वस्त्र परिवर्तन किया और तब शाहजादे के कमरे की ओर बढ़ी।

कमरे में आकर देखा—

शाहजादा रशीद अब तक दीन-दुनियाँ की सुध भूलकर नींद का आनन्द ले रहा था, रातभर के जागरण ने उसके नींद की उम्र लम्बी कर दी थी।

मुमताज पलङ्ग के पास कालीन का फर्श पर बैठ गई और शाहजादे के जागने का इन्तजार करने लगी।

उस समय पूर्वाकाश से सूर्य का गोला झाँक रहा था। पेड़ की टहनियाँ सुनहला रंग ले चुकी थीं।

सराय में चहल-पहल शुरू हो गई थी।

शहर जोमन की गलियाँ जनरव से पूर्ण हो उठीं।

शहर की आज खूब सफाई कर दी गई थी, शाहजादे का आगमन सुनकर।

सड़क पर आती हुई भिखारियों की आवाज कभी-कभी आ जाती थी—"दे खुदा की राह पर !..."

एकाएक सराय के दरवाजे पर से आती हुई, एक आकर्षक सुरीली आवाज शाहजादे के कमरे में गूँज उठी।

बाहर कोई भिखारिन गा रही थी—

दिल की दुनिया में बसाया था जिसे।
और आँखों में चुराया था जिसे॥

आवाज इतनी दिलकश और स्वर इतना आकर्षक था कि जैसे हवा का कम्पन रुक गया। चिड़ियों ने चहचहाना बन्द कर दिया।

शाहजादे की नींद खुल गई।

खिड़की की राह, हवा के साथ तैरता हुआ वह सुरीला दर्द भरा स्वर उसके कानों में तिरोहित हो उठा।

वह चुपचाप सुनने लगा।

गाने का स्वर अभी तक जारी था—

जिसकी याद में सजया था जिगर
जिसकी उल्फत में गुजारी शब मगर—
अब वही बन दर्द, दिल पर छा गये।
अश्क पलकों पर वे बन कर आ गये॥

दर्दीले स्वर ने शाहजादे के रोम-रोम में पीड़ा उसका दी। उसे लगा, जैसे वह आवाज उसके कलेजे में पैठकर उसका कोना-कोना जला रही हो।

शाहजादे का रग-रग अवश हो गया, वह करुण गायन सुनकर।

उसने सर घुमाया, तो फर्श पर चुपचाप बैठी हुई मुमताज को देखा, जो उसकी ओर एकटक देख रही थी।

शाहजादे को अपनी ओर देखता पाकर उसने उठकर कोर्निश की।

"बानू—"शाहजादा बोला—"सुबह-सुबह की यह दर्दीली आवाज किसकी है?"

"एक गरीब लड़की है हजूरे आलम!—" मुमताज ने कहा—"सराय के दरवाजे पर बैठकर रोज टुकड़े माँगा करती है... हुक्म हो तो उसकी आवाज बन्द करा दी जाय!"

"नहीं बानू! नहीं...उसकी तकलीफ उसकी आवाज से जाहिर है... उसे और तकलीफ देने से क्या फायदा?—" शाहजादा बोला—"मगर उसके गले में खुदायेपाक ने गजब की खूबसूरती दी है...उसका दर्द सुनने की तबियत करती है बानू! वह यहाँ तक आ सकती है?"

"हजूरे आलम माफ करें"—मुमताज ने कहा—"वह बड़ी गुस्ताख जवान छोकरी है। उसके बदन से उसकी गरीबी टपकती है, मगर जबान से वह बड़ी ही तेज है...सिवा सराय के दरवाजे के वह कहीं माँगने नहीं जाती और न तो नजर उठाकर मदद करने वालों की ओर देखती है...."

"अजीब है वह मुमताज!"

"उसके पास बला का हुस्न है आलीजाह ! और इसी हुस्न ने ही उसे इतना मगरूर बना दिया है—" मुमताज बोली—"मगर उसकी जवानी पर तरस खाकर कितने ही उसकी मदद करते हैं..."

"मुझे उम्मीद है कि वह मेरे बुलाने से यहाँ जरूर आयेगी..." शाहजादे ने कहा—"क्या तुम सराय के दरवाजे तक जाओगी बानू ?"

"बन्दी की मजाल क्या जो आलम पनाह की हुक्म उदूली करे ?... मैं अभी जाती हूँ। अगर सीधे नहीं आयेगी, तो जबरदस्ती ही सही..."

"नहीं मुमताज !—" शाहजादा बोला—"अगर वह अपनी खुशी से न आना चाहे, तो तुम जबरदस्ती मत करना..."

"जो हुक्म खुदावन्द !..."

चली गई मुमताज।

सोचने लगा शाहजादा—

यह भिखारिन कौन है ? इसके पास इतना आकर्षक स्वर कहाँ से आया ?

भिखारिन के गाने की आवाज अब तक आ रही थी—

उनकी याद एक कहानी हो गई।
बेवफाई की निशानी हो गई॥

गाना रुक गया। शायद मुमताज जाकर पूछ रही थी।

शाहजादा खिड़की के पास आ खड़ा हुआ। बाहर की ओर देखने लगा।

आज इस दर्दभरे स्वर ने उसे न जाने क्यों बेचैन बना दिया था। वह इसका कुछ भी कारण न समझ सका था।

लगता था, जैसे उसके दिल में तूफान उठ खड़ा हुआ हो।

मुमताज ने कमरे में प्रवेश किया। उसका मुख लाल हो रहा था !

शाहजादा घूमकर उसके सामने खड़ा हुआ।

"नहीं आई वह ?—" पूछा रशीद ने।

"नहीं हजूर सलामत !—" तेजी से बोली वह—"कहती थी न,

कि वह बड़ी मगरूर है, उसे अपने हुस्न पर नाज है...इस जैसी गुस्ताख छोकरी तो मेरे देखने में नहीं आई।"

"क्या कहा उसने ?—" संयत स्वर में पूछा शाहजादे ने।

"मैंने कहा कि चल, शाहजादा सलामत तेरी मदद करेंगे, तो उसने कहा, जिसकी मदद खुदा न करे तो एक अदना शख्स क्या कर सकेगा ?..."

मुमताज एक ही साँस में कह गई।

उसे विश्वास था कि यह बात सुनकर शाहजादा अवश्य क्रोधित हो उठेगा।

परन्तु उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब उसने देखा कि शाहजादे का चेहरा गम्भीर हो उठा।

शाहजादे के मुख पर जरा भी क्रोध के लक्षण न थे।

वह पुनः खिड़की के पास आ रहा और कुछ सोचने लगा।

पुनः स्वर घुमाकर मुमताज से बोला—

"बानू..."

"इरशाद !"—बोली मुमताज।

"मैं देखता हूँ कि जितनी दिलकश उसकी आवाज है"—शाहजादे ने कहा—"उतना ही दिलफरेब उसके जजबात हैं..."

"....."

कुछ न बोलकर आश्चर्यजनक ढङ्ग से खड़ी रही मुमताज।

"उसे अमीरों से नफरत हो सकती है, मगर मुझे तो गरीबों से हमदर्दी है"—कहने लगा शाहजादा—"उसके पास हुनर है, और मेरे पास कद्रदाँ दिल।"

"....."

सुन रही थी मुमताज।

यह शरीफ शाहजादा न जाने क्या कहना चाहता है ?

"वह मेरे पास नहीं आई—" बोला शाहजादा—"मगर मैं तो

उसके पास चल सकता हूँ, दिल में बड़ी ख्वाहिश है कि देखूँ कैसी है वह दिलफरेब छोकरी...."

आश्चर्य-चकित हो उठी मुमताज कि जो नौजवान शाहजादा उसके मादक सौन्दर्य से भी प्रभावित न हुआ था, वह केवल एक भिखारिन की आवाज पर कैसे मुग्ध हो गया ?

चुप रही मुमताज ।

"क्या तुम मेरे साथ चल सकती हो बानू ?"—शाहजादे ने पूछा। मुमताज जानती थी कि सभ्यता के साथ की गई यह विनय उसके लिये आज्ञा है ।

अतः वह बोली—"जैसी हजूरे आलम की मर्जी।"

जल्दी-जल्दी शाहजादे ने नित्य क्रिया से छुट्टी पाकर स्नान किया और नास्ते के बाद वस्त्र बदला ।

मुमताज एक बाँदी की तरह उसे सहायता देती रही

और—

आगे-आगे शाहजादा रशाद और पीछे-पीछे मुमताज उस कमरे से बाहर निकले ।

सराय के आँगन में ही, चारो ओर सन्नाटा छा गया, कोर्निश की की मंगिमा में झुके हुये लोगों पर शाहजादे की नजर पड़ी ।

शाहजादे के सशस्त्र अंगरक्षक अदब के साथ पीछे आकर खड़े हो गये ।

शाहजादा बोला—"मैं सिर्फ सराय के दरवाजे तक जाऊँगा । तुम लोग बैठ सकते हो..."

अंगरक्षक सर झुकाये चले गये ।

शाहजादा, मुमताज के साथ सराय के दरवाजे की ओर बढ़ा ।

दरवाजे के प्रहरी ने कोर्निश करके फाटक खोल दिया ।

शाहजादा सड़क पर आ रहा ।

"कहाँ है वह ?—" पूछा उसने, मुमताज से ।

"वह !" हाथ से इशारा करके बताया मुमताज ने।

शाहजादे ने देखा।

फटे चिथड़ों में लिपटा हुआ एक चाँद !

गरीबी में पिसता हुआ फूल-सा शरीर !

भिखारिन के रग-रग से जवानी का सौंदर्य फूट रहा था। उसके यौवन की चमक ने, फटे पुराने वस्त्रों को भी चमका दिया था।

वह सर नीचा किये हुए गा रही था—उसकी आँखें जमीन की धूल देख रही थीं। आस-पास से आने-जाने वालों की उसे परवाह ही नहीं थी। किसी की सूरत देखना नहीं चाहती थी—वह जमीन को देखना चाहती थी, जिस पर खेल-कूद कर उसके जिस्म ने जवानी का चाँद पाया था।

वह गा रही थी—गाती जा रही थी—

दिल की दुनिया में बसाया था जिसे।
और आँखों में चुराया था जिसे॥

स्वर बन्द हो गया, मगर उसके नेत्र ऊपर न उठे। उसके आगे बिछी हुई मैली चादर भिक्षा के लिए करुण पुकार कर उठी।

एकाएक चादर पर सैकड़ों अशर्फियाँ बरस पड़ीं।

अशर्फियाँ !

सोने के चमचमाते सिक्के !

अगणित मुहरें ! कि भिखारिन की तमाम जिन्दगी चैन से कट जाय।

आज तक उसकी मैली चादर पर किसी दयालु ने एक दिरम से ज्यादा न फेंका था—

और आज !

आज अशर्फियाँ—सैकड़ों अशर्फियाँ, सोने की चमचमाती हुई मुहरें !

या खुदा !

कौन है ?

कौन है यह ?

कौन दाता है, जिसने आज उसकी करुण पुकार सुनी ?

आस्मान का फरिश्ता तो नहीं उतर आया जमीन पर ?

भिखारिन के नयन ऊपर उठने के लिए बेचैन हो उठे।

आज तक उसने अपने किसी भी दाता की ओर आँख उठाकर देखा न था, क्योंकि उसके गाँव वाले कहा करते थे कि उसकी आँखें मदभरी हैं, नशीली हैं – जिसकी ओर वह ताक देगी, वह मर-मरकर जीयेगा, जी-जीकर मरेगा।

मगर आज वह इस अनोखे दाता का दर्शन करेगी !

अपनी मदभरी, नशीली, जहरीली आँखों से उस फरिश्ते को देखेगी।

उथल-पुथल मच रहा था भिखारिन के हृदय में।

उसने धीरे से अपना झुका हुआ सर उठाया

मदभरे नयन सामने खड़ी हुई आकृति पर जा पड़े। एक क्षण के लिये।

चौंक पड़ी वह।

उसके सामने दीन-दुनियाँ के मालिक शाहेआलम के सगे भाई खड़े थे।

पहचान तो न सकी मगर दिल ने गवाही दे दी कि यही हैं शाहजादा रशीद, जिन्होंने उसपर तरस खाकर उसे अपने पास बुलवाया था और उसने गरूर में आकर उस फरिश्ते का अपमान किया था।

एक क्षण के लिए भिखारिन और शाहजादे के नेत्र आपस में मिले। तत्क्षण ही भिखारिन ने सर झुका लिया !

मगर उस क्षण में ही उसके मदभरे नयनों ने शाहजादे के दिल में हलाहल डाल दिया।

"तुम बहुत अच्छा गाती हो बानू !..."

भिखारिन के कानों में जैसे किसी ने शहद घोल दिया हो।

उफ ! कितने प्यारे शब्द हैं, कितना आकर्षक कहने का ढङ्ग है।

वह विभोर-सी हो उठी।

मगर दूसरी बार डरते-डरते जब उसने अपना सर उठाया तो उसने शाहजादा को सराय के दरवाजे पर जाते देखा।

चले गये ? चले गये वे ?

उसे लगा—जैसे किसी ने उसके सीने पर हथौड़ा मार दिया हो।

● ●

कच्चे तालाब के किनारे बसा हुआ एक गरीब गाँव।

टूटे-फूटे झोपड़े और उसके चारों ओर दीनता का नग्न प्रदर्शन !

ऊबड़-खाबड़ पगडण्डी पर से युवक चला जा रहा था। युवक की आकृति सुन्दर थी। बदन की बनावट आकर्षक थी—मगर पहनावे से दीनता टपक रही थी।

चलते-चलते एक छोटी-सी झोपड़ी के पास आकर रुक गया वह। झोपड़ी का दरवाजा खुला था। अन्दर से किसी बुढ्ढा के लगातार खाँसने की आवाज आ रही थी।

धीरे-धीरे युवक ने झोपड़ी के अन्दर पैर रखा।

अन्दर कुछ टूटे मिट्टी के बर्तन तथा फटे-पुराने वस्त्र इधर-उधर पड़े थे।

एक जर्जर चारपाई पर एक बुढ़िया बैठी खाँस रही थी, बुढ़िया अंधी थी। उम्र साठ के ऊपर रही होगी।

"चाची !..." पुकारा युवक ने।

बुढ़िया ने खाँसना बन्द कर ध्यानपूर्वक उसकी आवाज सुनी, पुनः बोली— "कौन ? नसीर है क्या ?"

"हाँ चाची ! मैं ही हूँ—" नसीर बोला—"आँख न रहते हुए तुम पहचान सकती हो ?"

"क्यों नहीं बेटा...आओ बैठो—" बुढ़िया ने कहा—"कहाँ से आ रहे हो तुम ?"

"तालाब में नहाने आया था...सोचा शम्सुल से मुलाकात करता चलूँ"—नसीर ने कहा—"मगर मालूम होता है, अभी तक वह नहीं आई !"

"नहीं बेटा !"—बुढ़िया बोली—"आती ही होगी....शहर दूर भी तो है। तब तक बैठो—आ ही रही होगी..."

"नहीं चाची ! अब तो चलूगा...अब्बा से सिर्फ आध घण्टे की छुट्टी लेकर आया हूँ..."

कहकर उठ खड़ा हुआ नसीर—

उसके चले जाने के बाद बुढ़िया अपने आप बड़बड़ाने लगी—

फूल-सी बच्ची मेरी, भीख माँगते-माँगते परेशान हो जाती होगी, मगर अमीरों को दिल ही नहीं होता। एक टुकड़ा गरीबों को देने में बार-बार मरते होंगे वे कुत्ते..."

"अम्मी !..."

दरवाजे पर से आवाज आई।

बुढ़िया के मुख पर प्रसन्नता खिल उठी। ज्योतिहीन नयन कोटर जैसे प्रकाश से भर-भर गये।

"मेरी बच्ची !..."

"उसके पोपले मुख से निकला।

"मैं आ गई अम्मी..."

आनेवाली ने कहा।

रूप की आकर्षक प्रतिमा थी वह। यौवन शरीर के पोर-पोर में व्याप्त हो रहा था। मदभरे नयन ऐसे थे, जैसे शराब के लबालब प्याले।

"आज तूने बड़ी देर कर दी शम्सुल!"—बुढ़िया ने कहा—"क्या एक दीनार देने में भी अमीरों को इतना दर्द होता है...!"

"नहीं अम्मी!" शम्सुल ने कहा—"आज तो मैं मोहरें लाई हूँ..."

"मोहरें?" चिल्ला पड़ी बुढ़िया।

"हाँ अम्मी!"—बोली शम्सुल—"मोहरें...एकदम सोने की मोहरें..."

"किसने दिया तुझे?"

"दे दिया किसी ने जिसके दिल में गरीबी की दर्दनाक हालत पर हमदर्दी थी...."

कहकर एक लम्बा साँस ली शम्सुल ने।

दीर्घ श्वांस ने पुष्ट वक्षस्थल को और भी पुष्ट कर दिया।

"कितनी मोहरें हैं शम्सुल?"

पूछा बुढ़िया ने।

"बहुत-सी हैं अम्मी! ढेर की ढेर!...शम्सुल बोली—"लो देखो, हाथ से छूओ..."

शम्सुल ने बुढ़िया के आगे सब अशर्फियाँ रख दीं, कुछ हाथ में भी दे दीं।

बुढ़िया उस अगम ऐश्वर्य का सम्पर्क पाकर सिहर उठी। उसने जीवन भर में इतनी भयानक चीज का स्पर्श न किया था।

"मुझे शाहजादा साहब ने दिया है अम्मी!—" शम्सुल ने कहा।

"शाहजादा ने?"—बुढ़िया आश्चर्य भरे स्वर में बोली—"क्या कहती है नादान छोकरी?...जिसका भाई मोहम्मद इतना जलील है, वह खुद फरिश्ता है क्या शम्सुल?"

"सचमुच वे फरिश्ते हैं अम्मी"—शम्सुल ने कहा—"उनका दिल निहायत हमदर्दी से भरा है।..."

"खुदा करे यह पाक फरिश्ता, दुनिया में हमारी भी उम्र लेकर जिन्दा रहे—" बुढ़िया आशीर्वाद देने लगी।

शम्सुल को मां आज न जाने क्यों बहुत प्रसन्नता थी।

इतने दिन से वह भीख माँगती रही थी, मगर आज जैसी खुशी उसे कभी नहीं हुई थी।

उसके कानों में शाहजादे के वे मधुर शब्द अब भी गूँज रहे थे—

"तुम बहुत अच्छा गाती हो बानू..."

इस वाक्य की एक-एक कड़ी, एक-एक गुनगुनाहट उसके हृदय में बैठकर उद्वेलित मंथन की सृष्टि कर रही थी।

शाहजादे के बर्ताव तथा आकर्षक आकृति से वह बहुत प्रभावित हुई थी।

उसके जीवन में आज पहला दिन था जब कि उसे अपना यौवन पीड़ामय प्रतीत हुआ था।

उसने शाहजादे की ओर भर आँख देखा भी न था—उस सौम्य आकृति की केवल एक झलक भर पा सकी थी वह!

फिर भी इतना वैकल्य?

फिर भी इतनी अचेतनता?

इतनी मादकता—इतनी मदहोशी!

शम्सुल को लगा जैसे उसकी जवानी, पर लगाकर शाहजादे के पास उड़ जाना चाहती हो—

मगर ऐसे उत्पीड़क भाव क्यों आ रहे हैं उसके हृदय में? अब तक तो वह लज्जाशील लड़की थी, जिसकी आँखों में इतनी ताकत भी न थी कि वह किसी की ओर आँख उठाकर देख सके।

लोग उसकी लज्जा को ही गरूर समझते थे।

मगर वह क्या थी?

यह वह खूब समझती थी।

भावों के प्रवाह में बही जा रही थी शम्सुल, कि बुढ़िया ने टोका।

"क्या सोचने लगी छोकरी !...खुश हो, आज तेरे नसीब जगे हैं... जाकर सरदार के यहाँ से एक मोहर भुना लो और खाने का अच्छा इन्तजाम कर ले...गरीबी में ही पली है तू, आज तो जरा अच्छा खाना खा ले..."

"यह तो मुझसे न होगा अम्मी..."

"लो ! सुनो इस छोकरी की !"—बुढ़िया बोली—"कहती है, यह इससे न होगा, जैसे अच्छा खाना, अच्छा पहनना इसकी किस्मत में है ही नहीं...जा, जल्दी जा ! अपने लिए सरदार से एक सलवार भी मोल ले लेना...उठ !"

"हमारे कबीले के लोग गरीबी में दिन काटें और मैं आराम करूँ"—शम्सुल ने कहा—"यह कहाँ का इन्साफ है अम्मी ?"

"बेवकूफ लड़की !"—बुढ़िया बोली—"दुनिया भर को राय देने का जिम्मा तूने ले रक्खा है ?...उठकर जा, जो मैं कहती हूँ, वैसा कर..."

शम्सुल उठी।

सब मोहरों को एक बर्तन में रख दिया और एक मोहर लेकर चली।

"जा रही है शम्सुल ?" पूछा बुढ़िया ने।

"हाँ अम्मी !"

"देख !...सरदार का बेटा नसीर आया था। तुझे पूछ रहा था... उससे मुलाकात कर लेना..."

शम्सुल ने जैसे सुना ही नहीं।

इस समय उसके हृदय-पट पर शाहजादे की सूरत अंकित थी। वह नसीर की बात सुनना नहीं चाहती थी।

उस सौम्य आकृति की एक झलक ने ही उसके दिल का कोना-कोना रोशन कर दिया था।

शम्सुल के पैर बोझिल हो रहे थे।

न जाने कैसी मादकता-सी छा गई थी उसपर।

कबीले का सरदार अपने बड़े से झोपड़े के सामने, मिट्टी के टीले पर बैठा था।

शम्सुल को देखकर बोला—

"कैसे आई शम्सुलनिहार ?.....बड़े दिन पर दिखलाई पड़ी ?"

"यों ही चली आई चाचाजान !"—शम्सुल बोली—"एक मुहर भुनानी थी..."

"मुहर ?.." चौंक पड़ा सरदार—"तेरे पास मुहर कहाँ से आई शम्सुल ?"

"एक अमीर ने दे दी थी चाचा !..."

"अमीर ने दे दी थी ? सोने के मुहर ?"—अविश्वास करता हुआ बोला सरदार—"ख्वाब की बातें करती है बेटी ?"

"ख्वाब की बात नहीं चाचाजान ! लो तुम भी देखो !..."

कहकर शम्सुल ने सरदार के हाथों पर चमचमाती हुई मुहर रख दी।

चौंक पड़ा सरदार, उस मुहर के वजन से।

"ठीक है"—बोला वह—"असली मोहर है शम्सुल !..."

सरदार ने मोहर भुनाकर बहुत से दीनार उसके हाथों पर रख दिये।

शम्सुल ने उन दीनारों से अच्छा-अच्छा खाना, जो वहाँ मिल सकता था, खरीदा।

और तब चल पड़ी अपने झोपड़ी की ओर।

"शम्सुल !..."

पीछे से किसी ने पुकारा।

शम्सुल ने घूमकर देखा, तो नसीर था।

नसीर पास आ गया। मुस्कुरा रहा था।

"आज बहुत सामान लिये जा रही हो शम्सुल !" बोला नसीर—"किसी महदर्द ने ज्यादा दे दिया क्या ?"

"दे या न दे, तुम्हें इससे क्या ?"—तुनक कर बोली शम्सुल—"तुम अपने रास्ते जाओ...मैं अपने..."

"आज तू बड़े तैश में दीख रही है"—नसीर बोला—"जरा गाँव वालों पर भी निगाहे-करम फेर कर !"

शम्सुल और नसीर, दोनों साथ-साथ चलने लगे।

"एक बात कहूँ शम्सुल !..."

धीरे से बोला नसीर।

"कहो न !"—वैसे ही स्वर में शम्सुल ने कहा—"तुम्हारी जबान को किसी ने लगाम दे दी है क्या ?..."

"तुम्हारी आँखें, खुदा कसम, बहुत गजब की हैं शम्सुल !"—हँसकर बोला नसीर—"किसी अमीर के घर चली जाओ, तो वह शरबते अनार पीना छोड़ दे और तुम्हारी आँखों की शराब पीता रहे..."

"यही कहना चाहते थे तुम ?—"

"और नहीं तो क्या ?"—नसीर ने कहा।

"अच्छा, अब तुम चले जाओ, वर्ना यहीं से अम्मी को पुकारती हूँ।..."

"अरे, यह क्या गजब करती हो शम्सुल ?..."

"अ...म्मी !" धीरे से पुकारा शम्सुल ने।

और डरकर भाग गया नसीर।

नसीर और शम्सुल बचपन के साथी हैं। दोनों खूब रूठते-बनते हैं। मगर दिल में किसी के मलाल नहीं रहता।

शम्सुल, नसीर से अपनी आँखों की प्रशंसा बहुत बार सुन चुकी है। और वह खुद भी जानती है शायद—कि उसके नयन मदभरे हैं—

ऐसा लगता है, जैसे शराब के सागर में आँखों की पुतलियाँ जड़ दी गई हों।

उस रात !

जब शम्सुल, चारपाई पर अपनी अन्धी माँ के पास लेटी, तो उसके समक्ष रात भर शाहजादे की आकृति नृत्य करती रही। और वह थोड़ी देर के लिये भी सो न सकी।

उसके हृदय में कुछ ग्लानि भी हुई। वह सोचने लगी—"शाहजादे साहब ने उसे बुलाया, मगर वह क्यों न गई। क्यों न गई वह ?"

उसने उस फरिश्ते का अपमान किया है।

सोचते-सोचते सिहर उठी शम्सुल।

क्या वे कभी उसे क्षमा करेंगे ?

● ●

शाम हो गई।

शमा जल उठी—

और परवाने, दीवाने बनकर दौड़ पड़े।

शमा जलती रही, सिसक-सिसक कर।—

और परवाने सिसकते रहे, जल-जलकर।

माया-मोह का बन्धन जैसे प्रेम का करुण इतिहास था।

कितना दारुण ?

कितना विदारक ?

कितना वेदनापूर्ण ?

निर्जीव वस्तु की वह जलन और निरीह जन्तुओं की वह तड़पन, हँसते हुए मानव के समक्ष कुछ भी नहीं।

फिर शमा जलती है—

और परवाने जलकर तड़पते हैं।

शमा पूछती है—"मैं तो विभीषिका में जल ही रही हूँ—तुम क्यों जलते हो ? क्यों अपनी तड़पन से, हमारी जलन बढ़ाते हो ?"

परवाने कहते हैं—"जलने वालों से हमें इश्क है, मुहब्बत है, इसलिये उनकी जलन खुद बरदाश्त करके तड़पते हैं हमलोग !"

"तुम्हारे तड़पने का मूल्य मेरे लिये चाहे बहुत हो"—शमा कहती है—"परन्तु देखने और हँसने वाले मानव के समक्ष तुम्हारे जीवन और जलन का मूल्य ही क्या ?"

"दुनिया वाले आदि काल से सच्ची मुहब्बत पर हँसते आये हैं प्यारी शमा !" परवाने कहते हैं—"उनका अर्थहीन हास्य, हमें अपने पथ से नहीं डिगा सकता।"

"सच्ची मुहब्बत इसे कहते हैं"—शमा, शाबासी के स्वर में कहती—तो परवाने बोल उठते—"और सच्ची मुहब्बत में जलन होती ही है प्यारी शमा।"

शाहजादे रशीद ने झाड़ में जलती हुई शमा को देखा और दीपशिखा में जलकर जमीन पर तड़पते हुए परवानों को देखा।

उसके मुख से एक दीर्घ निश्वास निकल गई।

वह व्यग्रतापूर्वक सराय के कमरे में टहलने लगा।

आज उसका हृदय अत्यन्त चञ्चल था—आँखों के समक्ष उस भिखारिन छोकरी के मदभरे नयन नाच रहे थे।

उसकी गरीबी, उसका दैन्य, प्रदर्शन जैसे साकार हो उठा था। शाहजादे के हृदय में।

आज दिन भर से उसे चैन नहीं था—शाम होने पर शमा और परवाना का जलना देखकर, वह और भी व्यथित हो उठा था।

शाहजादा भावुक था। मानव का करुण हृदय उसके पास था। उसके हास्य में दलितों के प्रति जैसे दारुण दुख भरा पड़ा था।

शाहजादा मुँह फेर कर खिड़की के पास आ रहा।

शमा और परवानों की भीषण आँखमिचौनी वह देख नहीं सकता था।

खिड़की के बाहर दूर तक ताड़ के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष खड़े थे, जिनका आलिङ्गन कर ठंडी हवा वहाँ तक आ रही थी।

परन्तु वायु का वह सिहरनकारी मृदुलता, शाहजादे रशीद के लिये, जैसे उष्ण कटिबन्ध की लू बन गई थी।

"यह क्या ?..." मुमताज ने भीतर प्रवेश करते ही आश्चर्यमिश्रित स्वर में कहा—"अभी तक हजूरे आलम ने खाना तनावल नहीं फरमाया ?..."

शाहजादे ने अपना सर उठाया। चेहरा शुष्क था, आँखों से वेदना झाँक रही थी।

एक बार उसने पलंग के पास रक्खे हुए उत्तम पकवानों पर दृष्टि डाली, फिर धीरे से बोला—

"खाने की इच्छा फजूल है बानू ! खाना मुझे अच्छा नहीं लग सकेगा आज !..."

"क्यों ?..." अदब के साथ बोली मुमताज—"मैं दोपहर से ही देख रही हूँ कि शाहजादे सलामत की तबियत खराब है। बेहतर हो कि हजूर बिस्तरे राहत पर आराम फरमायें..."

"नींद नहीं आयेगी बानू !..." शाहजादा आकर पलंग पर बैठ गया—"आँखों से नींद उड़ चुकी थी...."

"इसकी वजह आलमपनाह ?"

"वजह मुझे खुद नहीं मालूम मुमताज !"—शाहजादा बोला—"मेरे दिल में इतना तूफान कभी नहीं आया था..."

"मेरी इतनी हिम्मत नहीं कि मैं आलीजाह के रंज पर हमदर्दी जाहिर करूँ"—बोली मुमताज—"मगर मैंने गौर किया है कि हजूर जबसे उस बदनसीब छोकरी से मुलाकात करके लौटे हैं, तभी से हालत

अवतर है...हजूर के गम का सबब उस गरीब की आँखों का कहर तो नहीं है ?..."

"....."

चुप रहा शाहजादा। एक बार उसके समक्ष मिखारिन के मदभरे नयन पुनः नृत्य कर उठे।

"उसकी आँखों में शबाब है और जहर भी"—मुमताज पुनः बोली—"हो सकता है, शाहजादा सलामत पर उसकी नजर का शबाब सवार हो गया हो ?"

"क्या उसकी आँखें इतनी खतरनाक हैं बानू"—पूछा शाहजादे ने।

"जरूर आलमपनाह ! जरूर !—" मुमताज ने कहा—"उसने हजूर की ओर एक बार नजर उठाकर देखा था और मेरा ख्याल है, हजूर सलामत ने भी पुतलियों का बयान पढ़ा था..."

"तुम ठीक कहती हो मुमताज !" शाहजादा बोला—"मैंने उसकी आँखों में देखा था।"

"क्या देखा था शाहजादे आलम ?" पूछा मुमताज ने।

"जो कुछ देखा था, वह दिल पर नक्श हो चुका है बानू ! ताकत नहीं कि उसे जबान पर ला सकूँ..." कहा शाहजादे ने।

"शाहजादे आलम ने उन आँखों की दरिया में लहराते हुए शबाब को देखा होगा..."

"नहीं बानू !"—

"पुतलियों में तमन्ना का सागर देखा होगा !"—

"नहीं !"

"अधूरे अरमान और कुचली हुई हसरतों का तूफान देखा होगा।"—

"नहीं मुमताज ! तुम्हारा ख्याल गलत है..."

"तब क्या देखा हजूरे आलम ने उन मदभरी आँखों में—" पूछा मुमताज ने।

"तुम नहीं समझ सकती हो बानू ?"—

"शाहजादे सलामत मुझे समझाने की मेहरबानी फरमाएँ"—बोली मुमताज।

"मैंने उसकी आँखों में बेबसी के आँसू देखे !..."

"और ?"—

"गरीबी से सताये हुए शबाब की तड़पन देखी !"

"और ?"—

मुमताज के मुख पर आश्चर्य, असीम आश्चर्य का भाव था।

"दुनिया के जुल्म से तड़पते हुए एक मुर्झाए फूल का साग़र देखा !"

"और क्या देखा हजूरे आलम ने ?"—

चुप रहा शाहजादा।

चुप रही मुमताज।

दोनों के हृदय की बातें सोच रहे थे।

शाहजादा सोच रहा था—

काश, वह ! कीचड़ में पड़े हुए उस हीरे को उठाकर अपने ताज पर धारण कर सकता ?

मुमताज सोच रही थी—

शाहजादे की रहमदिली ने ही आज उसके हृदय में इस तूफान की सृष्टि की है।

"क्या सोचने लगी बानू तुम ?"

"शाहजादे आलम का गम मेरे लिए निहायत अफसोस का बायस है।"

"क्या तुम मेरी कुछ मदद कर सकती हो ?"—पूछा शाहजादे ने।

"हजूर की खिदमत में मेरी छोटी सी जान भी हाजिर है"—मुमताज बोली।

"शुक्रिया !"—शाहजादे ने कहा—"क्या तुम कल सुबह उस लड़की को मेरे पास बुला सकती हो ? मैं उसके सामने कुछ कहना चाहता हूँ..."

"मेरी इल्तजा है कि हजूरे आलम फिर इस बात की कोशिश न

करें"—मुमताज कहने लगी—"वह गुस्ताख छोकरी फिर आलमपनाह के साथ गुस्ताखी से पेश आवेगी···"

"मुझे इसकी परवाह नहीं···"

'इन्सान के जलते हुए दिल की, उसे थोड़ी भी परवाह नहीं शाहजादे आलम ! वह निहायत गुस्ताख है···वह आपकी बेइज्जती करने से बाज न आयेगी···"

"मुझे अपनी बेइज्जती मंजूर है बानू ?···" शाहजादे ने कहा।

'तो मैं कल सुबह कोशिश करके देखूँगी···" बोली मुमताज।

"बेहतर है !"—

कहकर शाहजादे ने गहरी साँस ली।

उसकी साँस के साथ, जैसे उसका जलता हुआ कलेजा छटक कर फर्श पर आ गिरा।

मुमताज काँप उठी—शाहजादे रशीद की करुणाजनक अवस्था देखकर।

"मेरी एक मिन्नत कबूल फरमायें आलीजाह !"—बोली मुमताज।

"कहो !..."

"हजूर के दिल पर मायूसी छा रही है"—रुककर बोली वह—"ऐसी हालत में शरबते अनार का एक जाम शाहजादा सलामत के लिए खुशी का पैगाम लायेगा...."

"क्या कह रही हो तुम बानू ?"—शाहजादा तमक कर बोला—"क्या तुम्हारे कहने का यह मतलब है कि मैं अपनी मायूसी को दूर करने के लिए एक ऐसी चीज को पीना मंजूर करूँ, जो मेरी निगाह में दुनिया की बेहद जलील चीज है और जिसे मेरी आँखें अबतक नफरत की नजर से देखती आ रही हैं।"

"हजूर माफ करें ?..."

"यह नहीं होगा मुमताज ?"...बोला शाहजादा—"दिल की बेचैनी और घबड़ाहट से ऊबकर, अपने दिली ख्यालात को मैं ठोकर नहीं लगा

सकता। तड़पन और जलन से डरकर दूर भागना बुजदिली है। जिन्दगी का मजा जलने में है, तड़पने में है..."

उसी समय झाड़ की मोमबत्ती से जला हुआ एक परवाना तड़पकर शाहजादे की गोद में गिर पड़ा—तड़पने लगा!

असीम प्यार से शाहजादे ने उसे अपनी हथेली पर उठा लिया।

बोला—"इधर देखो बानू!...इस शहीद परवाने को देखो। मुहब्बत इसने भी की है। तड़पन इसने भी झेली है। दर्द इसने भी बरदाश्त किया है। मुहब्बत की जलन में जल मरा है यह!..."

चुपचाप देखती रही मुमताज, उस निर्जीव परवाने की ओर।

"मगर क्या मरते वक्त इसके बेकस मुँह से दर्द की जरा-सी आवाज निकली?..." कहता रहा शाहजादा—"नहीं मुमताज! लैला के सच्चे मजनूँ, शीरीं के सच्चे फरहाद, जलते हैं, तड़पते हैं—मगर दर्द का उफ़ जबान पर नहीं लाते..."

"ठीक फरमाते हैं आलमपनाह!..." बोली मुमताज।

"रात काफी गुजर चुकी है...अब तुम आराम करो बानू!" शाहजादे ने कहा।

"यह कैसे हो सकता है आलीजाह?"—शिथिल स्वर में बोली मुमताज—"हजूर का दिल तड़पता रहे और आँखें दुनिया भर का दर्द लिये रात के अन्धेरे में भटकें...और मैं आराम करूँ!...यह गैरमुमकीन है हजूर सलामत!"

"तुम्हारे सीने में सच्ची औरत का दिल है बानू! तुम मेरी हमदर्द हो"—शाहजादा बोला—"तुम दरअसल औरत हो...वह औरत जो मर्द के नाकाबिल रहने पर माँ बनकर उसे काबिल बनाती है...वह औरत, जो मर्द की जवानी को बीबी बनकर मुहब्बत का सबक सिखाती है...वह औरत, जो मर्द की बेवकूफी को हमदर्द दोस्त बनकर दूर भगा देती है... वही औरत हो तुम!..."

"....."

चुपचाप सुन रही थी मुमताज और सोच रही थी कि बिना पिये ही शाहजादे को इतना नशा कहाँ से चढ़ आया ?

(वह क्या जान सकती थी कि जिसने मदभरे नयनों की मदिरा पी हो, उसके लिये शरबते अनार के एक जाम का मूल्य ही क्या है ?)

"तुम न जानती होगी बानू !"—कहने लगा शाहजादा—"मैं दुनिया का निहायत बदनसीब इन्सान हूँ। हमल में आते ही हजूर अब्बाजान की मौत हो गई और सरजमीन पर आते ही मेरी माँ भी चल बसीं। दुनिया में जिस औरत से मैंने माँ का प्यार पाया, वे हैं मल्कये आलम !... मेरी मामीजान !...दुनिया की पहली औरत हैं वे, जिसे मेरी आँखों ने, मेरे दिल ने, मेरे जिस्म ने, मेरी जान ने, प्यार की नजर से देखा है... वही सच्चे माने में मेरी माँ है। दुनिया भर की तकलीफें झेलकर उन्होंने मेरे बदनसीब जिस्म को इतना बड़ा बनाया है...."

चुप हो रहा शाहजादा।

मल्कये आलम की याद ने उसके हृदय में पवित्र मातृस्नेह की प्रबल धारा उमड़ा दी।

वह बड़ी देर तक चुपचाप बैठा रहा।

"क्या हजूरे आलम शतरंज खेलना पसन्द करेंगे ?"—पूछा मुमताज ने।

"शतरंज ?"—बोला शाहजादा—"कोई हर्ज नहीं। थोड़ी देर तक शतरंज से दिल बहलाना बेहतर होगा...मालूम होता है कि तुम बहुत अच्छा खेलती हो ?"

"यूँही, आप लोगों की मिहरबानी से थोड़ी-बहुत चालें जानती हूँ आलमपनाह !...मगर हजूर की नींद में तो कोई खलल नहीं पड़ेगी ? रात ज्यादा गुजर चुकी है !..."

"कोई मुजायका नहीं"—कहा शाहजादे ने—"जब नींद ने आँखों से दुश्मनी ही कर ली है, तो उसकी मिहरबानी का इन्तजार करना ठीक नहीं...दराज में मुहरें रखी हैं, तुम निकाल लाओ..."

धीरे से उठी मुमताज। शतरंज लाकर पलङ्ग पर रख दिया और स्वयं पुनः फर्श पर बैठ गई।

मूल्यवान मखमल के टुकड़े पर सोनेके बारीक तारों द्वारा बिसात बनी हुई थी। चारों ओर मोतियों की झालर लटक रही थी।

नीलम और पुखराज के टुकड़े तराशकर मोहरें बनाई गई थीं।

खेल शुरू हुआ, तो कुछ चालों के बाद ही मुमजात ने शाहजादे का वजीर मार लिया।

लगता था जैसे शाहजादा रशीद का मन शतरंज में न लग रहा हो। खेलते-खेलते मखमली तकिया लगाकर वह न जाने क्या सोचने लगता था।

"शह !..." मुमताज ने धीरे से कहा।

परन्तु शाहजादा ने उसपर कोई ध्यान न दिया।

बोला—"बानू !..."

"हुक्म !..." नम्रतापूर्ण शब्दों में उत्तर दिया मुमताज ने।

"मैं सोचता हूँ कि आग में जलने के बजाय, दूर भागकर अपना बचाव करना बेहतर होगा"—बोला शाहजादा।

"हजूरे आलम का मतलब क्या है ?"—

"तुम ख्वाजासरा के सरदार से जाकर कह दो कि सबेरे, खूब तड़के, हमारा काफिला कूच करने के लिए बिल्कुल तैयार हो जाय। मैं रात भर जागकर सुबह यहाँ से रवाना हो जाना चाहता हूँ..."

"मगर इस बेवक्त की रवानगी का सबब ?—"पूछा मुमताज बे।

"यहाँ पर मुझे अपने चारों ओर आग ही आग दिखाई पड़ रही है, मुमताज ! और मैं उसमें तिनके सा जला जा रहा हूँ....मुझे मामूम होता है कि यह आग मेरे बरदाश्त से बाहर है..." बोला शाहजादा।

"मगर थोड़ी देर पहले आलमपनाह ने फरमाया था कि जिन्दगी का लुत्फ जलने में है..." मुमताज ने कहा।

"जलने में जरूर लुत्फ है मुमताज !"—बोला शाहजादा—"मगर अब यह लुत्फ उठाने की ताकत मुझमें नहीं रही। मेरे हक में इस लुत्फ से दूर रहना ही ठीक होगा..."

"हजूर आलम के दिल के साथ-साथ, दिमाग भी बेकाबू हो उठा है..."

"ठीक कहती हो तुम—!" शाहजादे ने कहा—"इतनी जलन, इतना तूफान, इतनी तड़पन, मेरी जिन्दगी में कभी नहीं आई थी... तुम जाकर खाजासरा को मेरा हुक्म सुना दो..."

मुमताज बाहर चली गई।

शाहजादे के विचार-परिवर्तन पर उसे घोर आश्चर्य हो रहा था।

जरा-सी बात पर शाहजादे के दिल पर इतना सदमा पहुँचना, उसके अनुभव के बाहर की बात थी।

अबतक उसने बहुत से अमीर उमराव देखे थे और सभी ने मुमताज के हुस्न की तारीफ की थी, परन्तु उसने कभी, किसी के लिए, किसी को सच्ची मुहब्बत से तड़पते न देखा था।

शाहजादे की बेचैनी और तड़पन उसके लिए नवीन अनुभव की वस्तु थी।

शाहजादा उसकी नजरों में फरिश्ता था।

और जब वह वापस लौटी, तो उसका चेहरा जर्द था।

उस फरिश्ते के चले जाने का विचार उसके लिए अत्यन्त दुखदाई था। वह उस आश्चर्यजनक व्यक्ति को अपनी आँखों से दूर नहीं होने देना चाहती थी।

"कह दिया ?—"

"हाँ ! कुछ रात रहते ही काफिला तैयार हो जायगा"—मुमताज ने कहा।

"तुम एक-ब-एक इतनी रंजीदा क्यों हो उठी हो बानू ?—" पूछा

शाहजादे ने—"तुम्हारी आँखें आँसू से भर आई हैं, हुस्न जर्द हो उठा है...इसका सबब ?"

"हजूरे आलम की जुदाई का ख्याल मेरे लिए निहायत अफसोस और तकलीफदेह है.. शायद अब जिन्दगी में ऐसी दिलचस्प रातें न गुजार सकूं—"

"मैं मजबूर हूँ मुमताज—" शाहजादा बोला—"सुबह होने से पहले मैं यहाँ से दूर, हो जाना चाहता हूँ...ताकि उस आग से, उस जलन से, उस छोकरी से फिर मुलाकात न हो..."

"ताज्जुब होता है, हजूरे आलम के जबान से बेबसी और मजबूरी की बात सुनकर"—कहने लगी मुमताज—"जिसके कदम मुबारक पर दीनों-दुनियाँ की दौलत लोटती-फिरती है वह भी मजबूर है, यह बात सुनने में बड़ी हैरत अंगेज लगती है, आलीजाह !..."

"दुनियाँ में हर इन्सान के रास्ते में मजबूरियाँ हैं बानू ! चाहे वह इन्सान बड़ा हो या छोटा..."

तकिये पर सर रखकर शाहजादा चुप हो रहा। आखें बन्दकर लीं और कुछ सोचने लगा।

मुमताज चुपचाप बैठी रही।

सुबह होने में दो घण्टे बाकी रह गये थे।

खिड़की की राह ठंढी हवा का एक झोंका आया और मुमताज के शरीर में सिहरन-सी भर उठी।

उठकर खिड़की बन्द कर दी उसने।

शाहजादे की साँस धीरे-धीरे धीमी और गहरी होती जा रही थी। उनींदी पलकों पर शायद नींद सवार हो रही थी। मुमताज ने धीरे से लिहाफ उठाकर शाहजादे के बदन पर डाल दिया और फर्श पर लेट कर स्वयं भी नींद का आवाहन करने लगी।

छातियों का उठना-बैठना धीरे-धीरे गम्भीर हो उठा। शरीर पर निद्रा की अवशता छा गई।

सूने कमरे में दो जवानियाँ, दो जगह पड़ी हुई तड़फड़ा रही थीं और आँखों की नींद उन्हें दुलार-दुलार कर सुला रही थी।

● ●

दिन चढ़ आया था।

रात भर अन्धकार की गोद में आराम करने के पश्चात् सूर्य का गोला नवीन उत्साह के साथ पूर्वाकाश पर चमकने लगा था।

शहर जोमन कोलाहलपूर्ण होता जा रहा था।

ऊबड़-खाबड़ सड़क पर एक लम्बा काफिला खड़ा था, शाहजादे रशीद की प्रतीक्षा करते हुए।

मगर शाहशादा अब तक नींद में मग्न था—मुमताज भी रात भर जागने के कारण सो रही थी।

ख्वाजासराओं का सरदार बार-बार कमरे के दरवाजे तक आकर लौट जाता था। उसे महान आश्चर्य था कि कहाँ तो शाहजादा साहब रात रहते ही प्रस्थान करने वाले थे और कहाँ अब तक सोये ही हैं।

सोच रहा था वह—इन बड़े आदमियों के ख़ब्त की थाह पाना भी मुश्किल है।

दरवाजे पर धीरे से कुछ आहट हुई—

और मुमताज के आँखों की नींद डरकर भाग खड़ी हुई। उसके अलसित अङ्गों ने एक घातक अँगड़ाई ली और मुकुलित नयन लिए हुए वह उठ बैठी।

उसके नेत्रों में कुछ बेहोशी थी और कुछ तन्द्रा—

कुछ नींद थी और कुछ जागृति का भाव—

कुछ आलस्य था और कुछ चैतन्यता।

धीरे-धीरे उसने अपनी भंगिमा ठीक की। अस्त-व्यस्त कपड़ों को यथास्थान किया और उठकर शाहजादे के शिथिल अङ्गों पर दृष्टि डाली।

शाहजादा पड़ा था—चुपचाप! सब कुछ भूलकर सो रहा था वह।

होठों पर एक अव्यक्त मुस्कान थी—शायद स्वप्न में 'मदभरे-नयनों' वाली से वार्तालाप कर रहा था वह।

रेशमी परदा उठाकर वह बाहर आई तो ख्वाजासरा पर उसकी दृष्टि पड़ी, जो यात्रा की पोशाक में एक ओर सर झुकाये खड़ा था।

मुमताज को देखकर वह पास आया।

बोला—"शाहजादये आलम जग गये?"

"अभी नहीं—" बोली मुमताज—"वे रात भर सोये नहीं। सुबह को जरा सी नींद आई है। उन्हें इस वक्त आराम की सख्त-जरूरत है..."

"मगर उनके हुक्म के मुताबिक काफिला सफर के लिये एकदम तैयार है—" बोला सरदार।

"मुझे यकीन है कि शाहजादा सलामत आज रवाना न हो सकेंगे—"

"फिर भी जब तक वे उठ नहीं जाते, तब तक हमें उनके हुक्म की पाबन्दी करनी ही पड़ेगी—"

कहकर ख्वाजसरा सराय के दरवाजे पर चला गया।

मुमताज भी अपने निजी कमरे में चली गई।

दो घण्टे पश्चात् वह नवीन आकर्षक परिधान धारण किये हुए लौटी।

शाहजादा उस समय भी निद्रामग्न था।

सूर्य का तापमान बढ़ता जा रहा था और रेगिस्तानी हवा धीरे-धीरे गर्मी पकड़ रही थी।

मुमताज ने दिलरुबा उठा लिया और धीरे से उसके तारों को छेड़ा।

मधुर ध्वनि गुञ्जरित होने लगी। शाहजादे के अवश शरीर में कम्पन हुआ और जागृति के लक्षण स्पष्ट हो उठे।

नींद खुली शाहजादे की, तो उसकी दृष्टि बाहर की चमचमाती धूप पर जा पड़ी।

"बहुत देर तक सोया बानू ?—" बोला वह।

"अभी हजूरे आलम और सोते, मगर इस पाजी दिलरुबे ने आली-जाह के आराम में खलल पहुँचाया..." हँसकर बोली मुमताज।

"बेजान दिलरुबे का क्या कसूर ?..." कहा शाहजादे ने—"सारा कसूर तो तुम्हारी उँगलियों का है, जिन्होंने बेचारे से छेड़खानी की, तो वह दर्द से चीख पड़ा..."

"बेशक आलमपनाह ! कसूर मेरा ही है और मैं सजा पाने के लिए बेचैन हूँ..."

"सजा देना मेरा काम नहीं मुमताज !"—बोला शाहजादा—"एक इन्सान की इतनी हिम्मत कहाँ कि वह दूसरे इन्सान को सजा दे सके... सजा सिर्फ खुदा दे सकता है..."

"हजूरे आलम का काफिला बिल्कुल तैयार खड़ा है..." बात बदल कर बोली मुमताज।

"काफिला ?"—चौंककर शाहजादे ने कहा—"ओह ! मैं तो भूल ही गया था। एक खुशनुमा ख्वाब देख रहा था, जिसकी वजह से नींद ऐन वक्त पर खुल न सकी..."

"अब तो हवा काफी गर्म हो चुकी है...हजूरे आलम का इस वक्त रवाना होना ठीक नहीं..." मुमताज बोली।

एकाएक न जाने क्यों शाहजादे का मुख आत्यधिक गंभीर और शोकातुर हो उठा।

बोला—"नहीं मुमताज ! मैं जाऊँगा ही...यहाँ की गर्मी से हवा की गर्मी बहुत कम है...मुझे कोई तकलीफ न होगी..."

"मगर वह छोकरी तो आ गई है..."

"छोकरी ? कौन छोकरी मुमताज ?...क्या वही तो नहीं, जिसने अपनी आँखों का शर्बत पिलाकर मुझे बेचैन बना रखा है ?—"

"वही हजूरे आलम !...वही !—" बोली मुमताज—"मुझे यकीन है कि जिस बला से डरकर आलमपनाह दूर चले जाना चाहते हैं, शायद वह बला आलीजाह को जाने न दे !"

"क्यों ?..."

इस 'क्यों' में शाहजादे के स्वर से जो करुणा टपक रही थी वह मुमताज से छिपी न रही।

"वह शाहजादा सलामत से मिलने को बेचैन है..."

बोली वह।

"मुझसे मिलने को ?—" चौंक उठा शाहजादा—"वह मुझसे मिलना चाहती है ?...क्यों ?...आखिर क्यों ?..."

"यह तो वही जाने हजूर सलामत।—"

"क्या वह मेरे दिल में, जिगर में नई बेचैनी, नई जलन, नई तड़पन भरने आई है ?—" हताश स्वर से शाहजादे ने कहा—"वह है कहाँ बानू ?"—

"वह सुबह से ही सराय के भीतरी बरामदे में बैठी हुई हजूरे आलम के जागने का इन्तजार कर रही है..."

"तुमने उसे देखा है ?"

"सिर्फ देखा ही नहीं—उससे बातें भी कर चुकी हूँ..." बोली मुमताज।

"क्या कह रही थी वह तुमसे ?"—

'मुझसे मिन्नतें कर रही थी कि मैं उसे आलमपनाह के सामने हाजिर करूँ...वह आपसे कुछ बातें अर्ज करना चाहती है..."

"यह गैरमुमकिन है मुमताज ?..." बेचैनी भरे स्वर में बोला शाहजादा—"मुझमें इतनी हिम्मत नहीं कि उसकी आँखों के आगे

अपना दिल हलाल होने के लिये छोड़ दूँ...मैं उससे मुलाकात नहीं कर सकता? नहीं कर सकता..."

"क्या आलमपनाह का यह आखिरी फैसला है ?—"

"बिलकुल आखिरी !—" बोला शाहजादा।

मुमताज चुप हो रही,

"बानू !" शाहजादे ने कहा—"तुम ख्वाजा सरदार से कह दो कि आज मैं सफर के नाकाबिल हूँ, काफिला कल रवाना होगा..."

"जो हुक्म !"

"और उस छोकरी से कह दो कि मैं अपनी जिन्दगी में उसे दूसरी बार नहीं देखना चाहता—" बोला शाहजादा—"वह मुझसे मिलने का इरादा छोड़कर अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी बसर करे...मैंने कल उसे काफी मोहरें दी थीं...उससे वह अपनी जिन्दगी आरामदेह बना सकती है..."

"....."

कुछ न बोलकर, चुपचाप मुमताज कमरे से बाहर हो गई।

शाहजादा बेचैन हो उठा था—खिड़की के पास खड़े होकर चमचमाती धूप में आँखें गड़ा दीं उसने।

मुमताज थोड़ी देर में लौट आई।

"काफिला को आराम करने का हुक्म सुना दिया ?—" शाहजादे ने पूछा।

"हाँ आलमपनाह !..."

"और वह छोकरी गई या नहीं ?"

"नहीं आलीजाह !" —बोली मुमताज।

"नहीं गई ?—" आश्चर्य एवं करुणा भरे स्वर में शाहजादे ने कहा—"क्या कहा उसने...?"

"मैंने हजूर सलामत का हुक्म उसे सुना दिया..." मुमताज कहने लगी—"सुनते ही उसका चेहरा पीला पड़ गया। आँखों से कई बूँद आँसू जमीन पर टपक पड़े..."

"बेवकूफ लड़की !—" बोला शाहजादा—"बेशकीमती मोतियों को जमीन पर गिरा देने से क्या मिला उसे ?—"

"रोने लगी वह आलमपनाह !—" कहा मुमताज ने—"जब मैंने उससे जाने को कहा तो वह मेरा पैर पकड़ कर रोने लगी...वह बड़ी जिद्दी छोकरी है हजूर सलामत ! उसने कहा है कि जब तक वह शाहजादे आलम से माफी न माँग लेगी, वह सारी जिन्दगी वहीं इन्तजार में बैठे-बैठे काट देगी—न खायेगी, न पीयेगी..."

"ऐसा कहा उसने ?..."

"हाँ आलमपनाह !...उस गरीब को यहाँ एक बार आने की इजाजत फरमाएँ...." मुमताज बोली।

कुछ बोला नहीं शाहजादा। बड़ी देर तक चुप रहा।

फिर बोला—"नहीं, यह नहीं हो सकता...यह मुलाकात मेरे लिए मौत से भी ज्यादा तकलीफदेह होगी, मैं मर रहा हूँ, उसे भी मरने दो—मैं जल रहा हूँ, उसे भी जलने दो मुमताज..."

शाहजादा पलङ्ग पर आकर लेट गया। गहरी साँस लेने लगा।

"क्या हजूरे आलम के लिए नाश्ता लाऊँ ?..." पूछा मुमताज ने।

"नहीं !—" छोटा-सा उत्तर दिया शाहजादे ने।

ज्यों-ज्यों दिन बढ़ता गया, शाहजादे की बेचैनी भी बढ़ती गई।

उसने नाश्ता नहीं किया, न स्नान किया। चुपचाप पलङ्ग पर पड़ा हुआ करवटें बदलता रहा।

अपनी इस बेचैनी का कारण वह स्वयं भी नहीं जानता था।

उधर शम्सुल उसकी प्रतीक्षा में सराय के आँगन में बैठी थी। सोच रही थी वह कि जिस फरिश्ते ने कल उसकी गरीबी पर तरस खाकर ढेर-सी मोहरें दे दी थीं—क्या उसका दिल न पिघलेगा ? क्या आज वह उससे मुलाकात न करेगा ?

आज खूब तड़के ही शम्सुल यह आशा लेकर सराय में आई थी कि

वह शाहजादे से भेंट कर, कल वाले अपने अपराध के लिए क्षमा माँगेगी।

न जाने क्यों उसका हृदय शाहजादे से क्षमा माँगने को अत्यन्त उत्सुक था।

मगर मुमताज ने शम्सुज को, शाहजादे का जो सन्देश सुनाया कि उसका हृदय टुकड़े-टुकड़े हो गया। कलेजा, जैसे किसी ने मुट्ठी में पकड़ कर तोड़-मरोड़ दिया।

फिर भी वह अपने हठ पर दृढ़ रही। अपने को अधिकाधिक कष्ट देने के लिए वह बरामदे से निकल कर, तपती धूप में आ बैठी।

"वह चली गई मुमताज ?..." पूछा शाहजादे ने।

"नहीं, हजूरे आलम !—" बोली मुमताज—"वह अब साये से निकलकर, आफताब के नीचे आ बैठी..."

"अपनी जान देना चाहती है वह क्या मुमताज ?—"

तड़प उठा शाहजादा।

"हजूर उसकी बात मान लें..." दबी जबान से बोली मुमताज।

"नहीं..."

कहकर शाहजादे ने अपना हाथ मला।

"हजूरे आलम खाना तनावल फरमाएँगे ?—" पूछा मुमताज ने।

"नहीं !..."

दोपहर हो गई थी, मगर शाहजादे ने खाना न स्वीकार किया।

धीरे-धीरे दिन ढलने लगा।

मुमताज आकर बोली—

"आफताब का शबाब गरूब होने जा रहा है आलमपनाह ! अब तक आपने कुछ भी न खाया..."

"वह अभी तक बैठी ही है मुमताज ?—"

"हाँ जहाँपनाह !—" बोली वह—"उसने भी अब तक कुछ खाया पिया नहीं...धूप में अपना सारा जिस्म सुखा डाला है..."

शाहजादा उठकर कमरे में टहलने लगा।

उसी समय चिर-परिचित स्वर झंकृत हो उठा—

दिल की दुनिया में बसाया था जिसे।
कान्त आँखों में चुराया था जिसे॥
जिसकी यादों से सजाया था जिगर।
जिसकी उल्फत में गुजारी शब मगर—

"उफ !..."

शाहजादे ने अपना माथा पकड़ लिया। शम्सुन्न का वह स्वर उसके अन्तराल में प्रवेश कर गया और वहाँ एक अगम वैकल्य की सृष्टि कर दी उसने।

"मुमताज !—" बेचैनी से पुकारा शाहजादे ने।

"इरशाद हजूरे आलम ?—"

"इस गाने को बन्द करा दो..." कहा शाहजादे ने।

"क्या आलमपनाह इस गरीब से उसकी आवाज भी छीन लेना चाहते हैं ?...इस बेहरमी से वह जिन्दा न रह सकेगी आलीजाह ! मैं औरत हूँ और एक औरत का दिल अच्छी तरह पहचान सकती हूँ..."

"क्या तुमने उसका दिल पहचाना है मुमताज ?—" शाहजादे ने प्रश्न किया।

"हाँ शाहजादे आलम !—" बोली मुमताज—"पहचान लिया है उसका दिल..."

"क्या है उसके दिल में ?—"

"आपके दिल से भी बढ़कर तूफान है उसके दिल में...जितनी जलन और बेकरारी उसे बरदाश्त करनी पड़ी है—फिर भी वह चुप है, उसके आँसू चुप हैं, उसका दिल चुप है..."

"....." सुन रहा था शाहजादा।

"वह समुन्दर की तरह गहरी है आलीजाह ! छिछले पानी की तरह उसमें हलचल नहीं..."

"ठीक कहती हो मुमताज तुम !—" शाहजादे ने कहा।

गाने का स्वर हवा पर तैरता हुआ, अब तक आ रहा था—

अब वही बन दर्द दिल पर छा गये।
अश्क पलकों पर व बनकर आ गये॥
उनकी यादें इक कहानी हो गई।
बेवफाई की निशानी हो गई॥

"मुमताज !..." तेजी से बोला शाहजादा।

"हुक्म आलीजाह ?—"

"बुलाओ उसे—" उसने कहा—"मैं उससे मुलाकात करूँगा... उसके हठ के आगे आज मुझे झुकना पड़ा। जिन्दगी के दौरान में मेरी यह पहली हार है..."

मुमताज के मुख पर एक हलकी मुस्कान खिल उठी—

उस मुस्कान में आधा हर्ष था और आधी करुणा।

वह शम्सुल को बुलाने चली गई।

"आई वह ?—"पूछा उसने मुमताज को अकेली लौटा देखकर।

"दरवाजे पर मौजूद है आलमपनाह !..."

"अन्दर बुलाओ..."

रेशमी पर्दा उठा और एक दुबली-पतली देह, गदराई जवानी का भार लादे, अन्दर आई। झुककर कोर्निश की उसने।

मुमताज बाहर चली गई। दो प्रेमियों के बीच अब उसका काम ही क्या रह गया था।

"आओ बानू !—"गम्भीर स्वर में बोला शाहजादा—"मैंने तुम्हें बेहद तकलीफ दी, इसके लिये...."

शाहजादे की नजर शम्सुल के शरीर पर पड़ी। निरंकुश धूप ने गौरांग देह को झुलस दिया था।

आँखें नीची किये हुए निस्तब्ध खड़ी थी वह।

"आओ बैठो !..." पुनः कहा शाहजादे ने।

परन्तु वह चुप।

क्या कहे, क्या न कहे ?

वह कुछ समझ न सकी। शाहजादे का स्वर उसके हृदय में मदिरा भर रहा था।

"मैंने तुम्हें तकलीफ जो दी है, उसमें तुम रूठ गई हो बानू ?—"

शाहजादे ने उठकर शम्सुल का हाथ पकड़ लिया, बोला—"बैठो..."

शम्सुल को लगा, जैसे उसके समग्र शरीर में एक दाहक बिजली दौड़ गई हो।

"कुछ बोलो बानू !—" कहा शाहशादे ने—"तुम्हारी आवाज मेरे लिए मरहम का काम करेगी..."

धीरे से मुँह खोला शम्सुल ने—

"मैं आलमपनाह से माफी माँगने आई हूँ .."

"माफी ?...किस कसूर की माफी बानू ?"

"कल आलीजाह ने मुझे याद किया और मैंने न आकर गुस्ताखी की, उसी की माफी हजूरे आलम !..."

"वह क्या इतना बड़ा कसूर था बानू ?...हर इन्सान मेरे सामने, अपने रास्ते पर चलने के लिए आजाद है..."

"शाहजादे आलम का दिल रहम से भरा है...माफी माँगना मेरा फर्ज है आलीजाह !..." बोली सम्सुल।

"क्या मेरे माफी की इतनी कीमत है ?—" पूछा शाहजादा ने।

"इस बात को दुनिया में सबसे ज्यादा मेरा दिल जानता है हजूर !..."

"क्या मेरे दिल की तरह तुम्हारा भी दिल बेकाबू हो गया है बानू ?..." पूछा शाहजादे ने।

तो मधुर सिहरन-सी भर उठी शम्सुल के अवयव में, उस मादक प्रश्न से।

"दिल कभी किसी के काबू में नहीं रहता आलमपनाह!..." न जाने कैसे कह दिया शम्सुल ने।

दोनों ने अनजाने में अपनी-अपनी व्यथा एक दूसरे पर प्रकट कर दी।

बातचीत के सिलसिले में दोनों आत्म-विस्मृत हो उठे। शाहजादा की चिन्तातुर अवस्था कुछ सुधरी।

"तुम्हारा नाम बानू?"

"शम्सुल निहार..."

कहते-कहते शम्सुल के मदभरे-नयन ऊपर उठे और शाहजादे की पुतलियों से जा टकराये।

शाहजादा एक टक उसी की ओर देख रहा था। उन नयनों की मदिरा ने उसे बेहोश-सा बना दिया।

"तुम्हारा नाम, तुम्हारी आँखों की तरह ही प्यारा है बानू!" कहा शाहजादे ने।

"जिन आँखों की इतनी तारीफ आलमपनाह कर रहे हैं, उन आँखों ने आज रातभर मुझे बेहद तकलीफ दी है..." शम्सुल ने कहा।

धीरे-धीरे दोनों की झिझक दूर होती जा रही थी।

"क्या तकलीफ दी शम्सुल?—"

"रात भर ये आँखें, नींद की गोद में सोई नहीं हजूर आलम!..."

"शायद किसी की याद ने आंखों की नींद छीन ली थी?—" मुस्कुराकर शाहजादा बोला।

"बजा फरमाते हैं हजूर!—" शम्सुल भी धीरे से मुस्कुरा पड़ी, मगर नजरें नीची ही रहीं—"हजूर के चेहरे का आफताब मेरे दिल में चमक रहा था।"

शम्सुल की सांकेतिक भाषा शाहजादा भली प्रकार समझता था।

बोला—"बानू !...मेरी ओर देखो !"

"....."

शम्सुल ने नजरें उठाईं। चार नेत्र बड़ी देर तक एक में समाये रहे।

किसी की पलकें नीचे न गिरीं।

नेत्रों द्वारा हृदय की सीमा नाप रहे थे वे दोनों।

एकाएक आनन्दातिरेक से शम्सुल की आँखें ढँप गयीं, फिर भी मुँह ऊँचा उठा रहा।

फूल खिल रहा था, शम्सुल के मुख पर। गरीबी की बदली से चाँद झाँक रहा था।

"बानू !" बोला शाहजादा—"तुमने मेरे दिल में जो मदहोशी का तूफान उठा दिया है, वह मेरे लिए नया तजुर्बा..."

"दिल में एकतरफा तूफान नहीं उठता आलीजाह !—" शम्सुल ने अत्यन्त मादक स्वर में कहा—"यह वह शय है, जो दोनों तरफ तूफान उठाता है। और दोनों तरफ आग लगाती है..."

किस सुन्दर ढङ्ग से उस सौंदर्य की प्रतिमा ने अपनी व्यथा प्रकट की थी ?

"तुम्हारी आँखें, तुम्हारा हुस्न, कभी न भूल सकूँगा शम्सुल !... चाहता हूँ कि तुम्हारी याद हमेशा मेरे दिल में..." कहा शाहजादे ने।

"जब तक आँखें और हुस्न सामने न रहें, याददाश्त काम नहीं कर सकेगी आलमपनाह !..."

"तुम्हारा मतलब यह है कि मैं तुम्हारी आँखों को और तुम्हारे हुस्न को हमेशा अपने सामने रखूँ ?" शाहजादा बोला—"दिल भी यही चाहता है बानू ! तुम मुझसे दूर नहीं जा सकोगी..."

"दूर जाना भी नहीं चाहती आलमपनाह !...आपने मेरे रग-रग में जो जलन भर दी है, वह हजूर के पास रहने से ही दूर होगी...हजूर की बांदी बनने की खुशी होगी मुझे..."

"बाँदी ?—" आश्चर्य भरे स्वर में बोला शाहजादा—"क्या कहती

हो शम्सुल ?...तुम मेरे मुर्झाये बाग की खुशबू हो...मेरे दिल में, मेरी आँखों में, तुम्हारी जगह है बानू...!"

"इजत न दें आका ! मैं गरीब हूँ, इतना बड़ा खजाना कैसे सम्हाल सकूँगी ?"

"कीचड़ में रहने पर भी हीरा, हीरा ही है शम्सुल ! जवाहरात की जगह पैरों के पास नहीं, सर और कलेजे पर होती है —" शाहजादे ने कहा।

"यह खुशी मेरे लिये बरदाश्त के बाहर होगी शाहजादये—आलम !..."

"शम्सुल !"

धीरे से उठकर शाहजादे ने शम्सुल का हाथ पकड़ लिया ! देर तक पकड़े रहा।

दोनों के नेत्र बड़ी देर तक आँख मिचौनी करते रहे।

"तुम अपने को इस तरह रजील क्यों समझती हो बानू —" बोला शाहजादा।

शाहजादे ने अनुभव किया कि शम्सुल का हाथ काँप रहा है, शायद प्रसन्नता के आवेग से और शाहजादे की चैतन्यता जैसे दूर भाग गई थी, शम्सुल के स्पर्श से।

"शाहजादये आलम कब रवाना होंगे ?—" पूछा शम्सुल ने।

"अभी कुछ दिनों तक नहीं—" उत्तर मिला—"दिल को राहत मिल गई है। मैं इसे जल्द खोना नहीं चाहता...तुम मेरे पास रोज सुबह आ जाया करना।"

"तो फिर मुझे इजाजत दें....कल फिर हजूर के सामने हाजिर हूँगी..."

चली गई शम्सुल तो शाहजादे को ऐसा लगा, जैसे उसका दिल भी उसके साथ चला गया हो। मगर अब वह प्रसन्न था।

● ●

तातार राज्य की राजधानी आधी रात की नीरवता में निश्चल पड़ी थी। केवल शाही पहरेदार ही जाग रहे थे।

शहर के आखिरी छोर पर टूटे-फूटे मकानों के ध्वंसावशेष का सिलसिला बहुत दूर तक फैला हुआ था।

लगता था जैसे वहाँ निशाचरों का वास हो।

कभी-कभी न जाने कैसी एक डरावनी आवाज उन खँड़हरों से निकल कर दूर-दूर तक फैल जाती थी और नगर निवासी उस आवाज को 'जिनों' की आवाज समझकर और भी भयभीत हो उठते थे। यों भी वह खँड़हर उनके लिये भय की वस्तु थी।

इसी भयावह खँड़हर के मध्य एक टूटा-फूटा 'सुरक्षित' कमरा है। तातार राज्य का निरंकुश शासन उलटने का स्वप्न देखने वाले क्रांतिकारियों का यही मन्त्रणाकेन्द्र है।

इस समय कई मोमबत्तियों का धूमिल प्रकाश वहाँ हो रहा है। जमीन पर बिछी जाजिम पर २५, ३० युवक बैठे हैं।

सभी के मुख पर प्रतिज्ञा के भाव हैं। सभी निस्तब्ध हैं।

एक ने उस नीरवता को तोड़ा।

बोला—"अपने रहनुमा सफ्दर साहब की अचानक गिरफ्तारी से हमारा सारा मकसद अधूरा रह गया...सारे मन्सूबे खाक में मिल गये...."

"हमें इत्मीनान रखना चाहिये दोस्त!—" दूसरे ने कहा—"हम अपने मकसद से कभी पीछे न हटेंगे। हमारे मन्सूबे एक न एक दिन जरूर पूरे होंगे..."

"तुम ठीक कहते हो—" तीसरे ने कहा—"मगर, बगैर किसी रहनुमा के, हमें अपनी मंजिल तक पहुँचने में काफी अन्देशा है दोस्त!"

"तुम कैसे कहते हो कि हमारा कोई रहनुमा न रहा?—" पहले

ने कहा—"तुम अभी नये आदमी हो। तुम्हें नहीं मालूम कि सफ्दर साहब तो सिर्फ नाम के लिये रहनुमा थे...हमारी असली रहनुमा तो बेगम आलिया हैं..."

"बेगम आलिया ?—" ताज्जुब से बोला तीसरा—"यह नाम तो पहले-पहल सुन रहा हूँ मैं !"

"अभी बहुत सी बातें तुम्हें जाननी हैं मेरे हमदर्द !—" दूसरे ने कहा —"बेगम आलिया ही हमारी रहनुमाई करती हैं। सफ्दर साहब तो बेगम की राय पर चलने वाले कठपुतले हैं।"

"कौन हैं यह बेगम आलिया ?—" पूछा तीसरे ने।

"कोई नहीं जानता कि वे कौन हैं, कहाँ रहती हैं और क्या करती हैं ?—" चौथे ने कहा—"वे हमेशा बुर्का पहनकर हमारे पास आती हैं। वे अपने को हमारी नजरों से छिपाना चाहती हैं..."

"मगर कुछ भी हो, वे हमारी सच्ची हमदर्द हैं—" पहले ने कहा—"हम उन्हीं की राय पर चलते-चलते इतना आगे बढ़ सके हैं कि खुद शाहेआजम की नींद भी हराम हो गई है...बेगम ही हमारी सारी ताकत हैं...बगैर उनके हम कुछ भी नहीं कर सकते..."

"अब तक वे आई क्यों नहीं ?" पूछा चौथे ने।

"शायद हमारा यहाँ होना उन्हें मालूम न हो ?—" तीसरे ने पुनः अपनी अनभिज्ञता प्रकट की !

"यही तो ताज्जुब की बात है मेरे दोस्त !—" दूसरे ने कहा—"बेगम आलिया को कोई खबर देने नहीं जाता...हम जानते भी नहीं कि उन्हें कहाँ और कैसे खबर दी जाय...फिर भी जब हमारा मजमा यहाँ इकट्ठा हुआ है, वे आई जरूर हैं...न जाने कैसे उन्हें हमारे कामों की खबर रहती है..."

"तब तो वे बड़ी हैरतअंगेज औरत हैं—" तीसरे ने आश्चर्य से कहा—"क्या तुम लोगों ने कभी अन्दाज भी नहीं लगाया कि वे कौन हो सकती हैं..."

"हमने अन्दाज लगाया है दोस्त ! और हमें यकीन है कि हमारा अन्दाज गलत न होगा—" पहले ने कहा।

"क्या ख्याल है तुम्हारा ?" पूछा तीसरे ने।

तो पहला कहने लगा—

"ये टूटे-फूटे मकानात, यह खँड़हर देखते हो न ?...आज से चन्द साल पहले यहाँ एक खुशनुमा अमलदारी थी और उस अमलदारी के मालिक थे कोई अमीर, जिनका दिल समुन्दर-सा बड़ा था। रैय्यत के सच्चे हमदर्द थे वे,....रियाया पर होने वाले जुल्म को देखकर उन्होंने शाहेआलम के खिलाफ बगावत कर दी। शाहेआलम की बदकारी और गुस्सा तो सभी पर जाहिर है, एक दिन सुबह, इस खुशनुमा अमलदारी में शाही तोपें गड़गड़ा उठीं। सारी अमलदारी खँड़हर हो गई। बगावत में हिस्सा लेने वाला एक-एक इन्सान तोपदम कर दिया गया। कत्लेआम मच गया। वे अमीर भी मौत के शिकार हुए। सिर्फ उनकी बेगम ही भागकर बच गईं। उसके बाद उनका पता न लगा..."

"तो तुम्हारा ख्याल है..." तीसरा बोला—"कि वही बेगम साहिबा इस तरह पर शाहेआलम से बदला लेना चाहती हैं ?"

"हाँ ! उस वक्त उनके शौहर जिस बेदर्दी के साथ मारे गये... उससे हर सच्ची औरत का दिल इन्तकाम के लिए भड़क सकता है..." पहले ने कहा।

"खुदा करे, बेगम आलिया के बारे में तुम्हारा अन्दाज दुरुस्त निकले—" तीसरा बोला—"ओ बेगम साहिबा अपना इन्तकाम लेकर आजादा दिलायें..."

उस समय।

जब कि उस भयानक खँड़हर में ये बातें हो रही थीं, शाही कैदखाने की एक काल कोठरी में सफ्दर पड़ा था।

फर्श पर कम्बल बिछा था और सफ्दर का शरीर निश्चेष्ट पड़ा हुआ निद्रा में मग्न था।

कोठरी में सूचीभेद्य अन्धकार व्याप्त था। दरवाजे पर मोटे मोटे छड़ लगे थे और कई सशस्त्र पहरेदार पहरा दे रहे थे।

परन्तु रात्रि के आलस्य ने पहरेदारों की आँखों में भी नींद ला दी थी।

एकाएक सफ्दर के सिरपर किसी वस्तु का स्पर्श हुआ और वह चौंक कर उठ बैठा।

एक काली परछाईं-सी खड़ी थी उसके सामने।

आँखें फाड़कर देखने पर भी सफ्दर उसकी आकृति का अनुमान न लगा सका।

"कौन है ?—" सफ्दर ने धीरे से पूछा।

"आहिस्ता बोलो मेरे दोस्त !—" सुरीली आवाज में किसी ने कहा—"मैं हूँ..."

"कौन ?—" चौंककर उठ खड़ा हुआ सफ्दर—"बेगम आलिया ! आप...?"

"हाँ, मैं ही हूँ सफ्दर !..." धीरे से बोली बेगम।

पास खड़े होने से, अन्धेरे में भी सफ्दर देख सका कि इस समय भी बेगम के मुँह पर बुर्का पड़ा है।

अपने दल के अन्य सदस्यों की तरह सफ्दर भी यह नहीं जानता था कि बेगम आखिर हैं कौन ?

फिर भी इतना तो वह महसूस कर चुका था कि बेगम अभी जवान हैं और अन्य लोगों से ज्यादा सफ्दर पर उनकी कृपा दृष्टि है।

बेगम की कृपा दृष्टि ने ही सफ्दर के हृदय में उनके प्रति प्रेम का आरोपण कर दिया था और सफ्दर का अनुमान था कि बेगम भी उसे प्यार करती हैं—

और तभी तो आज ऐसे भयानक स्थान में उसकी रक्षा करने आई हैं।

नहीं तो कल सुबह होते ही सफ्दर तोप के गोले से दूसरी दुनियाँ में पहुँचा दिया जाता।

"आप यहाँ तक कैसे आ पहुँची बेगम ?—" पूछा सफ्दर ने।

"बड़ी मुश्किल से आई हूँ दोस्त ! अब वक्त ज्यादा नहीं है—" बेगम बोलीं—"लो बुर्का जल्दी से पहन लो और हमारे साथ आओ—"

बेगम ने एक बुर्का सफ्दर को दिया।

वह पहनता हुआ बोला—

"इस मेहरबानी का बदला मैं अपनी जान देकर भी नहीं दे सकूँगा बेगम !"

सफ्दर के स्वर में प्रेमजन्य जिस बेचैनी का आभास था, वह बेगम से छिपा न रहा।

वे बोलीं—

"मैं यहाँ इसलिए नहीं आई हूँ सफ्दर ! कि मुझे तुमसे हमदर्दी है, बल्कि इसलिए आई हूँ कि कल तुम्हें फाँसी होने वाली थी और इस वक्त वतन को तुम्हारे जान की सख्त जरूरत है..."

सफ्दर बुर्का पहन चुका था।

बेगम ने उसका हाथ पकड़ लिया, तो सफ्दर के शरीर में बिजली सी दौड़ गई।

फिर दोनों उस सूचीभेद्य अन्धकार में न जाने किधर लुप्त हो गये !

उस समय भी—

उस खँडहर में बैठे हुए आजादी के दिवाने, बेगम आलिया के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे, क्योंकि बिना उनके आये सभा का कोई काम आरम्भ नहीं हो सकता था।

"बेगम आलिया अब तक तशरीफ नहीं लाईं—" पहले ने हैरानी-भरी आवाज में कहा।

"मेरा ख्याल है, वे आज नहीं आवेंगी—" दूसरे ने कहा।

"तो क्या हमें आज का यह मजमा बरखास्त कर देना चाहिए ?–" पहले ने पूछा।

"अरे तुम लोगों को कुछ खबर भी है ?—" पाँचवाँ, जो अबतक एकदम चुप बैठा था, एकाएक बोला।

"खबर ?...कैसी खबर दोस्त ?..."

लोगों ने उत्सुकता पूर्वक पाँचवें की ओर देखा।

"आज शाहे आलम का दरबारे-आम हुआ था—" पाँचवाँ कहने लगा—"उसमें सफ्दर साहब की पेशी हुई थी और फैसला भी सुना दिया गया..."

"क्या फैसला हुआ..."

"कल सुबह सफ्दर साहब तोपदम कर दिये जायँगे..."

सभा में सन्नाटा छा गया। यह समाचार इतना हृदयविदारक था कि सभी के हृदय क्रोध एवं आवेग से भर उठे।

"मुझे यकीन है कि बेगम आलिया जरूर किसी काम में मशगूल हैं...हमें सारी रात उनका इन्तजार करना चाहिये..." पाँचवें ने कहा।

"बेहतर है—" सभी बोले।

पुनः निस्तब्धता व्याप्त हो गई !

सभी के चेहरे पीले पड़ गये थे। सफ्दर की आनेवाली मृत्यु का समाचार, उनकी आशाओं पर तुषारपात कर देनेवाली थी।

"मुझे बहुत देर हो गई दोस्तों !..." आवाज आई।

सब लोगों ने चौंक कर देखा।

बेगम आलिया थीं। मोमबत्ती के मद्धिम लौ में उनका काला रेशमी बुर्का चमक रहा था। बदन पर भी काला लबादा पड़ा था और जिसने उनके शरीर का सौंदर्य छिपा रखा था।

उनके साथ वैसा ही बुर्का और लबादा पहने हुए एक अन्य व्यक्ति भी था।

बेगम के स्वागतार्थ सभी उठ खड़े हुये।

बेगम और उनका साथी, आकर बैठ गये। अन्य लोग भी बैठे।

"हम बड़ी देर से आपका इन्तजार कर रहे थे—" एक ने कहा।

"मैं देर के लिये माफी चाहती हूँ"—मुलायम आवाज में बेगम ने कहा—"मैं अपने इस दोस्त को लेने के लिये शाही कैद खाने में चली गई थी..."

बेगम ने अपने साथी की ओर संकेत किया।

सबकी दृष्टि उस व्यक्ति पर आकर अटक गई।

उस व्यक्ति ने अपना बुर्का उतार कर अलग रख दिया, तो सभी चौंक उठे।

"सफ्दर साहब !..."

एक साथ कई कंठों से प्रसन्नतासूचक स्वर निकला।

"हाँ दोस्तों !" सफ्दर बोला—"कल सुबह मैं तोप के मुँह में जाने वाला था, मगर उसके पहले ही तुम लोगों के पास आ रहा। यह सब बेगम आलिया की मिहरबानी है..."

सभी के नेत्र श्रद्धा से झुक गये। बेगम का यह कार्य देश के लिये आदर का विषय था।

"हाँ ! तो अब काम की बातें होनी चाहिये"—बेगम बोलीं।

सब उनकी ओर आकृष्ट हुए।

"अब तुम्हारा रहनुमा तुम्हारे पास आ गया है"—कहने लगी बेगम—"तुम लोगों को जोर-शोर के साथ अपना काम शुरू कर देना चाहिए...चन्द दिनों पहले मैं तुम लोगों के सामने जाहिर कर चुकी हूँ कि हाथ पसारकर माँगने से आजादी नहीं मिलती। इस काम में कितनों ही जानें जायँगी, कितनों को ही शहीद होना पड़ेगा...मेरे दोस्तो ! आजादी ताकत से मिलती है..."

"बेगम साहिबा !"—कोई बोला—"हमारी ताकत आप हैं, हमें बताएँ कि हम क्या करें...."

"पोशीदा तौर से तुम अपने मकसद का ऐलान करो—" बोली

बेगम—"वतन के बच्चों, जवानों, बूढ़ों में और ज़मी के जर्रे-जर्रे में आजादी की आग भड़काओ...शहीद होनेवाले नवजवानों की जमात को अपनी ओर मिलाकर अपनी ताकत मजबूत करो..."

"उसके बाद ?..."

"तुम्हें लड़ने के लिए हथियारों की जरूरत पड़ेगी"—कहा बेगम ने—"तुम किस्म-किस्म के हथियार इकट्ठा करो....यह खँड़हर ही तुम्हारा किला होगा। खुफियों की निगाह इस पर कभी पड़ नहीं सकती...जब तुम्हारे पास इतनी ताकत मौजूद हो जाय कि तुम शाहेआलम की फौज का मुकाबला कर सको, तो एक दिन आधी रात के वक्त शाही महल पर हमला कर दो। जीत तुम्हारी होगी और आफत के वक्त में तुम मुझे हमेशा अपने बगल में खड़ा देखोगे...मुझपर यकीन करो, तो तुम्हें आजादी की आखिर मंजिल तक पहुँचा दूँगी..."

"हम सब तैयार हैं..." सभी एक स्वर से बोल उठे।

"इन खंड़हरों की ओर देखो—" कहने लगी बेगम, उसकी आवाज में कम्पन आ गया—"उस दिन की याद करो, जब यहाँ भी मकानात थे, गुलशन था, फूल थे, खुशबू थी...हूँरे थीं और गिलमे थे...यह सल्तनत की बेशकीमती सरजमीं थी—कोहेकाफ का खजाना था यहाँ..."

रुक गई बेगम !

सब गौर से सुन रहे थे।

"मगर शाही तोपों के आगे सब जमीन पर लोट गये...मजलूमों की चीखें अब भी यहाँ की हवा में गूँज रही हैं—" बेगम कहती गई—"तुम लोग जवान हो...तुम्हारी रगों में खून लहरा रहा है...तुम्हारी आँखें बेकसों पर जुल्म का आलम नहीं देख सकती तो उठो ! जंग लगे हुए हथियारों को साफ करो...अपने दिल में शाही रुतबे के खिलाफ आग जलाओ...अपने सीने पर तोपों की मार बरदाश्त करो...अपना जिस्म, अपनी दौलत, अपना सर, अपनी ताकत सब कुछ आजादी के लिये कुर्बान कर दो..."

"....."

चुप थे सब।

केवल मोमबत्ती की लौ काँप रही थी।

"दुनियाँ वालों की नजरों में तुम्हारी यह कुर्बानी बेशकीमती होगी... तुम्हारे शहीदों को लोग दिलों में जगह देंगे...उनकी कब्रों पर फूलों के ढेर लग जायँगे...तुम लोग मरकर भी जिन्दा रहोगे...यह मसलहत का तकाजा है...वक्त की आवाज है....राहे आजादी में शहीद हो जाओ..."

बेगम का स्वर जितना मीठा था, उससे भी ज्यादा जोश भरा था उनकी वाणी में।

जवानों के रग-रग फड़क उठे।

वे देख रहे थे—बेगम के स्वर में स्वतंत्र्य का प्रबल आवाहन।

"तुम देख रहे हो—" कहती रही बेगम—"शाहे आलम का जुल्म तुम देख रहे हो...उनका इन्साफ बेकसों का गला घोंटता है...उनकी आवाज मजलूमों पर जुल्म करने का हुक्म देती है...उनकी आँखें शराब के नशे से लाल-लाल रहती हैं...उनका जिस्म औरतों की अस्मत लूटता है...बेइन्साफ शाहंशाह के खिलाफ वतन के बच्चे-बच्चे को बगावत करनी चाहिये..."

"हम बगावत करेंगे...हम जुल्म के खिलाफ हथियार उठायेंगे..." सब बोले।

"बस, अब मुझे कुछ नहीं कहना है दोस्तों!....कल से तुम अपना काम शुरू कर दो..."

चुप हो रहीं बेगम।

"मजलिस बर्खास्त करने के पेश्तर, बेगम साहिबा से हमारी एक दरख्वास्त है...हमें उम्मीद है कि बेगम साहिबा हमारी इल्तिजा कबूल करेंगी..." एक ने कहा।

"कहो! क्या चाहते हो तुम लोग?"—पूछा बेगम ने।

"हम लोग आपका असली नाम जानना चाहते हैं, आपकी तारीफ सुनना चाहते हैं, अपने हमदर्द की सूरत देखना चाहते हैं—"

"इस्तकलाज से काम लो दोस्तों!"—बेगम ने कहा—"इसके लिये तुम्हारे हठ ठीक नहीं। वक्त सब कुछ खुलासा कर देगा।"

सब उठ खड़े हुए। मजलिस बरखास्त हुई।

सबने बेगम को कोर्निश की।

जाती हुई बेगम ने सफ्दर को साथ आने का इशारा किया? सफ्दर मानों चाँद पा गया।

दोनों साथ-साथ चलने लगे।

"देखो सफ्दर!" बेगम बोलीं—"कल बहुत हंगामा मचेगा तुम्हारे इस कदर गायब हो जाने से, इसलिये बेहतर है कि तुम अपने जिस्म को पोशीदा रखो—"

"ऐसा ही करूँगा बेगम।"

बेगम थोड़ी देर के लिये सफ्दर के पीछे हो गईं। सफ्दर ने सर घुमाया तो वहाँ कोई न था।

बेगम आलिया जैसे हवा बन गई थीं।

● ●

दुबली-पतली-सी पगडण्डी, अगणित धूल-कणों का बोझ अपनी छाती पर लादे, निश्चेष्ट पड़ी थी और कबीले के कितने ही छोकरे और छोकरियाँ एक सायेदार पेड़ के नीचे आमोद-प्रमोद में तल्लीन थे।

सब न जाने कौन-सा खेल, खेल रहे थे?

हुस्न और शबाब, सौन्दर्य और यौवन का अपूर्व समारोह था वहाँ!

सरदार का बेटा नसीर, अलग एक चट्टान पर बैठा हुआ न जाने क्या सोच रहा था। वह गम्भीर था आज। खेल-कूद में जरा भी भाग नहीं ले रहा था।

शाम होने में कुछ ही देर थी।

सूर्य का प्रकाशहीन गोला खजूर के पीछे से झाँक रहा था और अपनी जीती-जागती सौन्दर्यमयी दुनियाँ पर हसरत की निगाह डाल रहा था।

दूर पगडण्डी पर आती हुई किसी युवती की छाया स्पष्ट हुई—तो एक चिल्ला पड़ा—

"लो शम्सुल भी आ गई...अब नसीर भाई का दिल बहल जायगा.."

खेल रुक गया।

सब आती हुई शम्सुल की ओर देखने लगे। सर नीचा किये हुए चली आ रही थी वह।

नसीर ने भी देखा—उसकी गम्भीरता दूर भाग गई। और अव्यक्त मुस्कान से चेहरा भर उठा।

शम्सुल पास आ गई, तो सबने उसे घेर लिया।

"आज शम्सुल बीबी तो निहायत खुश नजर आ रही हैं—" एक ने कहा।

"तो तुम्हारी आँखें क्यों फूटती हैं?" शम्सुल ने कहा।

"लो भाई! अब तो हमारी आँखे भी फूटती जा रहीं हैं—" उसने कहा—"खुदा कायम रक्खे शम्सुल की शरबती आँखों को, ताकि नसीर भाई का दिल न टूटे..."

नसीर ने आँखों से कुछ इशारा किया—शम्सुल ने देखा।

आगे-आगे नसीर और पीछे-पीछे शम्सुल।

दोनों टूटे-फूटे तालाब के किनारे आ बैठे। व्यङ्ग से उनकी जान छूटी।

तालाब का किनारा सूना था ;

अस्तप्राय सूर्य का सुनहला रङ्ग तालाब के वक्ष पर फैल रहा था।

"बड़ी देर कर दी शम्सुल तुमने !..." कहा नसीर ने।

"क्या करूँ ? —" शम्सुल बोली—"शाहजादे साहब से बातें करने में वक्त का ख्याल ही न रहा..."

"शाहजादा ?—" चौंककर बोला नसीर—"कौन शाहजादा ?..."

"शाहजादये तातार !—" शम्सुल ने कहा—"आजकल जोमन की सराय में ठहरे हैं। कल उन्होंने ही मुझे मोहरें दी थीं...बड़े नेक हैं..."

"तो यह बात है !..." बोला नसीर—"इसीलिये तुम इतनी खुश हो...शाहजादे के साथ कहीं शाहजादी बनने का ख्वाब तो नहीं देख रही हो शम्सुल !"

"इसमें हर्ज ही क्या है !—" प्रसन्नता टपक रही थी शम्सुल के स्वर से।

"तुम्हारी आँखों के सामने शाही दौलत नाच रही है शम्सुल ! और दौलत आँखों पर काला परदा डाल देती है..."

"तुम्हारा मतलब ?—"

"मुझे खौफ है कि शाही दौलत की लालच, तुम्हारी मासूम निगाहें बदल न दे—" बोला वह—"और तुम यह गाँव, यह सरजमीन, यह तालाब, ये टूटे-फूटे मकान भूल जाओ..."

"तुम मेरे हमदर्द हो नसीर ! मैं तुमसे कुछ भी छिपाकर नहीं रखना चाहती—" शम्सुल ने कहा—"मैं यकीनन यह सब कुछ भूल जाना चाहती हूँ। मेरी नजरों के सामने इस वक्त एक दूसरा ही समाँ बँध चुका है..."

"यह समाँ चन्दरोजा है नादान लड़की !—" झिड़ककर बोला नसीर—"यह न भूल की तू गरीब के घर पैदा हुई है और गरीबों में ही तेरी परवरिश हुई है....जवानी के आलम में, दौलत के चमक की बीच अपने सिसकते बचपन को न भूल।"

"अगर भूल गई तो—"

"तो मैं तुम्हारा दुनियाँ में सबसे बढ़कर जानी दुश्मन हूँगा"—नसीर ने कहा—"याद रख शम्सुल ! गरीबी में तकलीफ है, मगर सब्र है...अमीरी में आराम है, मगर बेसब्री और हसद है...गरीबों की दुनियाँ से निकल कर, अमीरी में तुम्हें आराम कमी न हासिल होगा..."

"मैं अपने दिल से मजबूर हूँ नसीर !..."

"तुम अपने दिल की मजबूरी देख रही हो शम्सुल !—" नसीर उसके और पास खिसक आया, धीरे से उसका हाथ पकड़ कर नम्र स्वर में बोला—"मगर क्या तुम दूसरों के दिल की मजबूरियाँ नहीं देखना चाहती ?...मजबूरियाँ तो हर इन्सान के रास्ते में हैं, मगर क्या हमें लाजिम है कि उनसे ऊब कर अपना रास्ता बदल दें ?—तुम गलत रास्ते पर हो शम्सुल ! एक हमदर्द दोस्त की हैसियत से मैं तुमसे कहता हूँ कि तुम्हारा दौलतमन्दों के साथ आँखमिचौनी खेलना, तुम्हारे हक में कहर बर्पा करेगा..."

"दिल को, दिल से और सच्ची मुहब्बत से सरोकार होता है नसीर !...दौलत और गरीबी की उसके सामने कुछ भी कीमत नहीं—"

"तुम अपने रास्ते पर चलने के लिये आजाद हो—" नसीर बोला—"मगर लमहे के लिए भी तुम यह न भूलो कि तुम्हारी अन्धी माँ है, चाहने वाले हैं, गाँव है, तालाब है—"

बातचीत का सिलसिला कुछ ऐसा रंग लाया कि दोनों के हृदय अव्यक्त वेदना से भर उठे।

कहाँ तो शम्सुल शाही महल का स्वप्न देख रही थी और कहाँ नसीर ने उसे माँ और गाँव की याद दिला दी।

यह याद अत्यन्त कष्टकारक थी।

"याद रखो शम्सुल !—" दृढ़ स्वर में बोला नसीर—"अगर किसी ने तुम्हें जरा भी तकलीफ पहुँचाई, तो मैं उसका गला घोंट दूँगा...और

अगर तुमने अपनी माँ को तकलीफ दी, तो तुम्हारी लाश को ठोकर मारते हुए भी मुझे दर्द न होगा..."

दोनों उठ खड़े हुए।

शम्सुल अपने घर की ओर चली, और नसीर अपने घर की ओर।

नसीर की मार्मिक बातों ने शम्सुल के हृदय में उथल-पुथल मचा दी थी।

गाँव का एक गरीब छोकरा उससे चाहता क्या है, वह जरा भी न समझ सकी।

फिर भी वह चाहती थी कि नसीर ने जो कुछ कहा है, वह जल्दी से जल्दी भूल जाय—

और घर के दरवाजे तक पहुँचते-पहुँचते वह सब कुछ भूल गई। शाहजादे की बातें पुनः उसके कानों में गूँजने लगीं और उसका हृदय एक मादक स्मृति से भर उठा।

मुँह पर पुनः मादकता थिरकने लगी—नयनों में मदिरा भर-भर उठी।

"अम्मी !..." उसने दरवाजे पर से ही पुकारा।

"आओ बेटी !..." अन्धी बुढ़िया की आवाज थी।

दौड़कर शम्सुल बुढ़िया से लिपट गई !

बुढ़िया ने आनन्द विभोर होकर उस कोमल शरीर को अपने शिथिल हाथों से बाँध लिया।

मगर एकाएक चौंक पड़ी।

शम्सुल के पुष्ट अंगों के आलिङ्गन ने जैसे उसकी आँखें खोल दीं।

वह उसके शरीर पर की गदराई जवानी छू रही थी और अनुभव कर रही थी कि अब उसकी नादान बेटी उस अवस्था को पहुँच गई है, जब कि उसे एक मर्द साथी की आवश्यकता हो सकती है।

बुढ़िया के लिए यह नवीन चिन्ता का विषय था।

उसकी बेटी अब जवान हो गई है और जवानी के दिनों में पग-पग पर खतरा उठ खड़ा होता है !

कहीं वह अपनी अमूल्य निधि, अपनी प्यारी बेटी को खो न बैठे।

चौंककर बुढ़िया ने शम्सुल को बाहों में भर लिया और उसका मस्तक चूमने लगी।

"मेरी बेटी !..." बोली बुढ़िया—"मैं तुम्हारे लिए कुछ न कर सकी...मगर तुम खुद अपने लिए कुछ न कर बैठना बेटा ! नहीं तो मैं उजड़ जाऊँगी..."

भोली शम्सुल बुढ़िया की दार्शनिकता समझ न सकी।

"अम्मी !...." शम्सुल ने धीरे से कहा।

"कहो !..." बुढ़िया बोली।

"आज मैंने शाहजादा साहब से मुलाकात की थी—" बोली वह।

एक बार बुढ़िया चौंकी, फिर बोली—"आज भी कुछ मोहरें दी हैं क्या ?"

"अब मोहरें लेकर क्या होगा अम्मीं ?—" शम्सुल बोली—"क्या इतनी काफी नहीं ?"

"बहुत हैं—" बुढ़िया ने कहा—"क्या कह रहे थे शाहजादा साहब ?"

"बड़ी मीठी-मीठी बातें करते हैं वे अम्मी ! तुम सुनो, तो सुनती ही रह जाओ..."

"जवानों की बातें, जवानों को ही मीठी लगती हैं लड़की ! मेरे लिए इन बातों में क्या रखा है ?..."

बुढ़िया की कटाक्ष अब समझ पाई शम्सुल।

उसे अपनी जवानी का ख्याल हो उठा और उसके गालों पर लालिमा छा गई।

\+ \+ \+

जोमन की सराय में—

अपने कमरे में शाहजादा पलंग पर बैठा था।

शाम हो चली थी, शमा जल गई थी और परवाने अपनी छोटी-सी जान कुर्बान करते जा रहे थे।

मगर शाहजादे के लिए, आज परवानों की कुर्बानी कुछ महत्व नहीं रखती थी।

उसका हृदय प्रफुल्लित था। अपने हर्षावेग में वह किसी चिन्ता को स्थान नहीं देना चाहता था।

एक परवाना अधजला होकर जब उसकी गोद में गिर पड़ा, उसने मुस्कुराकर उसे उठाया और दूर फेंक दिया।

बोला—"जलो! खूब जलो!...जलते-जलते तुम्हारे भी अरमान पूरे होंगे...मुझे देखो! मैं भी जला था, मगर आज मुझे उस जलन का खुशनुमा अन्जाम मिल गया...तुम्हारी भी कुर्बानी बेकार नहीं जायगी दोस्तों!"

मुमताज अन्दर आई, तो शाहजादे का स्वर सुन कर चौंक पड़ी।

पूछा उसने—"आलमपनाह अभी किससे बातें कर रहे थे?"

"परवानों से!—" बोला शाहजादा—"इन बेज़बान दिवानों से..."

"क्या इनके जलने से हजूर को खुशी हासिल होती हैं?—"

"यह दुनिया का कायदा है बानू!" बोला शाहजादा—"कोई जलता है, कोई हँसता है...कोई तड़पता है, कोई खुश होता है... तड़पन और जलन में आने वाली हँसी और खुशी छिपी होती है मुमताज!"

"आज हजूरे आलम को अपने चारो ओर दिलकश नजारे ही दिखाई पड़ रहे हैं...किसी के जलते हुए घर को देखकर हमदर्द होने की आदत डालिए आलीजाह!..."

"आज मैं बहुत खुश हूँ बानू!—"

"खुदा का शुक्र है कि हजूरे आजम की मायूसी जल्द दूर हो गई—" मुमताज ने कहा—"अब तो शाहजादे सलामत की तबियत दुरुस्त है न ?"

"बिल्कुल दुरुस्त !—" शाहजादा बोला—"मगर तुम्हारा चेहरा जर्द क्यों है बानू ?"

"मेरा चेहरा ?—" दिल का भाव छिपाती हुई बोली मुमताज—"मुझे क्या अफसोस हो सकता है आलीजाह ? आपकी खुशी मेरे लिए जन्नत है..."

"आज मैं जल्द सोना चाहता हूँ बानू !—मेरे लिए खाना लाओ—" शाहजादे ने कहा।

खाना आया।

खाकर शाहजादा पलंग पर लेट गया।

"क्या शाहजादा सलामत थोड़ी देर तक दिलरुबा सुनना पसन्द करेंगे ?—" पूछा मुमताज ने।

"सुनाओ !..." कहा शाहजादे ने।

दिलरुबा बज उठा। सुनता रहा शाहजादा, मगर दिल शम्सुल की सूरत याद कर रहा था। आँखें बन्द थीं।

अलसित आँखों में नींद आ बैठी, तो मुमताज ने दिलरुबा रखकर करुणा की एक दीर्घ निश्वास ली।

उठकर शाहजादे के शरीर पर लिहाफ डाल दिया उसने और स्वयं भी फर्श पर लेट गई।

उस रात उसने खाना न खाया। शाहजादे की सारी जलन उसके हृदय में भर गई थी। इन थोड़े दिनों में शाहजादे के सम्पर्क में आने से, वह अपना पेशा भूलती जा रही थी। औरत का दिल जो था !

रात थोड़ी ही देर में चिड़िया की तरह उड़ गई कि शाहजादा जान ही न सका। सारी रात वह मादक स्वप्न देखता रहा था।

नींद खुली तो उसने मुमताज को खड़े देखा। वह बहुत पहले ही उठ गई थी और इस समय गुसल करके दूसरे वस्त्रों में उपस्थित थी।

मुमताज ने शाहजादे को भी गुसल कराया और नाश्ता दिया।

शाहजादा शम्सुल की प्रतीक्षा कर रहा था, परन्तु इतना दिन चढ़ आने पर भी वह अभी तक उसके पास नहीं आई थी।

"शम्सुल अभी तक नहीं आई मुमताज ?—" पूछा शाहजादे ने।

"आई है आलमपनाह !—" बोली वह—"सराय के दरवाजे पर बैठी हुई टुकड़े माँग रही है..."

"अब उसे माँगने की क्या जरूरत है ?—" बोला शाहजादा—"तुम उसे जल्द बुलाओ..."

शम्सुल आई, तो शाहजादा उसे देखकर आश्चर्यचकित रह गया।

नई ओढ़नी ! नई सलवार !

शम्सुल का सौन्दर्य निखर आया था—यौवन और भी मादक हो उठा था।

शम्सुल ने कोर्निश की, तो शाहजादे ने उठकर उसका हाथ पकड़ लिया।

शाहजादा पलंग पर बैठा और शम्सुल पलंग पकड़ कर फर्श पर।

"तुम ऐसा क्यों करती हो शम्सुल ?—"

"कैसा आलमपनाह ?—"

स्वर में झिझक नहीं थी, निर्भयता थी।

आँखों में शर्म नहीं थी, मदिरा थी।

होठों में स्थिरता नहीं थी, मुस्कुराहट थी।

"क्या अब भी तुम्हें माँगने की जरूरत है ?—" पूछा शाहजादे ने।

"जो कुछ था सब तो हजूरे आलम ने ले लिया—" आँखों में आँखें डालकर बोली वह—"अब माँगना ही तो सहारा है...."

शम्सुल की गूढ़ बातों का अर्थ शाहजादा समझ गया। वह हँस पड़ा।

"तुम्हारा छीनकर, अपना सब कुछ तो तुम्हें दे दिया है शम्सुल !—" बोला वह—"क्या उतना काफी नहीं ?"

"बहुत काफी है आलीजाह ! कल से अपना पेशा बन्द कर दूँगी..." शम्सुल बोली ।

दोनों कुछ देर तक चुप रहे ।

यह मिलन उनके लिये इतना आनन्ददायी था कि वाणी मूक हो गई थी और बेज़बान आँखें बोलने लगीं थीं ।

आँखों की भाषा पढ़ने में हृदय अत्यन्त पटु होता है ।

दोनों के हृदय, वह भावुक भाषा तृप्ति के साथ पढ़ रहे थे ।

पुतलियों के इस संघर्ष से दोनों को नवीन अनुभव हो रहे थे । आँखें खुली ही रह गई थीं—निर्निमेष ! एक टक ! जैसे कभी बन्द ही न होंगी !

जैसे युग-युग तक उनके तृषित हृदय, वह मादक भाषा पढ़ते रहेंगे ?

"तुम्हारा गाँव तो निहायत खुशनुमा होगा बानू ?—" शाहजादा की वाणी सजीव हुई ।

"वहाँ आलमपनाह के लिये कोई दिलचस्पी नहीं—" बोली शम्सुल—"चारों तरफ सिर्फ गरीबी का खौफनाक नजारा दिखाई पड़ेगा..."

"वह नजारा मुझे बेहद पसन्द आयेगा—" शाहजादे ने कहा ।

"क्या आलीजाह मेरा गाँव देखेंगे ?—" स्वर आश्चर्य भरा था ।

"जरूर देखूँगा—" बोला वह—"मैं उस सरजमीं को देखना चाहता हूँ, जहाँ तुम्हारे जैसे फूल खिला करते हैं..."

"क्या शाहजादे आलम को यह फूल पसन्द आया ?—" आँखों में शोखी भरकर पूछा शम्सुल ने ।

"बेहद पसन्द आया मुझे—" बोला वह—"मगर गुल की तारीफ करने के लिये बुल-बुल की जबान मेरे पास नहीं बानू !..."

"गुल अपनी तारीफ नहीं सुनना चाहता आलीजाह ! सिर्फ अपनी खुशबू से किसी का दिमाग मुअत्तर कर देना चाहता है—" बोली शम्सुल।

"गुल की खुशबू से मेरे दिलोदिमाग बाग-बाग हो चुके हैं—" शाहजादे ने कहा—"अब तमन्ना सिर्फ यह रह गई कि काश गुल को अपने धड़कते कलेजे में छिपा कर रख सकता ?..."

"कलेजे में दर्द हो जायगा आलमपनाह ?—"

"उस दर्द की दवा भी गुल की प्यारी खुशबू ही होगी शम्सुल !..." कहकर शाहजादे ने शम्सुल की ओर देखा।

"....."

शम्सुल चुप रही।

मदभरे नयन जमीन की छाती पर पड़े थे।

"शम्सुल !..."

"आलीजाह !..."

"आँखें ऊपर करो शम्सुल ! मेरी तरफ देखो..." कहा शाहजादे ने।

शम्सुल ने अपना चेहरा ऊपर उठाया—मदिर नेत्रों से शाहजादे की आँखों में देखा।

"मेरी बातों का जवाब दो !"

"..." कोई जवाब न मिला शम्सुल को।

"मैं गुल को यकीन दिलाता हूँ कि उसे मेरे पास कोई तकलीफ न होगी—" शाहजादा बोला—"मेरा कलेजा गुल के बगैर बेताब है।"

"कहीं लापरवाही से गुल मुरझा न जाय..." धीरे से बोली शम्सुल।

"गुल हमेशा सरसब्ज़ बना रहेगा बानू !—वादा करता हूँ मैं !..."

"तो गुल तैयार है आलमपनाह..." लज्जायुक्त स्वर में कहा शम्सुल ने। गालों पर सुर्खी छा गई थी।

"शम्सुल !..."

शाहजादे ने शम्सुल का हाथ अपने हाथ में ले लिया और उसे उठा कर अपनी बगल में पलंग पर बैठा लिया।

विभोर हो गई शम्सुल । भूल गई सब कुछ । यह मादक अनुभव उसके लिये सर्वथा आल्हादकारक था ।

बहुत समय बीत गया ।

दिन की रोशनी न जाने कब लुप्त हो गई, यह वे न जान सके ।

सन्ध्या का आगमन देखकर शम्सुल चौंक पड़ी ।

"अब मुझे जाना चाहिये आलीजाह !"—बोली वह—"मैं भी तो चलूँगा..." कहा शाहजादे ने ।

आधे घण्टे बाद सराय के बाहर एक सजी हुई ऊँट गाड़ी आ खड़ी हुई ।

शाहजादे और शम्सुल उसपर आ बैठे । गाड़ी गाँव की ओर चल दी ।

इस समय शम्सुल के बदन पर सुन्दर रंग-विरंगे वस्त्र थे ।

"जानती हो मैं तुम्हारे गाँव पर क्यों चल रहा हूँ ?"—रास्ते में शाहजादे ने पूछा ।

"मेरा गाँव देखने चल रहे हैं..." शम्सुल ने कहा !

"नहीं !"—शाहजादे ने कहा—"मैं तुम्हारी माँ से तुम्हें माँगने चल रहा हूँ..."

शम्सुल के गाल लाल हो उठे ।

बोली—"यह माँगने का पेशा कब से अख्तियार किया आपने ?"

"जब से तुम्हारा साथ हुआ शम्सुल ?"—धीरे से शम्सुल का हाथ दबाया उन्होंने ।

और शम्सुल के बदन में सिहरन दौड़ गई ।

"मैं चाहता हूँ कि तुम और तुम्हारी माँ, दोनों मेरे साथ चलें..." शाहजादे ने पुनः कहा ।

"अभी यह बात माँ से न कहिये..."

"क्यों ?..."

"मुझे बड़ी शर्म लगेगी"—धीरे से बोली शम्सुल—"इस दफा

अकेले चले जाँय—फिर चन्द रोज बाद शाहेआलम की रजामन्दी लेकर आयें, तो मैं चलूँगी। हमारी तरफ से कमी इनकार न होगा। अम्मी को भी एतराज न होगा..."

"बेहतर है"— शाहजादा बोला—"भाईजान की रजामन्दी ले लेना जरूरी है। हालाँ कि मुझे यकीन है कि वे मेरे मामले में दस्तन्दाजी न करेंगे..."

"....."

शम्सुल चुप रही।

शायद भविष्य की मधुर कल्पनाओं में डूबी थी।

परन्तु भविष्य की बात कौन जान सका है ?

"मामीजान तो तुम्हें देख कर निहायत खुश होंगी शम्सुल !—" शाहजादा बोला—"वे नेकदिल औरत हैं...मुझे माँ से भी ज्यादा प्यारी हैं..."

रास्ते भर शाहजादा शम्सुल को अपनी कहानी सुनाता रहा।

बचपन की एक-एक बात, मल्का की एक-एक रहमदिली, उसने सुना डाली।

रास्ता मजे में कट गया।

गाँव आ गया था। गाड़ी रुक गई।

वहाँ का दैन्य दृश्य देखकर शाहजादा की आँखें नम हो गईं।

शम्सुल अपने घर की ओर चली। पीछे-पीछे शाहजादा भी। दरवाजे पर ही नसीर मिला।

शम्सुल को देखकर खुशी-खुशी बोला—"आ गईं शम्सुल ?..."

मगर ज्योंही शाहजादा पर उसकी दृष्टि पड़ी वह चौंककर पीछे हट गया। झुककर कोर्निश की उसने।

जान गया था वह कि वे शाहजादा हैं।

"तशरीफ मुबारक आलमपनाह !—" बोला नसीर।

"अम्मीं क्या कर रहीं हैं नसीर ?"—शम्सुल ने पूछा।

"अन्दर हैं—" बोला नसीर—"आज तुमने निहायत देर कर दी... अभी तुम्हारा ही जिक्र हो रहा था, इतने में गाड़ी की आवाज सुनकर मैं बाहर निकल आया..."

सन्ध्याकाल का अन्धेरा दूर-दूर तक फैला हुआ था। पगडण्डी सूनी हो चली थी।

दिन होता तो शाहजादे को देखने के लिये गाँव वालों का जमघट लग जाता वहाँ।

"अन्दर तशरीफ लाइये"—संकोच भरे स्वर में नसीर ने कहा।

तीनों झोपड़े में आ गये।

ऊँटगाड़ी से कालीन आ गई थी, उसी पर शाहजादा बैठा।

"कौन है बेटा नसीर !—" अन्धी बुढ़िया ने कहा—"क्या शम्सुल आ गई ?"

"हाँ अम्मीं ! मैं आ गई !—" बोली शम्सुल।

"कहाँ है तू !—" बुढ़िया ने कहा—"इधर आ ! मेरे से लग जा..."

शम्सुल बुढ़िया की गोद में लुढ़क पड़ी।

बुढ़िया उसका सिर सहलाने लगी।

बोली—"मैं देख रही हूँ शम्सुल, कि तू मुझसे रोज ब रोज दूर होती जा रही है...कोई तुझे मुझसे छीनने की कोशिश कर रहा है बेटा !"

"अम्मी ! शाहजादा साहब तशरीफ लाये—" शम्सुल ने कहा।

"शाहजादा साहब ?—" चौंककर बुढ़िया ने कहा—"कहाँ हैं ! किधर हैं ?"

"तुम्हारे सामने ही बैठे हैं अम्मीं !..."

"काश मुझे आँखें होतीं, तो आज मैं भी शाही रुतबे को भर आँख देख सकती...खैर ! खुदा की मर्जी !"

बुढ़िया के स्वर में करुणा का अगम सागर अन्तर्हित था, जिससे सभी के हृदय सन्तप्त हो उठे।

शाहजादा चुप था। क्या कहे ? क्या न कहे ?

"शाहजादा सलामत !—" बुढ़िया बोली—"सब खैरियत तो है बेटा ?"

"दुआ है अम्मींजान !—" शाहजादे ने कहा—"आपका गाँव देखने की तमन्ना थी, इसलिये इधर चला आया..."

"बड़ी मिहरबानी की बेटा !...चाहती हूँ, तुम्हारे कदम मुबारक हमेशा इस घर में पड़ते रहें..."

थोड़ी देर तक और बातचीत करने के बाद शाहजादा उठ खड़ा हुआ।

घर से बाहर निकला।

"खुशकिस्मती इस गाँव की, कि हजूरे आलम इधर तशरीफ लाये–" नसीर ने कहा—"मैं तुम्हारा शुक्रिया अदा करता हूँ शम्सुल !"

"क्यों ?..." शम्सुल ने कहा।

"तुम्हारे आँखों की डोर ही ऐसी है, जो शाहजादाये–आलम को यहाँ तक खींच लाई..."

शाहजादा हँस पड़ा। शम्सुल भी।

"मैं तुमसे मिलकर बहुत खुश हुआ दोस्त !—" शाहजादे ने नसीर से कहा।

"इतनी इज्जत मेरे लिए बहुत है आलीजाह !"नसीर बोला—"कुछ अर्ज करना था। जान बख्शें तो कहूँ..."

"कहो !—" शाहजादे ने अभयदान दिया।

"इस गाँव की सारी रौनक, हम गरीबों की सारी दौलत, हजूरे आलम ने छीन ली..."

"तुम्हारी यह रौनक, तुम्हारी यह दौलत, मेरे पास निहायत कीरीने से रक्खी रहेगी दोस्त !..."

"यह शम्सुल मुझे सबसे ज्यादा प्यारी है आलमपनाह—" नसीर बोला—"खुदा जानता है कि इसके लिये मेरे दिल में कितनी जगह है...अगर इसे जरा भी तकलीफ हुई तो मैं इसे बरदास्त न कर सकूँगा हजूर !...एक नाकाबिल आदमी भी वक्त आने पर बहुत कुछ कर सकता है..."

"तुम खातिरजमा रखो दोस्त !...." शाहजादे ने कहा।

नसीर कोर्निश कर चला गया।

शाहजादे ने शम्सुल का हाथ पकड़ लिया—"कल जरूर आना..."

गाड़ी चल पड़ी, शम्सुल वहाँ तब तक खड़ी रही, जबतक गाड़ी की आवाज सुनाई पड़ती रही।

● ●

चेहरा तमतमाया हुआ था।

मुँह की दाढ़ी और मूँछों के रोयें-रोयें भभक पड़ना चाहते थे।

आँखों के लाल डोरे भयंकर रूप से प्रकाश्यमान हो उठे थे।

शाहंशाहे तातार अत्यन्त क्रोध में इधर से उधर टहल रहे थे।

सामने ही बुड्ढा वजीर सर झुकाये खड़ा था।

शाहंशाह रुके—आँखें और जल उठीं।

"इतने कड़े पहरे के रहते हुए भी..." बोले शाहंशाह—"वह शैतान कैदखाने से कैसे भाग सका ?"

"हैरत की बात है शाहेआलम !—" वजीर ने नम्रता से कहा—"सफ्दर साहब का फरार होना निहायत ताज्जुब की बात है..."

"आज उसे फाँसी की सजा दी जाने वाली थी...मगर मालूम होता

है कि शाही फरमावरदारों से बलवाइयों की ताकत बहुत ज्यादा है...जो हमारा तख्त उलटने की बात सोच रहे हैं, उनका सर हम कुचलने में नाकामयाब रहे, यह कितने शर्म की बात है वजीर ?"

शाहंशाह क्रोध से काँपने लगे।

"सफ्दर के इस तरह फरार हो जाने से, बलवाइयों की ताकत दुगुनी हो गई और रियाया के दिल पर से शाही खौफ जाता रहा...क्या यह तुम सबके लिये अफसोसनाक बात नहीं है—" शाहंशाह पुनः गरजकर बोले।

"बजा है आलीजाह !—" वजीर ने कहा—"इस वाकया ने शाही ताकत का राज़फाश कर दिया...आयन्दा ऐसी बात न हो, इसका पूरा इन्तजाम किया जायगा..."

"फरार कैदी का पता लगाने के लिये अब तक क्या-क्या किया गया है ?—" पूछा शाहंशाह ने।

"चारो तरफ खुफिया दौड़ पड़े हैं आलीजाह !—" वजीर ने उत्तर दिया—"उम्मीद है कि न सिर्फ सफ्दर, बल्कि बलवाइयों का एक-एक सरदार चन्द दिनों के अन्दर गिरफ्तार हो जायगा..."

"खुफियों ने अब तक कुछ पता लगाया ?"

"बहुत कुछ पता लग चुका है शाहेआलम !...मालूम हुआ है कि बलवाइयों की रहनुमाई बेगम आलिया कर रही हैं..."

"बेगम आलिया ?—" आश्चर्य भरे स्वर में बोले शाहंशाह—"यह नाम तो नया सुनने में आया है। यह बेगम कौन हैं ?..."

"यह एक राज हैं आलीजाह ? कोई नहीं जानता कि वे कौन हैं—" वजीर बोला—"मगर कुछ दिनों में ही हमारे खुफिया जरूर पता लगा लेंगे..."

"बलवाइयों का मजमा कहाँ इकट्ठा होता है ?"

"यह भी अभी तक पोशीदा है आलमपनाह !" वजीर ने कहा।

"वजीरे आजम !—" तेज आवाज में बोले शाहंशाह—"तुम जानते

हो कि सल्तनत तातार के अन्दर कोई भी सयासी बलवा मैं बरदाश्त नहीं कर सकता...मगर आज मैं देख रहा हूँ कि पैर की ठोकर खाकर रास्ते की धूल भी सर जा चढ़ी है..."

"बलवा दबाने के लिये कड़े से कड़े अमल काम में लाये जाँयगे शाहेआलम !..." वजीर ने कहा।

"ऐसा ही होना चाहिये—" बोले शाहंशाह—"सड़कों के हर नाके पर दो-दो तोंपें लगवा दो, रियाया को हथियार लेकर चलने की मनाही कर दो, पाँच आदमी से ज्यादा जहाँ इकट्ठे दिखाई दें, उन्हें बगैर शक व शुबहा गिरफ्तार कर लो, रात में सिपाहियों का गश्त बढ़ा दो, मुनादी करा दो कि अँधेरे में जो भी आदमी दिखाई पड़ेगा, उसे फौरन गोली मार दी जायगी।"

"इस हुक्म की तामील अभी हो जायगी आलमपनाह !...बलवाइयों का सर कुचलने के लिए इतना बहुत काफी है..." वजीर ने कहा।

"अब तुम जा सकते हो।"

वजीर ने झुककर कोर्निश की और बाहर चला गया।

उसके आध घण्टे बाद ही शहर के हरएक नाके पर भीमकाय तोपें खड़ी कर दी गयीं। हथियार-बन्द सिपाही हजारों की संख्या में चारो ओर घूमने लगे।

जगह-जगह पर शाही ऐलान करने वाले नगाड़े गड़गड़ा उठे।

जनता ने भय के साथ उन नये कानूनों को सुना।

प्रजा तो पहले से ही सन्तप्त थी, अब और भी भयत्रस्त एवं बलहीन हो गई।

कुछ लोगों के हृदय में शाहंशाह के प्रति तीव्र घृणा भर उठी और कुछ लोग गुप्त क्रान्तिकारियों को ही बुरा-भला कहने लगे।

शाहंशाह का क्रोध अब भी शान्त न हुआ था। वे उद्विग्नता पूर्वक अपने शयन प्रकोष्ठ में टहल रहे थे।

क्रान्तिकारियों के भय ने उनकी नींद हराम कर दी थी।

सोते-जागते उन्हें अपनी रियासत जाने का, अपना गला कटने का भय बना रहता था।

और सफ्दर के इस प्रकार अचानक लुप्त हो जाने से वे और भी त्रस्त हो उठे थे।

कहाँ तो उन्हें आशा थी कि जब सुबह सफ्दर को फाँसी होगी और बलवाई अपने रहनुमा की लाश शहर भर में घसीट कर ले जाते हुए देखेंगे, तो भय से काँप उठेंगे और अपना इरादा बदल देंगे—

और कहाँ यह हुआ कि सफ्दर भी लुप्त हो गया और यह भी पता चला कि क्रान्तिकारियों का मुखिया सफ्दर नहीं, वरन बेगम आलिया हैं।

बेगम आलिया!

कौन हो सकती है यह औरत?

सोचने लगे शाहंशाह!

मस्तिष्क पर बहुत जोर दिया और कई साल पीछे तक की घटनायें याद कीं, परन्तु दिमाग कुछ काम न कर सका।

उन्हें ऐसा लगा, जैसे बेगम आलिया कोई असीम शक्ति वाली पारलौकिक युवती हो, जो क्षण भर में ही शक्ति को मटियामेट कर देने की ताकत रखती हो।

शाहंशाह ने दाँत पीसा।

"चाहे जो हो!..." क्रोधित स्वर में शाहंशाह जोरों से बोल उठे—"मैं इस बेगम आलिया के सारे मनसूबे बरबाद कर दूँगा और एक दिन वही साकी बनकर मुझे शरबते-अनार पिलाती नजर आयेगी..."

"शाहेआलम, बेगम आलिया के मनसूबे बरबाद नहीं हो सकते..." कहीं से आवाज आई।

चौंककर शाहंशाह ने ऊपर देखा।

जीने पर एक स्त्री-मूर्ति खड़ी थी—रेशमी काला लबादा और बुर्का पहने।

"कौन हो तुम ?"—गरज कर पूछा शाहंशाह ने।

"बेगम आलिया ?—" वह बोली—"शाहेआलम की होने वाली साकी !..."

"क्या चाहती हो तुम ?..."

"मैं सिर्फ यह कहना चाहती हूँ कि आलीजाह रियाया पर इतना जुल्म करके खुद अपनी ताकत बरबाद कर रहे हैं—" वह रहस्यमयी तरुणी बोली—"इसका कुछ भी असर बलवाईयों पर न होगा। वे अपना काम जारी रखेंगे...शाहेआलम खुद ही सोच सकते हैं कि जो औरत शाही महल में बेखौफ होकर दाखिल हो सकती है, उसके पास कितनी ताकत होगी ?..."

"तुम अब यहाँ से भाग कर नहीं जा सकती बदकार औरत ?—" तड़प उठे शाहंशाह।

"जबान सम्हाल कर बोलो शाहे आलम !..." बेगम आलिया क्रोधित स्वर में बोली—"मेरी आंखें बन्दूक हैं, मेरा जिस्म फौलाद है, मेरी हर एक साँस जहर से बुझाई हुई तीर हैं...मेरे एक अदने इशारे से तुम बरबाद कर दिये जा सकते हो। बेहतर है कि तुम अपनी जबान पर काबू रखो और अभी कुछ दिन और शरबते अनार का मजा लो..."

"....."

कुछ न बोलकर तेजी के साथ शाहंशाह ने पास ही लटकती हुई रेशमी डोर खींच ली।

परदा हटा और सिपहसालार के साथ बहुत से हथियारबन्द सिपाही अन्दर आये।

"उसको पकड़ो !—" तेजी के साथ बोले शाहंशाह—"वह बलवाइयों की रहनुमा है। जाने न पावे..."

हाथ से उन्होंने जीने की ओर इशारा किया, जहाँ बेगम आलिया खड़ी थी।

सिपाही उस ओर लपके।

बेगम पीछे हटकर न जाने कहाँ लुप्त हो गईं।

उसी समय शाही महल में खतरे का नक्कारा बज उठा। एक भयानक कोलाहल से दीवालें गूँजने लगीं। चारों ओर भगदड़ मच गई।

शाहंशाह बेचैनी के साथ इधर से उधर टहलते रहे।

उसी समय नई साकी नज्मा ने वहाँ प्रवेश किया।

"शरबते अनार !..." शाहंशाह के मुँह से निकला।

वे आकर पलंग पर बैठ गये। चेहरा बदहवासी से भरा था ?

साकी ने प्याला भरा और शाहंशाह के होठों से लगा दिया।

कई प्याले पीने पर उनकी बेचैनी कुछ घटी।

बड़ी देर बाद सिपहसालार ने आकर कोर्निश की।

"क्या वह पकड़ी गई !—" उत्तेजित स्वर में पूछा शाहंशाह ने।

"....."

सर नीचा किए हुए खड़ा रहा सिपहसालार।

"जवाब दो बहादुरे आजम ! क्या बेगम आलिया गिरफ्तार हुई ?—"

"नहीं आलमपनाह—वह फरार हो गईं !..."

"फरार हो गई ?—" गरजकर बोले शाहंशाह—"गैरत करो ! शर्म करो ! एक अदना औरत तुम्हारे सीने पर ठोकर मार कर चली गई...डूब मरो !..."

"....."

भयभीत सिपहसालार सर झुकाये खड़ा रहा।

"आज से तुम्हारा बहादुरे आजम खिताब जब्त !...चले जाओ यहाँ से..."

कोर्निश करके सिपहसालार बाहर हो गया।

शाहंशाह ने शर्बते अनार के दो जाम और पिये।

उसी समय बाहर से ख्वाजासरा चिल्ला उठा—

"बाअदब, बामुलाहजा होशियार!...साकिये शाहंशाह होशियार!...मल्का मुअज्जमा शाहंशाह के दरेदौलत पर हाजिर हैं..."

साकी ने अपने कपड़े सम्हाल लिए और प्रवेश द्वार के पास कोर्निश की मुद्रा में खड़ी हो गई।

रेशमी पर्दा हटा और मल्का ने प्रवेश किया। शाहंशाह को झुककर आदाब बजाया उन्होंने। साकी बाहर चली गई।

"आओ मल्का!..." शाहंशाह के स्वर में उत्तेजना थी।

मल्का इसका कारण समझ गईं।

शाही महल में अभी-अभी जो कोलाहल उठ खड़ा हुआ था, उससे मल्का भी बेचैन हो उठी थीं और इसलिए इस समय शाहंशाह के पास आई थीं।

"शाहंशाह बेहद मायूस और बेसब्र नजर आ रहे हैं..." मल्का ने कहा। स्वर में सहानुभूति थी।

"बलवाइयों की खुराफात दिन ब दिन बढ़ती जा रही है मल्का! यही मेरी मायूसी की वजह है..."

"सुना, आज रात को सफ्दर शाही कैदखाने से फरार हो गया है..."

"ठीक सुना है तुमने!" शाहंशाह बोले—"सारे खुरफातों की जड़ यह बेगम आलिया हैं। यकीनन उसी ने सफ्दर को छुड़ाया है..."

"यह बेगम कौन है आलीजाह?—"

"परिन्दा है शैतान! हर जगह पहुँच जाती है—" शाहंशाह ने कहा—"अभी यहाँ भी आई थी, काले लबादे से सारा बदन और मुँह ढँका हुआ था..."

"खुदा करे, ये कहर के दिन खुश व खुर्रम गुजर जायँ—" मल्का ने ठंढी साँस ली।

"मल्का! चन्द दिनों में ही, मैं इन नाकार बलवाइयों को इस दुनियाँ से मिटा दूँगा..." दृढ़ आवाज से बोले शाहंशाह।

"जान से अजीज सुल्तान!—" नम्र स्वर से मल्का ने कहा—"अगर हुक्म हो तो एक बात अर्ज करूँ..."

"कहो!..."

"मेरे ख्याल से अगर शाहेआलम रियाया की माँग कबूल कर लें, तो बेहतर..." हिचकिचाते हुए मल्का ने कहा।

"मल्का..." आँखें लाल-लाल कर बोले शाहंशाह—"तुम ऐसी बातें कहती हो?... तुम?...ख्वाब में भी मैंने यह नहीं सोचा था कि तुम्हारे दिल में बेवकूफ रियाया के लिए ऐसे ख्यालात हैं...."

"मैंने तो आफतों का ख्याल कर, यह अर्ज किया था आलीजाह! आज कल होने वाली खुराफातों ने मुझे फिक्रमन्द बना दिया है..."

"आइन्दा मैं तुम्हारे मुँह से ऐसी बात सुनना कभी पसन्द न करूँगा—" क्रोध से बोले शाहंशाह—"वर्ना मुझे शक हो जायगा कि तुम भी बगावत कर रही हो..."

"माफी चाहती हूँ आलीजाह!..."

"तुम समझती हो कि बलवाई हमेशा इसी तरह खुराफात करते रहेंगे?—" शाहंशाह बोले—"जिस दिन शाहजादा आ जायगा, उसी दिन सारे खुराफात बन्द हो जायँगे। तुम तो जानती ही हो कि रियाया शाहजादे को कितनी चाहती है और खुद सफ्दर तो उसका जिगरी दोस्त ही है..."

"बजा है आलीजाह!—" मल्का बोलीं—"शाहजादे की कोई खबर अब तक न मिली..."

"सरहद का काम खत्म करके वह जल्दी ही आ जायगा..." शाहंशाह ने कहा।

"मगर उनके खैरियत की भी कोई खबर अब तक हासिल न हुई शाहेआलम ?—"

शाहंशाह का पुराना संदेह फिर भड़क उठा।

उन्होंने शाहजादे और मल्का का सम्बन्ध कभी पवित्र नहीं समझा था।

शाहजादा जवान था और मल्का भी यद्यपि उम्र में शाहजादे से बहुत बड़ी थीं, मगर सौन्दर्यमयी थीं और अब भी जवानी का आखिरी आलम उनके शरीर पर था—

ऐसी दशा में शाहजादा और मल्का का इस तरह 'दूध-पानी होना' शाहंशाह के लिए संदेह का कारण था और वे अपने इस सन्देह को स्पष्ट शब्दों में मल्का के आगे व्यक्त भी कर चुके थे—

मगर मल्का के पास औरत का दिल था और उस दिल में अगम मातृत्व निहित था। अपनी कोई सन्तान न होने के कारण मल्का का सारा वात्सल्य शाहजादा ले चुका था—

मगर, दिन रात जवानी और शराब से खेलने वाले शाहंशाह के लिए यह एक अगम पहेली थी, जिसे वे कभी न समझ सकते थे।

"मल्का !"—रुक्ष स्वर में बोले शाहंशाह—"शाहजादा तुम्हारे पास नहीं है, मगर मैं तो हूँ। क्या तुम्हारे नजदीक शाहजादे की मुहब्बत इतनी वकत रखती है ?"

"आलीजाह !—" मल्का शान्त स्वर में बोलीं—"एक औरत के लिए बेटे का प्यार भी इतना ही जरूरी है, जितना कि खाविन्द का..."

"मैं, समझता हूँ मल्का !...दुनिया को समझते-समझते बूढ़ा हो चला हूँ—" शाहंशाह बोले—"रशीद अब यतीम बच्चा नहीं रहा। वह तन्दुरुस्त हाथ पैरों वाला हो गया है। क्या अब भी उसे तुम्हारी

उतनी ही जरूरत है, जितनी तब थी जब वह रोता हुआ जमीन पर लोटा करता था ?...."

"बच्चे को माँ की हमेशा जरूरत रहती है आलमपनाह !..." शाहंशाह के व्यंग को समझते हुए भी मल्का शान्त बनी रहीं—"क्या आप नहीं जानते कि यहाँ रहने पर बगैर मेरे खिलाये वह खाता भी नहीं था..."

"दुनिया कभी ऐसी मुहब्बत को अच्छी नजर से नहीं देख सकती मल्का !..."

"....."

चुप रह गईं मल्का।

"और मैं भी उसी दुनिया का एक इन्सान हूँ—"बोले शाहंशाह—"मेरे दिल में भी रश्क है, हशद है, डाह है..."

"....."

"एक दिन यह हशद मेरे बरदाश्त के बाहर हो जायगी....बेहतर है कि तुम अपने को अभी से सम्हाल लो..."

क्रूर दृष्टि से देखा शाहंशाह ने मल्का की ओर।

"कोशिश करूँगी शाहेआलम !..."मल्का ने कहा।

"सिर्फ कोशिश ही नहीं, अमल भी करना होगा मल्का !" शाहंशाह बोले—"तुम्हें कोई हक नहीं कि रियाया के झगड़ों से बेचैन शाहंशाह के दिल को, अपनी कारगुजारियों से और भी परेशान करो..."

"अगर शाहंशाह इन सयासी खुराफातों का निपटारा चाहते हैं—" मल्का बोलीं—"तो मेरी राय में रशीद को जल्द से जल्द बुला लेना चाहिए..."

"शाहजादा रशीद को जल्द से जल्द यहाँ देखना मैं भी पसन्द करूँगा...मगर वह जिस खौफनाक-काम से सरहद गया हुआ है, उसका भी खत्म होना निहायत जरूरी है...और मैं वहाँ का काम अधूरा छोड़कर उसे वापस बुलाना नहीं चाहता..."

शाहंशाह रूखी आवाज में बोले।

"क्या शाहजादे की मदद के लिए कुछ फौज सरहद की ओर भेज देना मुनासिब नहीं होगा ?..." मल्का ने प्रश्न किया।

उनके इन प्रश्नों से शाहंशाह का सन्देह जड़ पकड़ रहा था।

उन्होंने कहा—"नहीं !...सरहद पर फौज नहीं भेजी जा सकती... फौज का सबसे जरूरी काम, शाहीमहल की हिफाजत करना है..."

मल्का उठ खड़ी हुईं। कोर्निश करके बाहर चली गईं।

साकी पुनः आ गई। शरबते अनार का दौर चल पड़ा। नई साकी की जवानी ने शाहंशाह को नवीन चेतना प्रदान की।

● ●

ताड़ और खजूर के दस-बीस पेड़—
छोटे-छोटे बरगद के चार वृक्ष —
पास ही में पानी का एक सोता,
और दूर-दूर तक फैला हुआ बालू का सागर।

रेगिस्तान के मध्य एक छोटा सा नखलिस्तान था वह ! शहर की बस्ती से बहुत दूर, मानवीय नेत्रों से परे, निर्जन नखलिस्तान आज आबाद हो गया।

जहाँ कई सालों आदमी के पैर न पड़े थे, वहीं आज शाहजादा और शम्सुल बैठे थे, प्रेमालाप करते हुए।

रेगिस्तान की गर्म हवा कभी-कभी उन्हें यह याद दिला देती थी कि अभी भी वे जन्नत तक नहीं पहुँचे हैं।

फिर भी वह एकान्त स्थान था—शहर जोमन वहाँ से कई कोस पर था।

शाहजादा की ऊँटगाड़ी वहाँ से कई सौ गज पीछे, ओट में खड़ी थी।

"सब कुछ भूल जाती हूँ शाहजादे!" शम्शुल कह रही थी—"जब आप मेरे पास होते हैं, तो मैं खुद अपने को भी भूल जाती हूँ..."

"चन्दरोज और सब्र करो बानू!" शाहजादा बोला—"मैं कल सुबह यहाँ से रवाना हो जाऊँगा और भाईजान की इजाजत हासिल करके बहुत जल्द तुम्हें लेने आऊँगा..."

"कितना मीठा ख्वाब है यह आपका!...काश, वह दिन देख सकती—"

शम्सुल के स्वर में उत्पीड़न था।

"शम्सुल!..." शाहजादे ने शम्सुल का हाथ पकड़ लिया और उसे प्रेमपूर्वक दबाया।

शम्सुल विभोर हो उठी।

"चाहती हूँ, इसी तरह आप मेरा हाथ पकड़ कर बैठे रहें, कयामत तक..." शम्सुल बोली।

"तुम आज कैसी बातें सोच रही हो शम्सुल?"—शाहजादे को शम्सुल की भंगिमा देखकर आश्चर्य हुआ।

"आपकी जुदाई का ख्याल मुझे तकलीफ दे रहा है शाहजादे!..."

"आज तुम बहुत संजीदा हो शम्सुल!—"

"सोच रही हूँ" शम्सुल बोली—"शायद इस तरह बीरान में मिलना फिर कभी नसीब न हो ...खुदा जानता है, इस वक्त मेरा दिल न जाने क्यों इतना परेशान हो उठा..."

"इस्तकलाल से अपना दिल सम्हालो बानू!...यह जुदाई चन्दरोज के लिये है—"

"क्या आप फिर लौटेंगे शाहजादे?—" पूछा शम्सुल ने।

"जरूर!..."

"क्या इस बीरान चमन में फिर गुल खिलेंगे ?... क्या यह जमीन हमारी मुहब्बत की बारिश से फिर सरसब्ज होगी ?..."

"क्या तुम्हें बहुत दर्द हो रहा है सम्सुल ?—"

"बहुत-बहुत !—" शम्सुल बोली—"इतना दर्द कि आपके कदमो पर जाँ निसारी करने की ख्वाहिश होती है..."

"तुम्हारा मिजाज इस वक्त ठीक नहीं है शम्सुल !..." शाहजादे ने कहा।

वास्तव में आज शम्सुल वेदनाच्छन्न दिखाई पड़ती थी। उसके मुँह से अनजाने ही अव्यवस्थित वाक्य निकल रहे थे।

कारण कुछ भी नहीं था—न जाने क्या था ?

"मेरी सारी दौलत लूट कर आप चले जायँगे कल, मगर अपनी कौन-सी चीज आप छोड़े जा रहे हैं मेरे पास..." शम्सुल ने कहा।

"अपनी याद !—" शाहजादे ने कहा।

"किसी की याद तो और दर्द पैदा करती है शाहजादे ! बेहतर हो तुम अपनी यह तकलीफदेह चीज भी मेरे पास से लेते जाओ..."

"याद, दर्द भी पैदा करती है और राहत भी देती है शम्सुल..." शाहजादे ने कहा।

"जिन्दगी के इतने साल बेकरारी और तकलीफ में गुजर गये...अब राहत पाने की उम्मीद नहीं रही शाहजादे !..."

"बेहतर हो कि बातचीत का यह सिलसिला यहीं खतम कर दिया जाय—" शाहजादा बोला—"तुम्हारी संजीदगी बढ़ती जा रही है..."

"अब शाम भी होना चाहती है शाहजादे ! शायद अब जुदाई का वक्त नजदीक है—"

उस समय सूर्य डूबने-डूबने हो रहा था।

"शम्सुल !..."

"कहिये !...."

"तुम अपना वही गाना एक बार फिर सुना दो...सुनने का जी चाहता है..." शाहजादा बोला।

"अच्छी बात है !"

थोड़ी देर तक शम्सुल चुप रही—फिर उसने दर्द भरे स्वर में गाया—

दिल की दुनिया में बसाया था जिसे
और आँखों में चुराया था जिसे

आज शम्सुल के गले में रोज से ज्यादा दर्द था—स्वर में आशातीत कम्पन था।

"अब तो चलना चाहिये ! अँधेरा छा रहा है..." गाना समाप्त होने पर बोला शाहजादा।

"अँधेरे से डर गये सनम ?—"फीकी हँसी हँसकर कहा शम्सुल ने—"थोड़ी देर और बैठो...जिन्दगी के ये कीमती लम्हे बार-बार नहीं मिलेंगे..."

चुपचाप दोनों बड़ी देर तक बैठे रहे।

चारों आँखें आपस में मिली थीं और तब तक मिली रहीं, जब तक कि अन्धकार के कारण एक दूसरे की पुतलियाँ देखना असंभव न हो गया।

"चलो शम्सुल ! अँधेरा बढ़ रहा है..."

"चलने का जी नहीं चाहता शाहजादे !"

"तुम्हारी माँ तुम्हारा इन्तजार कर रही होंगी..." शाहजादे ने कहा।

अब शम्सुल के ज्ञानतन्तु लौटे। वह खड़ी हुई।

ऊँटगाड़ी पर आकर दोनों बैठ गये। गाड़ी चल पड़ी।

उस समय गाढ़े अन्धकार को चीरकर धीरे-धीरे चन्द्रदेव उदय हो रहे थे।

गाड़ी चलती जा रही थी। दोनों चुप थे।

दो-तीन कोस का रास्ता निस्तब्धता में ही कट गया।

"गाड़ी यहीं रुकवा दीजिये !—" शम्सुल ने कहा।

"क्यों ?" पूछा शाहजादे ने।

"मैं यहीं से चली जाऊँगी। यहाँ से मेरा गाँव दो ही मील पर है..." शम्सुल बोली।

"मैं तुम्हारे गाँव तक पहुँचा दूँगा..."

"गाड़ी घूमकर जायगी, इसमें काफी देर लगेगी...मैं यहाँ से सीधे अपने गाँव पहुँच जाऊँगी, थोड़ी ही देर में..."

"शम्सुल ! यह रेगिस्तान है—" शाहजादे ने कहा—"अगर जरा भी रास्ता भूली तो रातभर तक भटकती रहोगी..."

"चाँदनी रात है; मैं भूल न सकूंगी...इन्हीं रेगिस्तानों में तो जिन्दगी कटी है।"

शम्सुल ने कहा।

आतुरता से शाहजादे ने शम्सुल का हाथ पकड़ लिया और उसे होठों तक ले गया।

गाड़ी रुकी—शम्सुल उतर पड़ी।

शाहजादा चला गया। शम्सुल भी आगे बढ़ती ही रही।

शम्सुल का अनुमान था कि उसका गाँव कोस भर पर ही होगा, मगर बहुत दूर आने पर भी उसे सिवा रेगिस्तान के और कुछ न मिला।

अन्त में उसे ज्ञात हुआ कि वह रास्ता भूल गई है।

आसन्न भय से वह काँप उठी।

ऊपर चाँद हँस रहा था, उसका वैकल्य देखकर।

बहुत देर तक शम्सुल वहीं पत्थर-सी खड़ी रही।

फि उसने चलना प्रारम्भ कर दिया। अपने को भाग्य के सहारे छोड़ दिया।

पैरों से बोली—"ले चलो, जहाँ तुम्हारा जी चाहे..."

धीरे-धीरे पैर थकते जा रहे थे।

आगे चलना उनके लिये घातक था।

थक गई थी शम्सुल।

चमकते हुए रेगिस्तान पर हसरतभरी दृष्टि डाली उसने और अपने को कोसने लगी।

क्यों उसने शाहजादे का कहना न माना ?

बहुत देर तक दुविधा से भरी हुई वह उसी स्थान पर खड़ी रही।

एकाएक उसके कानों में दूर से आनेवाली भद्-भद् की आवाज आई। रेगिस्तान पर लोटती हुई चाँदनी में उसने देखा, दस-पन्द्रह ऊँट भागते हुए उसी ओर को आ रहे थे।

न जाने क्यों शम्सुल का हृदय आतंकित हो उठा।

उसने देखा—हर ऊँट पर दो-दो सवार हैं। न जाने कौन हैं वे लोग ?

शम्सुल ने अपने को उन सवारों की दृष्टि से छिपाना चाहा। मगर दूर-दूर तक छिपने के लिए कोई स्थान भी नहीं था। चारो ओर बालू का मैदान था।

भय ने शम्सुल पर अधिकार कर लिया। वह अपने गाँव में औरतों का रोजगार करने वाले रेगिस्तानी डाकुओं की बात सुन चुकी थी।

वह बलुकामयी भूमि पर गिरकर विपट गई।

सवार आ गये। दो ऊँट आगे निकल गये थे, मगर तीसरे सवार की दृष्टि शम्सुल पर पड़ ही गई।

"ठहरो !..." उसने सबको आज्ञा दी।

ऊँट रुक गये। सवार उतर पड़े। उनकी संख्या चालीस के लगभग थी। चारों ओर से शम्सुल को घेर लिया उन्होंने।

"उठो !..." सरदार ने कठोर स्वर में शम्सुल को आज्ञा दी और उसका हाथ पकड़कर बेदर्दी के साथ ऊपर उठाया।

सवारों की दृष्टि शम्सुल के अगम सौंदर्य पर पड़ी, जो चाँदनी में और भी मादक हो उठा था !

"हमारी आज की मुहिम (यात्रा) कामयाब रही दोस्तों !—" सरदार ने कहा—"ज्यादा दूर न जाकर यहीं शिकार मिल गया..."

"शिकार तो निहायत लाजवाब है सरदार !..." एक ने कहा।

"तुम देखो !—" सरदार बोला—"आस्मान का वह चाँद ज्यादा खूबसूरत है या रेगिस्तान का यह चाँद ?"

"रेगिस्तान का चाँद तारीफ के काबिल है सरदार !—" पहले ने कहा।

"ले चलो इसे !..." सरदार ने आज्ञा दी।

शम्सुल की मुश्कें बाँध कर उसे सरदार के ऊँट पर बिठा दिया गया। सब ऊँट दौड़ते हुए आगे बढ़ चले।

उस समय दो पहर रात जा चुकी थी।

गाँव की झोपड़ी में बैठी हुई अन्धी बुढ़िया शम्सुल के आने की प्रतीक्षा कर रही थी इतनी देर हो जाने से उसकी आशंका बढ़ती जा रही थी।

परन्तु आँखों के बिना वह निरीह बुढ़िया कर ही क्या सकती थी।

दरवाजे पर खटपट की आवाज हुई।

जान गई बुढ़िया कि शम्सुल आ गई है।

पूछा—"कौन ?...शम्सुल ?..."

"नहीं ! मैं हूँ चाची !—" किसी मर्द की आवाज थी।

"कौन !...नसीर बेटा ?"

"हाँ चाची !...क्या शम्सुल अब तक नहीं आई ?—" बुढ़िया के पास बैठते हुए पूछा नसीर ने।

"अभी तक न आई बेटा !—" बुढ़िया करुण स्वर से बोली—"जैसे यह छोकरी मेरी जान ही लेकर रहेगी..."

"वह आती ही होगी चाची ! शहजादे साहब के साथ होगी।"

यद्यपि नसीर ने यह कह तो दिया, मगर उसका भी हृदय शम्सुल के लिए आशंकापूर्ण हो उठा था।

वह बुढ़िया के पैर दबाने लगा और अनेकानेक बातों से उसका दिल बहलाने लगा, मगर स्वयं उसका भी हृदय उद्विग्न था।

आधी रात बीत गई—सबेरा होने को आया।

मगर शम्सुल न आई, बुढ़िया रोने लगी।

"मैं सुबह सराय में जाकर शाहजादे से दरियाफ्त करूँगा चाची! जरूर वह उन्हीं के पास गई है..." कहा नसीर ने।

सुबह हुई। दौड़ा-दौड़ा नसीर जोमन की सराय में गया। शाहजादे का काफिला घण्टों पहले समरकन्द को प्रस्थान कर चुका था।

जब वह निराश लौटा, तो बुढ़िया ने पूछा—"मिली वह नसीर?"

"नहीं चाची!—" डूबते स्वर में बोला वह—"मालूम होता है, शाहजादा उसे साथ ले गया..."

"शाहजादे ने मुझे उजाड़ दिया बेटा!...." बुढ़िया फूट फूटकर रो पड़ी।

"मैं शाहजादे को कभी माफ नहीं करूँगा चाची!—" बोला नसीर—"जाने दो, बेटी गई मगर बेटा नसीर अब भी तुम्हारे पास है... मेरे रहते तुम्हें कोई तकलीफ न होगी...चन्द रोज बाद में शम्सुल का पता लगाने जाऊँगा..."

● ●

शाहजादे का वापस आना सुनकर शाहंशाह तातार को अधिक प्रसन्नता न हुई। कदाचित् मल्का और शाहजादे की घनिष्टता ने उनके सन्देह-स्वप्न को जाग्रत कर दिया था।

शाहंशाह ने सर उठाया।

वजीर खड़ा था—सम्मान प्रदर्शित करते हुए।

"रशीद का काफिला कहाँ तक आया है वजीर?—" पूछा शाहंशाह ने।

"समरकन्द की सरहद तक आलीजाह !..." वजीर ने उत्तर दिया।

"तुम आगे जाकर उससे मिलो और उसे सीधे मेरे पास ले आओ—" शाहंशाह ने आज्ञा दी।

वजीर कोर्निश करके चला गया।

शाहंशाह नित्य की भाँति साकी और शरबते अनार में गर्क हो गये।

आज दरबार भी न हुआ।

दिन भर शाहंशाह ख्वाबगाह में ही साकी के साथ जिस रहे।

शाहजादे का आना सुनकर सबसे अधिक प्रसन्नता मल्का को हुई। उनका चेहरा खुशी से दमक उठा। छातियाँ रह-रहकर दुग्ध-आलोड़ित करने लगीं, जैसे अपना ही बेटा आ रहा हो, मृत्यु मुख से बचकर।

मल्का और शाहंशाह से दिन भर में एक बार भी भेंट न हुई मगर मल्का के प्रसन्नता की बात शाहंशाह भली प्रकार जानते थे।

उनके सन्देह का शैतान कह रहा था कि मल्का आज दुनिया में सबसे अधिक प्रसन्न है।

सन्ध्या होने से कुछ पहले ही ख्वाजासरा की पुकार गूँज उठी।

"साकिये शाहंशाह, होशियार...! शाहजादये आलम तशरीफ लाते हैं..."

साकी अदब के साथ दरवाजे पर कोर्निश करती हुई खड़ी हो गई।

परदा हटा और शाहजादे रशीद ने झुककर शाहंशाह को कोर्निश की।

शाहंशाह ने उठकर शाहजादे को कलेजे से लगा लिया।

कुछ भी हो वह उनका सगा भाई था—और उसके लिए उनके हृदय में भाई का प्रेम भी था।

"खैरियत तो है शाहजादे ?" पूछा शाहंशाह ने।

"दुआ है किब्लये आलम !..." शाहजादे ने कहा।

दोनों भाई आकर पलंग पर बैठ गये।

"काशगर में अमन कायम हो गया ?..."

"बिल्कुल अमन है अब आलीजाह !...." शाहजादे ने कहा और उसने शुरू से आखिर तक सारी कहानी सुना दी।

"तुम काबिले तारीफ हो जीनते-सल्तनत !...तुमने एक हैरतअंगेज काम कर दिखाया है..."

"जिल्लेसुब्हानी। वह काम मेरे लिए निहायत आसान था..." बोला शाहजादा।

"दारुल सल्तनत में इधर जो वारदातें हुई हैं, वह तुम्हें न मालूम होंगी—" शाहंशाह ने कहा—"यहाँ भी खौफनाक बलवा होने में अब ज्यादा देर नहीं है। हम यह चाहते थे कि जल्द से जल्द यहाँ आ जाओ !..."

"अब तो मैं आ ही गया हूँ किब्लये आलम !..."

"इस वक्त लम्बे सफर की थकान से तुम थक गये होगे—" बोले शाहंशाह—"कुछ देर जाकर आराम करो—फिर वजीर तुम्हें सारी बातें बतायेंगे..."

"जो हुक्म..."

शाहजादा उठा। बाहर निकलकर वह सीधे मल्का के प्रकोष्ठ की ओर बढ़ा।

मल्का उसकी प्रतीक्षा कर रही थीं।

ज्योंही उनकी दृष्टि कोर्निश करते हुए शाहजादे पर पड़ी, वे, उसकी ओर लपकीं।

दूसरे ही क्षण लता की तरह एक दूसरे से लिपटे थे वे दोनों।

"रशीद !...मेरे जिगर !..." प्रेम विह्वल हो मल्का बोलीं !

"भाभीजान !...मल्का !...मेरी माँ !..."

शाहजादा क्या कहे, यह सोच ही न सका वह।

बड़ी देर बाद वे दोनों अलग हुए।

मल्का पलंग पर आ बैठीं—शाहजादा उनके बगल में आसीन हुआ।

"रेगिस्तानी हवा ने तुम्हारा जिस्म सुखा डाला है रशीद!" बोलीं मल्का।

"मल्का की गोद में फिर हरा हो जायगा—"

"आने में बहुत देर कर दी तुमने शाहजादे?"—पूछा मल्का ने।

"रेगिस्तान में खिले हुए एक फूल ने मेरा दामन पकड़ लिया था भाभी जान!'

"फूल!...." मल्का ने देखा शाहजादे का चेहरा शर्मीला हो रहा था—"दामन तो काँटे पकड़ते हैं रशीद! फूल तो बेगुनाह होते हैं..."

"वह फूल मुझे बेहद पसन्द आया मल्का!"—कहा शाहजादे ने।

शाहजादे का संकेत मल्का समझ रही थीं।

वे बोलीं—"मगर मेरे रशीद के लिए तो किसी शाही चमन का गुल चाहिये, रेगिस्तान का फूल नहीं..."

"अगर उस रेगिस्तानी गुल के बगैर शाहजादे की जिन्दगी मायूस हो जाय, तो?"

"अपनी मौत के बाद ही मैं शाहजादे को मायूस देखना पसन्द करूँगी—" मल्का ने कहा—"मेरे रहते शाहजादे को अपनी पसन्द का फूल चूनने की आजादी है..."

"मगर भाईजान की इजाजत के बगैर..."

"मैं शाहेआलम को समझाऊंगी!..." मल्का बोलीं।

और तब रसीद ने शम्सुल के विषय की सारी बातें मल्का को बता दीं। मल्का ने उसे धीरज रखने को कहा।

"अभी तक तुमने खाना न खाया होगा शाहजादे—" मल्का बोलीं—"मैं भी बातों में भूल ही गई थी..."

खाना आया।

मल्का जानती थीं कि रशीद अपने हाथों से कभी न खायेगा, अतः उन्होंने अपने हाथों से खिलाना चाहा।

"पहला निवाला तुम अपने मुंह में रखो मामी!"—शाहजादे ने कहा।

"मुझे भूख नहीं है शाहजादे!..."

"तब मैं भी न खाऊंगा..." शाहजादे ने हठ किया।

लाचार मल्का को खाना पड़ा।

दोनों खाने लगे।

"सुनता हूँ, यहाँ भी बलवाइयों ने खुराफात मचा रखी है..." शाहजादे ने कहा।

"जब रियाया जुल्म से बेकरार हो उठती है, तो सिवा बलवा करने के और वह कर ही क्या सकती है?"—मल्का बोलीं।

"आप ठीक कहती हैं मल्का!"—शाहजादे ने कहा—"भाईजान अपनी रफ्तार जब तक राहेरास्त पर नहीं लाते तब तक एक न एक जगह बलवा होता ही रहेगा...मुझे खौफ है कि किसी दिन शाही खानदान की इज्जत खाक में न मिल जाय..."

"तुम ठीक कहते हो शाहजादे!"—मल्का ने कहा—"रियाया ताकत से नहीं, रहमदिली से ही काबू में आ सकती है..."

शाहजादा खाना खा चुका था, उठता हुआ बोला—"इजाजत हो तो वजीरेआजम से मिलकर शहर का हाल दरियाफ्त करूं?..."

"जाओ..." कहा मल्का ने।

शाहजादा पहुँचा, तो वजीर ने उठकर कोर्निश की।

दोनों उचित स्थान पर बैठे।

"शाहजादे आलम की गैरमौजूदगी में यहाँ की हालत निहायत नाजुक हो गई है"—वजीर ने बात प्रारम्भ की।

"कुछ बातें मैं सुन चुका हूँ वजीरे आजम!"—शाहजादा बोला—"आप खुलासा बयान कीजिये।"

वजीर धीरे-धीरे सब बातें शाहजादे को बताने लगा।

सफ्दर का दरबार में आना, रियाया की माँग पेश करना, उसका गिरफ्तार होना, फाँसी की सजा मिलना, उसका कैदखाने से भागना, शाहंशाह के नये कानूनों की मुनादी होना, बलवाइयों का नेतृत्व करना...

सारी बातें धैर्यपूर्वक सुनी शाहजादे ने।

"सफ्दर मेरा दोस्त है वजीरे आजम!"—अन्त में बोला वह—"मैं होता तो उसकी गिरफ्तारी की नौबत ही न आती..."

"अब शाहजादा अमन कायम कर लेंगे, ऐसी उम्मीद शाहंशाह को है और हमें भी..." वजीर बोला।

"सिर्फ सफ्दर की रहनुमाई की बात होती, तो मैं बेशक कामयाब रहता"—शाहजादे ने कहा—"मगर इस खौफनाक औरत, बेगम आलिया की कोई दवा मेरे पास नहीं...और आप के खुफियों का अन्दाज है कि बेगम ही उनकी सरपरस्त हैं..."

"हाँ हजूरे आलम!—" वजीर ने कहा—"हमें भी नहीं मालूम कि यह बेगम हैं कौन?"

"मैं कोशिश करूँगा—" शाहजादा बोला—"मगर कामयाबी में शक है...सफ्दर को पकड़ने के लिए खुफिया दौड़ पड़े हैं, इसलिए वह निहायत पोशीदा तरीके से रहता होगा...ऐसी हालत में उससे मुलाकात भी नहीं हो सकती—"

"क्या शाहजादे आलम सफ्दर से मुलाकात करना चाहते हैं?—" पूछा वजीर ने।

"दुरुस्त है!—" बोला शाहजादा—"मेरा यकीन है कि सफ्दर मुझे अपने सामने पाकर अपनी खुराफात बन्द कर देगा..."

"मगर बेगम आलिया..."

"ताज्जुब!... यह नाम मुझे बेहद ताज्जुब में डाल देता है..."

"....."

वजीर चुपचाप शाहजादे की ओर देख रहा था।

"वजीरे आजम !...."

"इरशाद आलमपनाह !..." वजीर नम्र स्वर में बोला।

"आप बुजुर्ग हैं—" कहने लगा शाहजादा—"आपने दुनियाँ के दौरान में कुदरत के बहुत से तमाशे देखे हैं...आपका तजुर्बा नेहायत बेशकीमती है...?—"

"हजूर का मकसद ?—"

"रियाया के बलवे का सबब क्या है, क्या यह आप पर जाहिर नहीं ?...क्या आप भी नहीं जानते कि शाही ताकत सिर्फ जान ले सकती है मगर बलवाइयों के दिल की आग नहीं बुझा सकती ?"

"बजा फरमाते हैं हजूरे आलम !—"

"रियाया को इस तरह सताने से क्या फायदा—" कहने लगा शाहजादा—"क्यों नहीं रैयत की माँगे कबूल कर ली जातीं ?"

"शाहेआलम का हुक्म आलीजाह !..." वजीर दबी जबान से बोला।

"शाहेआलम का हुक्म ही सब कुछ है ?—और रियाया का तड़पना कुछ भी नहीं ?...यह कैसी बात है मेरे बुजुर्ग..."

"शाही खानदान का नमक मेरे रग-रग में भरा है आलीजाह !—" वजीर बोला—"हुक्म देना शाहंशाह सलामत का काम है और हुकुम बजाना मेरा फर्ज !"

"क्या आपकी बुजुर्ग आँखें आने वाली आफत नहीं देख रही हैं—"

"देख रही हैं आलमपनाह ! फिर भी मैं खामोश हूँ और मौत तक खामोश रहूँगा..." वजीर ने कहा।

"यह बेगम आलिया !—" शाहजादा बोला—"यह हैरत अंगेज औरत !...जो बलवाइयों की रहनुमाई कर रही है, जो शाही महल में घुसकर बेदाग निकल जा सकती है, जो कैदखाने से सफदर को निकाल ले जा सकती है...उसकी ताकत के आगे, मेरा दिल कह रहा है कि

शाही ताकत फीकी पड़ जायगी...फिर भी कोशिश करना हमारा फर्ज है..."

उठ खड़ा हुआ शाहजादा।

वजीर ने कोर्निश की। शाहजादा चला गया।

इस बार वह अपने प्रकोष्ठ में आया।

वह अत्यन्त क्लान्त हो रहा था, यात्रा के कष्टों के कारण। और क्रान्ति की बातों ने उसका मस्तिष्क भी विकृत कर दिया था।

इस समय उसे विश्राम की आवश्यकता थी।

पलंग पर लेटकर वह निद्रा का आवाहन करने लगा। उस समय रात्रि का अन्धकार शाही महल के चारों ओर नृत्य कर रहा था।

एकाएक प्रकोष्ठ के एक दरवाजे पर आवाज हुई। कोई बाहर से उसे सतर्कतापूर्वक खटखटा रहा था।

शाहजादा आश्चर्य से उठ बैठा।

वह गुप्त द्वार था और इधर सालों से बन्द पड़ा था।

पुनः खट खटाहट हुई और शाहजादे ने आगे बढ़कर दरवाजा खोला।

रेशमी काले लबादे से ढंकी हुई एक मूर्ति कमरे के अन्दर आ रही।

शाहजादा चौंक पड़ा। वजीर ने बेगम आलिया का जो वर्णन किया था, वह मूर्ति बिलकुल वैसी ही थी।

"कौन ?...बेगम आलिया ?...." पूछा शाहजादे ने।

"नहीं ! मैं हूँ दोस्त !..." किसी पुरुष की आवाज थी।

"सफ्दर ! तुम...यहाँ ?—" शाहजादा बोला—"क्या तुम्हीं बेगम आलिया हो ?"

आने वाला सफ्दर था। शाहजादे का अन्तरंग मित्र !

"नहीं दोस्त ?—" सफ्दर शाहजादे के पास बैठता हुआ बोला—"अपने को छिपाने के लिये कपड़े पहन रखा है..."

"तुम यहाँ कैसे आ पहुँचे ?..." शाहजादे ने पूछा।

"अभी बेगम आलिया ने मुझे खबर दी कि तुम मुझसे मिलने को बेताब हो !—" सफ्दर बोला।

"यह उन्हें कैसे मालूम हुआ ?"—पूछा शाहजादे ने।

"चाहे जैसे मालूम हुआ हो ?"—बोला सफ्दर—"मगर तुम वजीरे आजम से ऐसी ही बात कर रहे थे..."

"सख्त ताज्जुब है ?—" शाहजादे ने कहा—"बेगम आलिया हवा भी बन सकती हैं क्या ?..."

"वही मुझे यहाँ तक पहुँचा गई हैं !" सफ्दर ने कहा।

शाहजादा आँखों में आश्चर्य भरे बैठा रहा। सोच रहा था वह, बेगम आलिया की बातें। कितनी आश्चर्यजनक है यह बेगम ? शाहजादे और वजीर में जो बातें हुई, वह उन्हें कैसे जान सकी ?..."

"सफ्दर !..." एकाएक पुकारा शाहजादे ने।

"कहो दोस्त !—" सफ्दर बोला।

"तुम बलवाई हो...तुम्हें मौत की सजा मिल चुकी है...तुम फरार हो—और तुम यह भी जानते हो कि तुम शाही महल में हो—" शाहजादे ने कहा—"अगर मैं तुम्हें कैद करना चाहूँ, तो तुम क्या करोगे ?..."

"शाहजादे !..." बोला सफ्दर—"जानता हूँ मैं, कि तुम सब कुछ कर सकते, मगर मुझे कैद करके अपनी रियाया को बददुआ नहीं लेना चाहते...यह भी जानता हूँ कि शाहजादे रशीद के दिल में सिर्फ शाहे-आलम की मुहब्बत ही नहीं, अपनी रियाया के लिए भी मुहब्बत है..."

"अगर तुम्हारा ख्याल गलत हो—" बोला शाहजादा—"और मैं तुम्हें अभी गिरफ्तार करना चाहूँ तो ?"

"तो मेरे गिरफ्तार होने के पहले ही, तुम्हारी मौत होगी शाहजादे !—" दृढ़ स्वर में बोला सफ्दर—"बेकस रियाया के लिए, एक जुल्मी शाहंशाह के फरमाबरदार भाई की जान से, एक बलवाई की

जान ज्यादा कीमत रखती है... शाहजादे ! क्या तुम सोचते हो कि बेगम आलिया जिसकी तरफ हैं, उसके बदन पर कोई हाथ रख सकता है ?"

"मैं शरमिन्दा हुआ सफ्दर !" शाहजादा बोला—"मैं तहेदिल से रियाया का तरफदार हूँ...मगर तुम जानते हो कि भाईजान मेरे सरपरस्त हैं..."

"तुम्हारी हमदर्दी के लिये शुक्रिया दोस्त !"—सफ्दर ने कहा—"मगर जुल्मी भाई के हुक्म से बेकसों का गला काटने के लिये तुम्हारी तारीफ नहीं कर सकता मैं शाहजादे !...कम से कम काशगर में तो तुमने यही किया है..."

"वहाँ कोई सयासी बलवा नहीं था सफ्दर ! वह तो डाकुओं के एक गिरोह की कारगुजारी थी..." शाहजादा बोला।

"अब तुम्हारा क्या इरादा है शाहजादे ?... यहाँ आकर तुम हमारी तरफदारी करोगे या शाहेआलम की ?..."

"सल्तनत शाहेआलम की है और मैं भी उन्हीं का हूँ..." शाहजादे ने कहा।

सफ्दर क्रोधित हो उठा, अपने मित्र की बात सुनकर।

"बको मत !...मेरा गुस्सा मत उभाड़ो रशीद !—"बोला वह—"सल्तनत रियाया की है और तुम उसके टुकड़ों पर पलने वाले एक अदना इन्सान हो..."

"बहुत तैश में आ गये हो सफ्दर !—" शान्त स्वर में शाहजादा बोला—"जरा मेरी मजबूरियों पर गौर करो..."

"तुम बुजदिल हो शाहजादे !—" सफ्दर ने कहा—"शाहंशाह और तुम भाई हो... सल्तनत तुम दोनों की है, एक की नहीं...अगर एक उसे बरबाद कर रहा है, तो दूसरा उसे बचाये, यही रियाया की ख्वाहिश है..."

"तुम शाहेआलम के साथ बगावत करने की नसीहत दे रहे

हो ?—" शाहजादा बोला—"वे मेरे बाप हैं, मल्का मेरी माँ हैं...कैसे हो सकता है यह सब ?"

"मल्का तुम्हारी ही नहीं, सारी रियाया की माँ हैं, मगर शाहेआलम न तो तुम्हारे बाप होने के काबिल हैं और न तो रियाया के..." सफ्दर ने कहा।

"मुझे सोचने के लिये कुछ वक्त चाहिए..." शाहजादा बोला!

"बेहतर है—" उठ खड़ा हुआ सफ्दर और उसी राह से बाहर चला गया।

● ●

कई दिनों तक शान्ति रही।

जैसे तूफान आने के पहले सागर गम्भीर हो उठता है।

शाहंशाह ने सोचा, काले कानूनों से बलवाई डर गये और अब वे कभी सर न उठायेंगे।

परन्तु बलवाई जिस प्रकार भयंकर गति से अस्त्र-शस्त्र इकट्ठा करके अपना संगठन कर रहे थे, वह अत्यन्त गुप्त था।

राज्य भर में चारों ओर क्रान्ति के प्रचारक, गुप्त एवं भयानक प्रचार करने में तल्लीन थे। देश के कोने-कोने से आजादी के दीवाने आकर एकत्र हो रहे थे। उन्हें उचित रीति से युद्ध-शिक्षा दी जा रही थी।

शान्ति मार्ग छोड़कर, अब वे विद्रोही प्रबल सशस्त्र क्रान्ति करना चाहते थे।

वातावरण की गम्भीरता के पीछे कैसा विकट कोलाहल अन्तर्हित है—यह शाहजादा रशीद भलीभाँति जानता था।

परन्तु आजकल तो वह अपने ही कष्ट से दुखी था।

सोते-जागते, उठते-बैठते, उसे शम्सुल का ध्यान आता था और उसका हृदय अत्यन्त चलायमान तथा बेचैन हो उठता था।

यद्यपि वह जानता था कि मल्का शाहंशाह से अवश्य उसकी सिफारिश करेंगी—मगर उसे जैसे निराशा-सी हो चली थी। इस बार उसने, शाहंशाह को अपने प्रति अत्यन्त कठोर पाया था। वे उससे उस प्यार के साथ न बोलते थे, जैसे पहले बोला करते थे।

इस परिवर्तन का कारण उसे अज्ञात था।

वह ध्यानपूर्वक देख रहा था कि शाहंशाह इधर मल्का की भी अधिकाधिक उपेक्षा करने लगे हैं।

वह सब कुछ देख सकता था, मगर मल्का की, अपने माँ की, उपेक्षा होते देखना उसे सह्य न था।

शाहंशाह के प्रति विद्वेष भावना से उसका हृदय भरा जा रहा था।

उस दिन सफ्दर ने उससे जो बातें कही थीं, वह उनसे अत्यधिक प्रभावित हुआ था।

वह शाहंशाह का भाई है।

सल्तनत पर दोनों का समान रूप से अधिकार है।

तो वह क्यों आँखें मूँदकर प्रजा पर होता हुआ अत्याचार देखा करता है? क्योंकि उसके हृदय में दलितों की करुण पुकार सुनकर संघर्ष नहीं उठता?

उठता है संघर्ष!

परन्तु संस्कार बाधक हो उठता है।

उसे बाध्य होकर अपनी विद्वेष भावना का शमन करना पड़ता है।

मगर क्या उस जैसे सहृदय व्यक्ति के लिए यही उचित है कि वह अत्याचारी शासक के पीछे कुत्ते-सा दुम हिलाता हुआ घूमा करे?

क्या वह कुत्ता है?

वह कुत्ता है...

अब तक उसने अपने आन्तरिक भावनाओं को ठोकरें मारी हैं और स्वामिभक्त कुत्ते की तरह अपने शाहंशाह का अनुगमन किया है।

कितना घृणित है वह ! कितना नीच ! कितना निकृष्ट !

सोचते-सोचते शाहजादे को स्वयं अपने ऊपर घृणा हो जाती थी।

बेचैन हो उठता था वह।

एक दिन मल्का ने उससे पूछा—

"शाहजादे !...अगर शाहेआलम और रियाया में खौफनाक जंग छिड़ जाय, तो तुम किसका साथ दोगे ?"

शाहजादे की विद्वेष भावना जाग्रत हो उठी।

उत्तेजित स्वर में बोला—"गुस्ताखी माफ हो मल्का ! मैं रियाया का साथ देना पसन्द करूंगा...गरीबों पर होता हुआ जुल्म मुझे सख्त नापसन्द है..."

"शाबास !..."

मल्का के मुख से शाबासी के शब्द सुनकर शाहजादे को प्रसन्नता हुई।

मल्का भी प्रजा का पक्ष ग्रहण करेंगी, यह वह जानता था।

उसे हर्ष हुआ, अपने तथा मल्का के भावों में समानता देखकर और लज्जा हुई अपनी आकस्मिक उत्तेजना पर।

"मैंने कोई गुस्ताखी तो नहीं की मामीजान ?—" बोला शाहजादा।

"नहीं शाहजादे ! तुमसे ऐसी उम्मीद नहीं..." मल्का ने कहा—"तुम मेरी गोद में खेले हो—मेरे बेटे हो...तुम्हारे दिल में, दिमाग में, जिस्म के रग-रग में मैंने लड़कपन से ही जो नसीहतें कूट-कूटकर भरी हैं, उनके खिलाफ तुम चल ही कैसे सकते हो ?...मेरी दिली मंशा थी कि तुम्हारे जैसे खूबसूरत बच्चे का जिगर भी उतना ही खूबसूरत हो... मैं चाहती थी कि तुम्हारी हंसी में अमन की खूशबू हो, तुम्हारी आँखों में मजलूमों के लिए आँसू हो, तुम्हारी आवाज की एक-एक शिकन में अदब भरा हो, तुम्हारे दिल के हर एक कोने में रियाया के लिए रहम हो, वतन के लिये जोश हो और तुम्हारे जिस्म के हर एक टुकड़े में

कुर्बान होने की ताकत हो...मेरा ख्वाब आज सलोनी सूरत फाड़कर मेरे सामने खड़ा है..."

चुप हो रहीं मल्का।

शाहजादा भी चुप रहा।

बहुत देर तक निस्तब्धता रही।

"मल्का!..."शरमाते हुए कहा शाहजादे ने—"जब तक मेरा दिल बेकरार रहेगा, तब तक मैं रियाया के किसी काम नहीं आ सकता..."

"तुम्हारे दिल को क्या हुआ है रशीद?—" पूछा मल्का ने।

"आप सब कुछ जानती हैं मामीजान!—" बोला शाहजादा—"मुझे खाना अच्छा नहीं लगता, सोना हराम हो रहा है...आप मेरी हैं, आप मेरी तकलीफ समझ सकती हैं..."

"ओह—" मुस्कुराकर बोलीं मल्का—"वह बात तो मैं भूल ही गई थी। मैं अभी शाहंशाह के पास जाकर पूछती हूँ।"

"मुझे उम्मीद नहीं मल्का!—" शाहजादे ने कहा "शायद भाईजान इसे मंजूर न करें..."

"मुझे यकीन है कि वे जरूर रजामन्द हो जाँयगे..." मल्का बोलीं।

"मेरा दिल धड़क रहा है मामीजान!...शाहंशाह यह बात सुनकर क्या कहेंगे अपने दिल में?—"

"यह मुहब्बत का सवाल है शाहजादे! शाहंशाह इसमें दस्तन्दाजी नहीं कर सकते—" मल्का ने कहा—"उनसे पूछकर हम सिर्फ अपनी फर्ज अदायगी कर रहे हैं—"

"शाही इज्जत जाने का खौफ है मल्का!..."

"शाही इज्जत, दो इन्सानों की मायूसी शाही इज्जत से बढ़कर है—" मल्का ने कहा—"शाहेआलम अगर रजामन्द न हुए तो मेरे हुक्म से तुम ऐसा कर सकोगे..."

कहती हुई उठ खड़ी हुई मल्का।

बोली—"तुम यहीं बैठो, मैं अभी शाहंशाह की कदमबोसी करके वापस आती हूँ।"

और झपटती हुई चली गईं।

महल के रास्ते में जो भी उन्हें देखता, झुककर अदब के साथ कोर्निश करता।

ख्वाजासरा ने कोर्निश की और चिल्ला उठा—

"बाअदब बामुलाहजा होशियार!...साकिये शाहंशाह होशियार!... मल्का मुअज्जमा तशरीफ लाई है..."

दो बाँदियों ने आगे बढ़कर रेशमी परदा अलग हटाया। मल्का भीतर गईं। कोर्निश किया उन्होंने।

'क्यों आई हो मल्का?"—शाहंशाह ने पूछा। उनकी भंगिमा उद्दीप्त थी, आँखें क्रोध से जल रही थीं—कदाचित वे पहले ही से क्रोधित थे।

"मैं शाहजादे की एक बात कहने आई थी आलीजाह!"—मल्का ने कहा—"शाहजादे का दिल आज कल बेकाबू हो रहा है..."

"सबब?" शाहंशाह की आँखें और चढ़ गयीं।

'उन्हें रेगिस्तान की एक हूर बेहद पसन्द आई है...वे शाहेआलम की इजाजत चाहते हैं..."मल्का ने स्पष्ट रूप से कह दिया।

"मल्का!" गरज कर बोले शाहंशाह—"रशीद नादान है, मगर तुम्हारे तो होशोहवास दुरुस्त हैं न?...शाहजादे के लिए कोई शाहजादी चाहिये, न कि रेगिस्तान की धूल?..."

"यह रशीद की मुहब्बत और जिन्दगी का सवाल है आलमपनाह!"

"चुप रहो!...ऐसा नहीं होने दूँगा मैं...मैं शाहंशाह हूँ, इस महल का कोई भी जर्रा मेरी ईजाजत के बगैर हिल नहीं सकता...रियाया की तरह तुम लोग भी बागी हो उठे हो। ऐसा न हो कि तुम लोग किसी दिन मेरे गुस्से के शिकार बन जाओ..."

सर झुकाकर मल्का अपने प्रकोष्ठ में लौट आईं।

उनकी उदास मुखाकृति देखकर ही शाहजादा सब कुछ समझ गया।

● ●

कोई घटना न घटी और पलक मारते भर में कई महीने व्यतीत हो गये।

शाहजादा अपनी ही चिन्ता में निमग्न था और मल्का शाहजादे की चिन्ता में।

उधर बागी अपने संगठन कार्य में व्यस्त थे और इधर शाहंशाह नित्य नई जवानियों का और मूल्यवान शराबेअनार का आनन्द ले रहे थे।

एक दिन!

शाहेआलम का दरबारेआम लगा था।

शाहंशाह और शाहजादा, वजीर और अमीर-उमरा उपस्थित थे।

सामने ही काशगर से आया हुआ प्यादा सर झुकाकर खड़ा था।

दरबार का कार्य प्रारम्भ होने के पहले एक वृद्ध मौलवी ने उठकर खुदा की इबादत में कुरान की चन्द आयतें पढ़ी।

सारे दरबार ने उठकर खुदायेपाक की इज्जत में अदब के साथ झुककर कोर्निश की और बैठ गये।

वजीरे आजम उठे।

काशगर से आये हुए प्यादे से पूछा उन्होंने—"क्या खबर लाये हो?"

निश्चल खड़े हुए हाड़-माँस के उस पुतले में गति आई और उसने

तीन बार शाहंशाह के आगे, दो बार शाहजादे के आगे और एक बार वजीर के आगे झुककर कोर्निश की।

बोला—"खबर खतरनाक है आलीजाह !..."

"साफ-साफ बयान करो !"—शाहंशाह ने आज्ञा दी।

"शाहजादे आलम के आने के दो महीने बाद तक काशगर में अमनचैन रहा"—प्यादा बोला—"मगर अब फिर डाकुओं ने अपनी खुराफातें शुरू कर दी हैं...उनका गाँव, शहर काशगर से सात मील दूर है...रातों रात आकर वे शहर के अमीरों को लूट रहे हैं...सारे बाशिन्दगान इस गजब से बाखौफ हो उठे हैं...काजी साहब भी परेशान हैं, उन्होंने मुझे शाहंशाह सलामत की कदमबोसी के लिए भेजा है..."

"चाहते क्या हैं काजी साहब ?"—वजीर ने प्रश्न किया।

"डाकुओं का सामना करना उनके लिये निहायत गैरमुमकिन है"—प्यादा बोला—"यह तो शाहजादये सलामत का ही रुतबा था जो इस कदर अमन कायम हो सका—काजी साहब ने अर्ज किया है कि अगर शाहजादये आलम जल्द तशरीफ नहीं लाते, तो हालत बेहद नाजुक हो जायगी और खुदा न करे एक न एक दिन काशगर, शाहेआलम की सल्तनत से अलग हो जाय..."

दरबार में सन्नाटा छा गया।

वजीर बैठ गया।

शाहंशाह कुछ सोचने लगे।

इस समय राजधानी में जिस बगावत की सम्भावना थी, उसे देखते हुए वे शाहजादे को कहीं अन्यत्र नहीं भेजना चाहते थे।

और काशगर में जो कुछ हो रहा था वह भी अत्यन्त चिन्ताजनक था।

शाहंशाह ने सर उठाया।

"शाहजादे !" उन्होंने पुकारा।

"किब्लये आलम !"—उठकर कोर्निश की शाहजादे ने।

"कल तुम्हारा काफिला यहाँ से काशगर को रवाना हो जायगा"—शाहंशाह बोले—"वहाँ पहुँचकर तुम काजी साहब की सारी फौज इकट्ठी करना और डाकुओं पर फौरन हमला कर देना। पिछली दफा तो तुमने उन्हें छोड़ दिया था और उसी का नतीजा इतना खौफनाक हुआ। मगर इस दफा या तो उन्हें जबह करके आना या उन्हें जिन्दा पकड़ लाकर मावदौलत के सामने पेश करना..."

"जो हुक्म किब्लयेआलम !"—शाहजादे ने कहा।

"वहाँ का काम जल्द से जल्द खत्म करके फौरन यहाँ आ जाना"—शाहंशाह ने कहा—"यहां किसी वक्त भी तुम्हारी जरूरत पड़ सकती है...."

शाहंशाह वजीर की ओर घूमे—"वजीर आजम !"

वजीर ने उठकर कोर्निश की।

"सिपहसालार को हुक्म देकर शाहजादे के जाने का फौरन इन्तजाम कराओ...हिफाजत के लिये कुछ फौज का साथ जाना निहायत जरूरी है..."

"जो हुक्म आलमपनाह !..." वजीर ने सर झुकाकर कहा।

"काजी साहब के पास फौज और बारूद की तो कमी नहीं ?" शाहंशाह ने प्यादे से पूछा।

"नहीं हजूरे आलम ! उन्हें सिर्फ रहनुमा की जरूरत है"—प्यादे ने कहा।

"उसके लिये शाहजादा बहुत काफी है—" बोले शाहंशाह। दरबार समाप्त हुआ।

शाहजादा अपने प्रकोष्ठ में आया, क्योंकि उसे कल प्रातःकाल ही काशगर को प्रस्थान करना था।

यद्यपि शाहजादे की मानसिक अवस्था शोचनीय थी। उसे यह विश्वास भी नहीं था कि इस बार वह डाकुओं का दमन कर सकेगा, फिर भी केवल एक आशा लेकर वह जा रहा था।

रास्ते में शहर जोमन पड़ेगा, जहाँ उसके हृदय की आशा, उसकी शम्सुल रहती है।

यही आशा उसमें नवजीवन का संचार कर रही थी।

परन्तु शम्सुल से क्या कहेगा वह !

जब वह साथ आने का हठ करेगी, तब वह क्या उत्तर देगा ?

क्या उससे स्पष्ट कह देगा कि शाहेआलम की आज्ञा उसे न मिल सकी ?

मगर इस उत्तर से तो वह कोमल फूल मुरझा जायगा और उसके दिल की पंखुड़ियाँ टूट-टूट कर, रेगिस्तानी जमीन पर बिखर जायँगी।

तो क्या वह शाहंशाह की आज्ञा के विरुद्ध शम्सुल को अपने साथ ला सकेगा ?

क्या वे उसके इस कार्य से क्रोधित न हो उठेंगे ?

मगर शाहंशाह को उसके आन्तरिक भावों में हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार है ?

क्या वे स्वयं नाचीज छोकरियों की जवानी का आनन्द नहीं लेते हैं और शाहजादे के लिये केवल एक छोकरी लाने की भी आज्ञा नहीं दे सकते ?

शाहंशाह अपने अधिकार और शाहजादे की नम्रता का बेजा फायदा उठा रहे हैं ?

शाहजादे के हृदय में विद्रोह की सृष्टि हो रही थी, परन्तु वह विद्रोह, भाई के प्रेम के आगे पूर्णरूप से अंकुरित नहीं हो सकता था।

शाहजादा प्रकोष्ठ में घुसा, तो यह देखकर उसे महान् आश्चर्य हुआ कि मल्का वहाँ पहले से ही उपस्थित हैं और उसकी प्रतीक्षा कर रही हैं।

"सुना है, काशगर में फिर खुराफात होने लगे हैं" मल्का ने कहा।

"हाँ मामीजान !—और खुराफात को दबाने के लिये मुझे कल सुबह ही रवाना होना है..."

"यह तो बड़ी खुशी की बात है शाहजादे !"—मल्का मुस्कुराकर बोलीं।

"खुशी की बात !"—शाहजादे को मल्का की मुस्कुराहट से आश्चर्य हुआ।

"और नहीं तो क्या !" मल्का ने कहा।

"भाभीजान !"—बोला शाहजादा—"आप मेरे दिल की हालत से वाकिफ हैं...क्या आपको यकीन है कि मैं इस दफा डाकुओं को खौफजदा कर सकूँगा ?...नहीं मल्का ! शायद मेरी जिन्दगी की आखिरी साँस भी वहीं निकले..."

"क्या वाहियात अल्फाज जबान पर लाते हो"—मधुर झिड़की दी मल्का ने—'मेरा मकसद तो यह था कि तुम अपने जन्नत की हूर से मुलाकात कर सकोगे..."

"उस मुलाकात से होगा क्या भाभीजान !"—बोला शाहजादा—"दर्द बढ़ेगा, जलन होगी...क्या हासिल हो सकता है ?"

"तुम उस हूर को अपने साथ लेते आना शाहजादे !"—

"कैसे ला सकता हूँ यहाँ...भाईजान के हुक्म के बगैर क्या ऐसा करना मेरे लिए लाजिम है !"—हताश स्वर में शाहजादे ने कहा।

"शाहेआलम के हुक्म की इतनी इज्जत तुम्हारे दिल में है मगर मल्का का हुक्म शायद तुम मानना नहीं चाहते शाहजादे !"—

"मेरी जान मल्का की वसीयत है और मल्का का हुक्म मेरी जान से भी बढ़कर है"—कहने लगा शाहजादा—"भाभी जान का क्या हुक्म है ?..."

"मैं सब कुछ देख सकती हूँ शाहजादे !"—मल्का बोलीं—"मगर तुम्हारे चेहरे पर मायूसी, तुम्हारी आँखों में समन्दर और दिल में होता हुआ दर्द, देखने की ताकत मुझमें नहीं है...मैं तुम्हें हुक्म देती हूँ कि तुम उसे यहाँ लाकर अपनी बनाओ..."

"आपका हुक्म सर आँखों पर"—शाहजादे ने कहा—"मगर शाहेआलम की हुक्म-उदली, सजाये मौत से भी बुरी होगी..."

"फिक्र न करो"—मल्का बोलीं—"मैं समझ लूँगी.. तुम मेरे हुक्म से ऐसा कर सकते हो।"

"मगर मल्का मुअजमा को ऐसा हुक्म देने का कोई अख्तियार नहीं है"—आवाज आई।

दोनों ने चौंककर देखा—

दरवाजे पर शाहंशाह खड़े थे। मुखाकृति क्रूर थी सदैव की भाँति और आँखों में शरबती अनार और क्रोध की मिश्रित लालिमा था।

मल्का और शाहजादा दोनों ने उठकर कोर्निश की।

"मल्का!—" शाहंशाह कठोर स्वर में बोले—"मुझे खौफ है कि तुम शाहजादे को, मेरे खिलाफ बगावत के लिये मजबूर कर रही हो..."

"ऐसी किसकी हिम्मत है आलमपनाह?"—मल्का ने नम्र स्वर में उत्तर दिया।

"तुम्हारी! और किसकी?"—गरज पड़े शाहंशाह—"तुम भाई-भाई में गलतफहमी पैदा कर रही हो, शाहजादे के मासूम दिल को अपने जहरी अलफाज से बुरे रास्ते पर ले जा रही हो, उसके सोये हुए इन्सानी माद्दे को ठोकरें मार-मार कर जगा रही हो..."

"....."

सर नीचा कर लिया मल्का ने।

कुछ कहना, शाहंशाह के क्रोध में आहुति देना था।

"तुम लोग आजाद नहीं हो—" शाहंशाह कहते गये—"बागी रियाया अब भी कामयाब नहीं हुई है...अब भी मैं शाहंशाह हूँ, अब भी मेरी जबान पर कानून है, अब भी सारी सल्तनत मेरे पैरों के नीचे है, जरा सा सर उठाने पर, जरा-सी हुक्मउदूली करने पर, अब भी मेरे अलफाज सजाये मौत दे सकते हैं..."

"शाहंशाह की दी हुई सजा मेरे लिये जन्नत से भी बढ़कर होगी—" मल्का ने कहा।

"जबाँदराज औरत!" पैर पटक कर बोले शाहंशाह—"अपनी जबान रोक...मामूली कसूरों पर तुझे सजा नहीं दी जा सकती, शाही हिदायत ही काफी है...मैं जानता हूँ कि मल्का को सजा देने से रियाया की हिम्मत और बढ़ जायगी। उसे मालूम हो जायगा कि शाही खानदान में भी अमन नहीं, शाही ऐवान में भी बलवे का अन्देशा है...."

"....."

चुप रहीं मल्का।

"....."

शाहजादा भी चुप रहा।

और शाहंशाह कहते गये—"तुम्हारा आका हूँ, मैं अपने हुक्म की तौहीन नहीं देख सकता। मैं फिर कहता हूँ कि शाहजादा शाही ताज का जीव है, उसके लिये शाहजादी चाहिए, न की जमीन का ठुकराया हुआ बदनसीब फूल!..."

चुप हो रहे शाहंशाह। क्रोध से उनका शरीर काँप रहा था।

"शाहजादे!..." फिर उत्तेजित स्वर में पुकारा शाहंशाह ने।

"किब्लये आलम!"—सर झुकाकर बोला शाहजादा रशाद।

"मल्का तुम्हें रास्ते से दूर ले जा रही हैं...अभी से समझना तुम्हारे हक में दुरुस्त होगा..." शाहंशाह ने कहा।

"शाहेआलम मेरे वालिद हैं"—बोला शाहजादा—"और मल्का मेरी वालदा हैं। दोनों का हुक्म बजाना मेरा फर्ज है आलीजाह!..."

"तुम्हारा ख्याल गलत है"—तड़प कर बोले शाहेआलम—"मेरे रहते, मल्का की बातों की कोई कीमत नहीं...आज से तुम मल्का का हुक्म न मान सकोगे..."

"जो हुक्म किब्लये आलम!"—कोर्निश करते हुए शाहजादे ने कहा।

"तुम्हारा काशगार जाना मुल्तवी हो गया—" शाहंशाह बोले—"कल मैं खुद काशगर रवाना होऊँगा...तुम यहाँ रह कर सल्तनत की देखभाल करोगे...वजीर तुम्हारी मदद करेगा...बलवे का जरा भी अन्देशा होते ही सारे शहर को तोपदम करा देना..."

शाहजादे ने पुनः कोर्निश की।

बोला—"मगर यहाँ का सयासी बलवा किसी दम उठ खड़ा हो सकता है आलमपनाह!...और हो सकता है कि वह ऐसा खौफनाक हो कि मेरी नातजुर्बेकार अक्ल कुछ काम न कर सके...ऐसी हालत में किब्लये आलम का यहाँ रहना निहायत जरूरी...."

"यानी तुम काशगर जाना ही चाहते हो"—शाहंशाह की उत्तेजना कुछ कम हो चली थी—"मगर तुम जा न सकोगे शाहजादे! मुझे यकीन है कि तुम्हारे रहते अब यहाँ कोई खुराफात न होगी...और मैं चन्द दिनों में ही लौट आऊँगा..."

"जैसी किब्लयेआलम की मर्जी!"—शाहजादा बोला।

"मल्का! अब तुम जा सकती हो"—कहते-कहते शाहंशाह का स्वर कठोर हो चला।

कोर्निश करके मल्का प्रकोष्ठ से बाहर हो गईं।

"शाहजादे..."शाहंशाह का स्वर अत्यन्त नम्र हो गया।

"किब्लये आलम!..."

शाहंशाह ने आगे बढ़कर शाहजादे के सर पर हाथ रख दिया—बोले—"तुम अभी मासूम बच्चे हो...दुनिया का तजर्बा अभी तुम्हें कुछ भी नहीं है...अपने दिल को काबू में रक्खो। अपनी मायूसी दूर भगा दो। रेगिस्तान के चमकते हुए जर्रे को, हीरे का टुकड़ा मत समझो...."

शाहजादे को ऐसा लगा, जैसे वह शाहंशाह की सहानुभूति पाकर रो देगा।

मगर क्या वह शाहंशाह की आज्ञानुसार शम्सुन्न को भूल सकता है?

नहीं! कभी नहीं!

रेगिस्तान का वह चमकता हुआ नाचीज जर्रा, शाहजादे के लिए हीरे के टुकड़े से बढ़कर है।

शाहंशाह चले गये।

शाहजादा धम्म से पलंग पर आ बैठा।

वह अब काशगर नहीं जा सकेगा—अपनी प्रियतमा का दर्शन नहीं कर सकेगा।

अपनी जान भी नहीं दे सकेगा वह।

क्योंकि मुट्ठी भर हड्डी का यह ढाँचा भी तो शाहंशाह की सम्पति है।

तभी गुप्त द्वार पर धीरे से खटखटाहट हुई।

एक धीमा स्वर सुनाई पड़ा—"शाहजादे! अन्दर से सब दरवाजे बन्द कर लो..."

शाहजादा समझ गया कि गुप्तद्वार पर सफ्दर उपस्थित है।

वह उठा। अन्दर से सब दरवाजे बन्द कर लिया उसने और शामदान में रोशनी कर दी, क्योंकि शाम हो चली थी।

गुप्तद्वार खोला तो सचमुच सफ्दर उपस्थित था।

दोनों मित्र पलंग पर आकर बैठ गये।

"मेरे फरार दोस्त! आ गये तुम?"—शाहजादे ने कहा।

"आ गया!" बोला सफ्दर—"यह जानने के लिए कि पिछली मुलाकात का कुछ जवाब सोचा या नहीं?"

"अभी नहीं दोस्त!"—शाहजादे ने कहा।

"खुदा जानता है, तुम उस वक्त तक भी कुछ न सोच सकोगे, जब कि इस शाहीमहल की एक-एक ईंट जमींदोज कर दी जायगी और सारे शाही कारबरदार रियाया की कैद में होंगे...."

"क्या कहते हो तुम सफ्दर?"—आश्चर्य से बोला शाहजादा।

"ठीक कह रहा हूँ मैं।"

सफ्दर ने उत्तर दिया।

"क्या तुम लोगों का ऐसा खौफनाक इरादा है?"

"रियाया के लिए यह इरादा बेहद खुशी का सबब है शाहजादे !"—

"ऐसा करोगे तुम लोग !"—आश्चर्यपूर्ण स्वर में कहा शाहजादे ने—"कर सकोगे ऐसा !..."

"क्या तुम्हें यकीन नहीं आता ?"—सफ्दर ने पूछा ।

"यकीन करने की बात नहीं है सफ्दर !"

"तुम्हें यकीन दिलाने ही तो मैं आया हूँ ।" सफ्दर बोला ।

"कहो क्या कहते हो !"

"तुम जानते हो कि हम लोग आजकल चुप क्यों हैं ?..." पूछा सफ्दर ने ।

"नहीं !"—छोटा सा उत्तर मिला ।

"यह भी नहीं जानते कि तूफान आने के पहले हवा कितनी खामोश हो जाती है ?"

"जानता हूँ"—शाहजादे ने कहा ।

"क्या यह भी जानते हो कि जलजला आने के पहले समुन्दर की लहरें कितनी संजीदा हो उठती हैं !"

"यह भी जानता हूँ ।"

"क्या तुम्हें नहीं मालूम कि कहर आने के पेश्तर जमीन का जर्रा-जर्रा मायूस हो उठता है ?"

"मालूम है ?"

"और यही मेरा जवाब !"—लम्बी भूमिका के बाद सफ्दर ने बात समाप्त की ।

"तो क्या तुम्हारा मतलब यह है कि तुम्हारी जमात अब बलवे के लिए बिल्कुल तैयार है ?"

"सिर्फ चन्द दिनों की देर है"—सफ्दर ने कहा—"जानते हो इस वक्त हमारी जमात में कितने आदमी हैं ?"

"नहीं, कितने ?"—

"तीस हजार नौजवान—हथियार बन्द ! खौलते हुए खून वाले"—सफ्दर ने कहा—"सब हमारे किले में बैठे हुए बेताबी से बेगम आलिया के हुक्म का इन्तजार कर रहे हैं..."

"तुम्हारा किला कहाँ है सफ्दर ?"—पूछा शाहजादे ने।

"दोस्त !"—सफ्दर ने शाहजादे के कन्धे पर हाथ रख दिया—"यह सयासी मामला है। हम पर हमारे अरमान मुनहसर हैं...मैं सिर्फ तुमसे उतनी ही बातें बता सकता हूँ, जिसको बताने का बेगम आलिया ने हुक्म दिया है...तुम हमारे छिपने की जगह नहीं जान सकते..."

"मैं जानने के लिए हठ भी न करूँगा सफ्दर !"—बोला शाहजादा।

"अच्छा ! तो तुम अपना इरादा पक्का करने के लिए कुछ और वक्त चाहते हो ?"

"बेशक !"—शाहजादे ने कहा।

"बेहतर है"—बोला सफ्दर—"बेगम आलिया का हुक्म है कि जब तक शाहजादा अपना इरादा जाहिर नहीं करते, तब तक हमारा हमला न शुरू हो। वे चाहती हैं कि तुम किसी एक तरफ हो जाओ...या शाहे-आलम की तरफ या रियाया की तरफ..."

"जल्द ही अपना इरादा जाहिर करने की कोशिश करूँगा..." बोला शाहजादा !

"तुम्हारा ही इन्तजार हम कर रहे हैं शाहजादे !"—सफ्दर ने कहा—"हाँ, कल तो तुम काशगर जाने वाले थे, मगर अब तो शाहेआलम ही जायँगे...ताज्जुब में न आओ। बेगम आलिया ने मुझे यह खबर दी है। अब तो तुम्हीं सल्तनत के मालिक हो मगर बेगम आलिया का हुक्म है, जब तक सल्तनत तुम्हारे हाथों में है, तब तक कोई खुराफात न की जाय..."

"बेगम का लाख-लाख शुक्रिया !..."

"अच्छा तो मैं चला !..."

सफ़दर उठ खड़ा हुआ।

● ●

थोड़ा दिन चढ़ते-चढ़ते शाहंशाह का काफिला शहर काशगर को रवाना हो गया।

सैकड़ों ऊँटों का काफिला था वह।

आगे और पीछे के ऊँटों पर खेमें, तम्बू और खाने पीने के सामान थे। पाँच ऊँटों पर शाहंशाह की दस साकियाँ थीं और उनके साथ थी वह भयानक तातारी औरत खातून !

बीच वाले सजे हुए ऊँट पर स्वयं शाहंशाह थे—एक खूबसूरत साकी के साथ शरबते अनार पीते हुए।

पहला पड़ाव समरकन्द की सरहद के बाहर पड़ा।

और दूसरे दिन शाहंशाह का काफिला शहर जोमन की सराय तक जा पहुँचा !

शाम हो चली थी और सराय में आज बहुत रौनक था, क्योंकि शाहंशाह का आगमन पहले ही से ज्ञात था।

उसी कमरे में शाहंशाह ठहरे जिसमें कुछ दिन पहले शाहजादा रहता था।

और वहीं सौन्दर्यमयी छोकरी मुमताज, शाहंशाह की सेवा के लिए नियुक्त हुई।

जब वह दुबली-पतली छोकरी अपना यौवन विलसित शरीर लिए

हुए अन्दर आई और झुककर उसने शाहंशाह को कोर्निश की—तो शाहंशाह उसका यौवन देखते ही रह गये।

"बाँदी के लिए क्या हुक्म है आलीजाह ?"—नम्र स्वर में पूछा मुमताज ने।

"शरबते अनार !..."

शाहंशाह के मुख से निकलने की देर थी कि मुमताज के हाथों में प्याला तैयार हो गया और उसमें का लाल शर्बत झाड़ की रोशनी में लहरा उठा।

प्याला लिए हुए मुमताज शाहंशाह के पास आई।

शाहंशाह ने उसका कोमल शरीर पकड़ कर गोद में खींच लिया। नाजुक हाथों का प्याला तृषित अधरों से जा लगा।

प्याला खाली हो गया।

मुमताज जड़ पत्थर की तरह शाहंशाह की गोद में पड़ी रही और शाहंशाह का बन्धन उत्तरोत्तर दृढ़ होता गया।

जब उन्मत्त शाहंशाह के होठ, मुमताज के अधरों से युद्ध छेड़ बैठे तो वह चौंक पड़ी।

सोचने लगी वह—

एक रस दो बूँदे....

एक वृक्ष के दो फल...

एक जिस्म के दो टुकड़े...

एक बाप के दो बेटे...

और इनमें इतना महान् अन्तर !

एक के हृदय में सद्भावना है, शरबते अनार से घृणा है, वासना में वैराग्य है और है दलितों से प्रेम।

और दूसरे के हृदय में दुर्भावना का सागर है, शरबते अनार की अनुभूति, वासना-जनित कलुषता है और है दलितों के प्रति तीव्र उपेक्षा का भाव !

कितना अन्तर है दोनों में ?

एक है शाहजादा, जिसने उसके बदन पर हाथ भी नहीं लगाया, जिसने शरबते अनार का प्याला तक न छुआ, जिसके रहते-रहते वह भी न जाने कैसी हो गई थी ?

और दूसरा यह शाहंशाह ! वासना का पुतला !!

जिसने आते ही उसकी जवानी तोड़ डाली, गट-गट करके कई प्याले पी गया और अब लोलुप-दृष्टि से उसका सौन्दर्य देख रहा है।

एक फरिश्ता है !

दूसरा शैतान !

सोचते-सोचते मुमताज का हृदय घृणा से भर उठा।

"तुम्हारा क्या नाम है तितली ?—" पूछा शाहंशाह ने।

"मुमताज !..." धीरे से कहा उसने।

फिर वह सोचने लगी, शाहंशाह द्वारा किये गये सम्बोधन के विषय में।

तितली ही तो है वह।

परन्तु जब से शाहजादे का साथ हुआ था, वह इस सम्बोधन को घृणित समझने लगी थी।

कहाँ शाहजादे के अधरों पर वह प्यारा-प्यारा-सा शब्द 'बानू' और कहाँ इस वासना के पुतले द्वारा उच्चरित वह घृणायुक्त शब्द 'तितली ?'

समय बहुत बेचैनी से बीत रहा था ? मुमताज आज जरा भी प्रसन्न न थी।

रह-रहकर वह शाहंशाह की गोद से उठकर भाग जाना चाहती थी।

शाहंशाह जवान न थे। उनका बूढ़ा शरीर, मुमताज के जवान अवयव पर कैसे अमृत वर्षा कर सकता था !

शाहजादा जवान था और उफनती मचलती जवानी पर भी उसका अधिकार था। अपने किसी कार्य से भी उसने मर्यादा का उलंघन न किया था। किसी अङ्ग मे वासना प्रकट न की थी।

परन्तु शाहंशाह वृद्ध हैं और अपने जर्जर शरीर द्वारा उन्होंने अपनी जवानी प्रकट की है। जैसे उन्हें मर्यादा का कुछ भी ध्यान नहीं है। जैसे उनका बुढ़ापा भी उनके वश में नहीं। जैसे अङ्ग-अङ्ग से वासना की लपट फूटी पड़ रही हो।

वासना की लपट !

जल जायगी मुमताज उसमें।

एक दिन वह था, जब कि शाहजादे की जवानी के पास वह अपना शरीर सुरक्षित समझती थी।

और एक दिन आज है कि शाहंशाह के बुढ़ापे के सामने उसके अङ्ग-अङ्ग खुल गये हैं, बन्द-बन्द टूट चुके हैं।

"तुम्हें मेरा साथ पसन्द तो है हूर ?" शाहंशाह ने पूछा।

कदाचित् मुमताज के देर तक चुप रहने के कारण उन्होंने ऐसा प्रश्न किया था।

"बहुत पसन्द है आलमपनाह !"—मुमताज ने कह दिया।

"तुम इस सराय में पड़ी हो"—शाहंशाह बोले—"तुम्हें तो शाही महल में आकर वहाँ की रौनक बढ़ानी थी..."

"बाँदी को ऐसी खुशकिस्मती कहाँ हजूरेआलम !"—

ये रटे हुए शब्द थे, जो मुमताज के मुख से निकल रहे थे।

हृदय के शब्द तो केवल शाहजादे के ही सामने निकलते थे।

"लौटते वक्त तुम्हें ले चलूँगा मुमताज !"—कहा शाहंशाह ने।

"ख्वाब हमेशा सच नहीं होते शाहंशाह सलामत !—"

आज भी कमरे की खिड़की खुली थी।

आज भी चाँद आस्मान पर मुस्करा रहा था।

आज भी ताड़ों के बीच से हवा मस्ती का सन्देश ला रही थी।

परन्तु आज वह नहीं है, जो उस दिन था और जो उस दिन नहीं था, वह आज है।

यह परिवर्तन मुमताज को कष्टकर प्रतीत हुआ।

सब कुछ उसी दिन की तरह है, मगर 'एक' का अभाव है।

और यह अभाव मुमताज के लिये अपने जीवन का भार प्रतीत हुआ।

"शाहजादा साहब तो खैरियत से हैं आलमपनाह ?"—पूछ बैठी वह।

"बिल्कुल खैरियत से है वह !"—शाहंशाह बोले—"तुम शायद उससे मिल चुकी हो ?"

"बजा है आलमपनाह ! इसी कमरे में हमारी उनकी मुलाकात हुई थी"—मुमताज ने कहा।

"कैसा लगा वह तुम्हें ?"

"बिल्कुल मासूम आलीजाह !"

"दुरुस्त है"—कहने लगे शाहंशाह—"वह बचपन से ही मलका के साथ रहा है और मलका की नसीहतों ने उसका दिमाग खराब कर दिया है..."

"ठीक फरमाते हैं आलमपनाह !"—स्वर में नम्रता थी, मगर मुख पर घृणा का भाव।

"पिछली दफा वह काशगर का बलवा दबाने में नाकाबिल साबित हुआ"—शाहंशाह बोले—"उसने डाकुओं पर रहम खाकर उन्हें जिन्दा छोड़ दिया, जिसका नतीजा यह हुआ कि फिर खुराफात शुरू हो गई। मजबूरन मुझे आना पड़ा..."

"खुदा करे हजूरेआलम के कदम-मुबारक हमेशा यहाँ पड़ते रहे—"

यहाँ आकर बातचीत का सिलसिला बन्द हो गया।

शरबतेअनार के कई प्याले खाली हो गये।

मुमताज की जवानी के साथ भरपूर खिलवाड़ हुआ—

परन्तु मुमताज को जो तृप्ति शाहजादे के पलंग के नीचे फर्श पर सोने में मिलती थी, वह शाहंशाह के पलंग पर सोने से न मिल सकी।

प्रातःकाल हुआ, शहर में चहल-पहल मच गई।

शाहंशाह ने क्रूर आँखों से मुमताज की ओर देखा।

बोले—"तुमने अपना फर्ज बेहतरीन तरीके से अंजाम दिया तितली ! मैं तुमसे बहुत खुश हूँ...अब तुम्हारी जरूरत नहीं रही। किसी दूसरी तितली को भेजना...और अपने आका से कहना कि मैं आज दोपहर को काशगर रवाना हो जाऊँगा..."

मुमताज बाहर आई, तो सोचने लगी—

अपनी वासना की तृप्ति के लिए निर्दयी पुरुष क्या-क्या वादे नहीं करता, परन्तु तुष्टि के बाद कदाचित् वह अपनी जबान भी भूल जाता है।

शाहंशाह अपनी बात विस्मृत कर बैठे हैं।

कितने जोश के साथ कल रात में उन्होंने कहा था—"लौटते वक्त तुम्हें ले चलूँगा मुमताज !..."

परन्तु सबेरा होते ही शाहंशाह को उसकी जरूरत नहीं रह गई।

हाय रे पुरुष !

हाय रे तेरी निष्ठुर कामुकता !

हाय रे वासना का अधःपतन !

दोपहर के समय शाहंशाह का काफिला चल पड़ा और तीन चार घन्टे रात व्यतीत होते-होते काशगर पहुँच गया।

काशगर के काजी ने अपने प्यादे से शाहजादे के आने की बात सुनी थी, मगर जब उसे मालूम हुआ कि स्वयं शाहेआलम पधारे हैं, तो उसे उतनी प्रसन्नता न हुई।

आगे बढ़कर उसने शाहंशाह की अभ्यर्थना की और उन्हें अपने महल में ला टिकाया।

यात्रा की थकान एक घन्टे तक मिटाने के पश्चात् शाहंशाह और काजी में विचार-विमर्श होने लगा।

"डाकुओं की तादात बहुत ज्यादा है आलमपनाह !"—काजी ने कहा।

"आखिर कितने होंगे वे सब ?"—पूछा शाहंशाह ने।

"अन्दाजन उतने ही जितनी हमारी फौजें हैं—"

"कोई बात नहीं—" शाहंशाह ने कहा—"हम आसानी से फतह हासिल कर लेंगे..."

"सारा काम ऐहतियात के साथ होना चाहिए आलीजाह !"—

"तुम्हारा मतलब ?"—शाहंशाह ने पूछा।

"हमें अपनी सारी कारगुजारी पोशीदा रखनी होगी"—काजी बोला—"ताकि डाकुओं को अपने ऊपर होने वाले हमले का जरा भी गुमान न हो..."

"क्या माबदौलत का आना भी पोशीदा रक्खा गया है !"

"बिल्कुल पोशीदा आलमपनाह !"—काजी ने कहा—"अगर हम काशगर पर अपना कब्जा चाहते हैं तो हमें चाहें जिस तरह हो इन डाकुओं को नेस्तोनाबूद करना ही होगा..."

"क्या उनसे सुलह करने का कोई रास्ता है !"—शाहंशाह बोले—"इस वक्त चारों तरफ से सल्तनत पर गजब गिर रहा है, ऐसी हालत में मैं अपनी ताकत बरबाद करना नहीं चाहता।"

"वे डाकू हैं आलमपनाह !" काजी ने कहा—"डाका डालकर दौलत लूटना ही उनका पेशा है। अगर उन्हें कोहेकाफ की भी दौलत दे दी जाय तो भी वे अपना पेशा नहीं छोड़ सकते..."

"तो फिर ?"

"कोई सियासी बलवा हो तो सुलह की बात पर अमल किया जा सकता है...मगर डाकुओं के लिए तो सिर्फ सजायेमौत ही है"—काजी ने कहा।

"उनका गाँव यहाँ से कितना दूर होगा ?—"

"सात मील दूर !"—काजी ने उत्तर दिया।

"सिपहसालार से अपनी फौज तैयार करने को कहो—" शाहंशाह बोले—"मैं कल सुबह फौज की कवायद देखूँगा..."

"जो हुक्म !..."

"मेरा ख्याल है कि हमारी फौज कल शाम को अँधेरा हो जाने पर

यहाँ से कूच करे ताकि आधी रात से पहले ही हम उनके गाँव के नजदीक पहुँचकर चुपचाप डेरा डाल दें और सुबह होते ही उनपर जोरदार हमला कर दें..." शाहंशाह ने कहा।

"बेहतर है आलीजाह !"—काजी बोला।

दूसरे दिन सुबह शाहंशाह ने काजी की फौज का निरीक्षण किया। फौज बड़ी न थी। तीन चार सौ सैनिक थे।

सन्ध्या हो जाने पर शाहंशाह ने फौज के साथ डाकुओं के गाँव की ओर प्रस्थान किया। साकी और शरबतेअनार पीछे ही रह गये। साथ में एक पथ-प्रदर्शक भी था।

आधी रात से बहुत पहले ही वे लोग गाँव से आधे मील की दूरी पर जा पहुँचे। खेमें लग गये और फौज आराम करने लगी। सारा काम शान्तिपूर्वक हुआ था।

शाहंशाह बहुत थक गये थे, अतः उन्हें जल्द ही नींद आ गई।

एकाएक तीव्र कोलाहल सुनकर जब उनकी नींद टूटी, तो देखा चारों ओर भयानक शोर मचा हुआ है।

लोगों की चीख-पुकार जोरों से सुनाई पड़ रही है।

तलवारों के चलने की आवाज भी आ रही है।

डाकुओं ने उनपर आक्रमण कर दिया था। न जाने कैसे उन्हें उनका पता लग गया था।

शाहंशाह की फौज शान्तिपूर्वक सो रही थी, अतः डाकुओं का अचानक आक्रमण वह सम्हाल न सकी।

डाकू घास-मूली की तरह सिपाहियों को काटने लगे। उनकी संख्या भी फौज से कम न थी।

प्राण के भय से शाही सैनिकों में भगदड़ मच गई। जो जीवित बचे थे, वे सब न जाने कहाँ भागकर लुप्त हो गये।

शाहंशाह अपनी तलवार खोज रहे थे, तब तक डाकुओं का दल वहाँ आ पहुँचा। वे तुरन्त गिरफ्तार कर लिये गये।

सारा काम इतनी शीघ्रतापूर्वक हुआ कि शाहंशाह अपनी नींद से भी चैन्तय न हो पाये।

भागे हुए एक सैनिक के मुख से जब काजी ने स्वयं शाहंशाह की गिरफ्तारी का हाल सुना तो भयभीत हो उठा। उसकी फौज भी छिन्न-भिन्न हो गई थी, ऐसी दशा में वह कर ही क्या सकता था ?

उसने तुरन्त एक प्यादा शाहजादे के पास तातार भेजा और उनसे तुरन्त फौज लेकर आने की प्रार्थना की।

● ●

"वह लड़की अपने दिल में क्या सोचेगी भाभीजान !"—शाहजादा कह रहा था और मल्का ध्यानपूर्वक सुन रही थीं—"क्या अब तक मेरा इन्तजार न करती होगी ? क्या उसके दिल में भी वैसा ही तूफान न होगा, जैसा कि मेरे दिल में है ? मेरे जल्द न जाने से क्या वह यह नहीं सोचेगी कि मैंने उसके साथ दगा की है ?"

"मायूस होकर इन्सान सब कुछ सोच सकता है शाहजादे !"—मल्का बोलीं—"इन्तजार की घड़ियाँ बड़ी बेदर्द होती हैं, दिल को दुखाने से बाज नहीं आतीं। ऐसी हालत में इन्सान अपने से भी खफा हो जाता है..."

"मैं क्या करूँ कुछ समझ में नहीं आता मल्का !"—शाहजादे ने कहा—"इधर शाहंशाह की नाराजगी देखता हूँ तो दिल पर बेचैनी-सी छा जाती है। मेरी बेकरारी की कोई हद नहीं। मेरे जख्मी दिल पर मरहम लगाने वाला कोई नहीं। मैं यतीम हूँ, दुनिया में अकेला हूँ। न कोई हमदर्द है, न साथी। जो है भी, उनके हाथ-पैर मजबूरी की बेड़ियों से जकड़ दिये गये हैं..."

"कुछ दिन और सब्र करो शाहजादे !"—मल्का बोलीं—"शाहे-आलम को लौट आने दो और सल्तनत के सयासी बलवे का खात्मा हो जाने दो..."

"यह क्यों नहीं कहतीं मामीजान"—बीचही में रोक कर बोला शाहजादा—"कि अपनी जान निकल जाने दो, तब तुम्हारी मुरादें बर आयेंगी।"

"तुम इतने बेकरार हो उठे हो, तो मैं कल ही किसी प्यादे को भेजकर उस लड़की को बुलवा लूँगी। देखा जायगा, जो आगे आयेगा..."

उसी समय एक बाँदी ने अन्दर प्रवेश किया और झुककर कोर्निश की।

"क्या है ?..."पूछा शाहजादे ने।

"वजीरे आलम तशरीफ लाये हैं"—बाँदी बोली—"शाहजादये आलम से इसी वक्त मुलाकात करना चाहते हैं..."

शाहजादे ने मल्का की ओर देखा।

मल्का उसका इरादा समझ गईं और दिवाल के पास रखे हुए एक चाँदी के तख्त पर आ बैठीं।

शाहजादे ने उठकर सामने का महीन रेशमी परदा खींच दिया और मल्का परदे के अन्दर हो रहीं।

"भेज दो !..." शाहजादे ने बाँदी को आज्ञा दी और जाकर पलंङ्ग पर बैठ गया।

वजीर आया। झुककर कोर्निश की उसने।

शाहजादे ने देखा--वजीर की मुखाकृति अत्यन्त गम्भीर एवं चिन्ताग्रस्त थी।

आशङ्का हुई शाहजादे को।

"बहुत संजीदा हो रहे हैं आप ?"—पूछा शाहजादे ने।

"बात वाकई ताज्जुब की है आलीजाह !" वजीर बोला। सुनकर

आश्चर्य हुआ शाहजादे को ! इतने दिन हुए, उसने वजीर आजम को इतना गम्भीर कभी नहीं देखा था।

"क्या बात है वजीरे आजम ?"—पूछा शाहजादे ने—"क्या शहर में बलवाइयों की खुराफात शुरू हो गई ?"

इस समय शाहजादे को बागियों की ओर से सबसे अधिक आशङ्का हुई।

"नहीं आलमपनाह ! शहर में पूरा अमन है"—वजीर बोला—"शहर काशगर से हजूर शाहेआलम की खबर लेकर प्यादा हाजिर हुआ है..."

"कहाँ है वह ?"—पूछ बैठा शाहजादा।

"बाहर खड़ा हुआ आलीजाह के हुक्म का इन्तजार कर रहा है..."

"बुलाओ उसे !"—शाहजादे ने आज्ञा दी।

वजीर ने धीरे से ताली बजाई !

और प्यादे ने अन्दर आकर कोर्निश की।

"काशगर से आ रहे हो ?"—शाहजादे ने पूछा।

"हाँ ! मुझे काजी साहब ने हजूरे आलम की खिदमत में भेजा है" सर झुकाकर प्यादे ने कहा।

शाहजादा देख रहा था कि प्यादा अत्यन्त घबराया हुआ है।

"हजूर भाईजान तो खैरियत से हैं न ?"—पूछा उसने।

"नहीं आलमपनाह !"—प्यादा बोला—"परसों रात में डाकुओं ने शाहेआलम को गिरफ्तार कर लिया..."

"गिरफ्तार ?"—चौंक कर उठ खड़ा हुआ शाहजादा।

"हाँ, आलमपनाह !"

परदे के अन्दर बैठी हुई मल्का भी चौंक पड़ीं।

"धोखे से डाकुओं ने शाही फौज पर हमला कर दिया"—प्यादा कहने लगा—"फौज थोड़ी थी और डाकुओं का हमला एक ब एक हुआ...फौज भाग खड़ी हुई और शाहेआलम गिरफ्तार हो गये...."

"डाकुओं की यह हिम्मत कि हजूर माईजान को गिरफ्तार करें !" क्रोधित स्वर में शाहजादा बोला—"मैं देखूँगा उन कुत्तों को...."

"काजी साहब ने अर्ज किया है कि शाहजादये आलम फौज के साथ तशरीफ लावें, नहीं तो शाहंशाह सलामत की जान पर खतरे का अन्देशा है"—प्यादे ने कहा।

"मैं जल्द रवाना होऊँगा"—शाहजादा बोला—"वजीरे आजम ! मेरे जाने का दो घण्टे के अन्दर इन्तजाम हो जाय। सिपहसालार से कहकर पाँच सौ फौज फौरन तैयार रखने का हुक्म दीजिए..."

"जो हुक्म आली जाह !—" वजीर ने कहा—"मगर यहाँ की हालत देखते हुए, आप का शाही महल छोड़ना, वाजिब नहीं हजूरे आलम !"

"वजीर !"...उत्तेजित स्वर में बोला शाहजादा—"मुझे भाई की जान, सल्तनत और शाहीमहल से भी ज्यादा प्यारा है। सल्तनत बर्बाद हो जाय, शाहीमहल की ईंटें जमीन पर लोटने लगें, मगर मैं जाऊँगा ही। मैं डाकुओं की इस गुस्ताखी के लिए उन्हें माफ नहीं कर सकता। वे खूँखार माईजान के साथ न जाने कैसा बर्ताव करते होंगे..."

"मैं अभी हजूर के हुक्म की तामील करता हूँ..." वजीर ने कहा।

"देखिए ! मेरी गैर मौजूदगी में सल्तनत की सारी जिम्मेदारी आप पर है" -बोला शाहजादा—"और सल्तनत से भी बढ़कर मल्का मुअज्जमा के हिफाजत की जिम्मेदारी है....मल्का मेरी माँ है। मैं बलवाइयों के हाथ अपने माँ कि तौहीन बरदाश्त न कर सकूँगा..."

"मैं जान देकर भी मल्का की हिफाजत करूँगा आलीजाह !"—वजीर ने कहा।

वजीर और प्यादा दोनों कोर्निश करके चले गए।

मल्का परदे से बाहर आईं।

"कितनी खौफनाक खबर आई है मामीजान..."—शाहजादे ने कहा—"समझ में नहीं आता कि भाईजान धोखा कैसे खा गये..."

"तुम्हारे भाई जान के लिए फूलों की सेज और शरबते अनार का प्याला ही ठीक है शाहजादे ! लड़ाई का मैदान उनके काबिल नहीं"—मल्का बोलीं।

"भाईजान की लापरवाही से ही इतना हंगामा मच रहा है"—शाहजादे ने कहा—"मुझे अफसोस है कि शाहंशाह ने फर्ज न देखा, सिर्फ अपना आराम देखा..."

"इस वक्त कई पेंचीदे मामले हमारे सामने आ पड़े हैं"—मल्का बोलीं—"इस वक्त जो भी करो, खूब समझ-बूझ कर। ऐसा न हो कि तुम उधर जाओ और इधर शाहीमहल पर बलवाइयों का कब्जा हो जाय... यह याद रखो कि शाहंशाह अपनी जान दे देंगे, मगर शाहीमहल और सल्तनत को खो बैठना उन्हें पसन्द न होगा..."

"भाईजान पर आई हुई आफत की बात सुनकर वहाँ जाना ही बेहतर है मल्का !"—शाहजादे ने कहा—"वैसे मुझे उम्मीद है कि अमीं बलवाई हमला न करेंगे, फिर भी मेरी ख्वाहिश थी कि एकबार सफ्दर से मुलाकात हो जाती...मगर यह गैर मुमकिन है..."

"अगर तुम्हें जाना ही है तो जल्द तैयार हो जाओ"—मल्का बोलीं—"मैं भी चलती हूँ। इस दफा तो तुम खुद जा रहे हो तो उस लड़की को लाना न भूलना..."

"जो हुक्म !...." शाहजादे ने कहा।

मल्का चली गई। शाहजादा तैयारी करने लगा।

जिस समय वह प्रस्थान की पूरी तैयारी कर चुका था, उसी समय गुप्त द्वार पर खटका हुआ। उसने लपककर द्वार खोला। सफ्दर अन्दर आया।

"खुदा जानता है कि मैं तुमसे मिलने के लिए कितना बेताब था !"—शाहजादा बोला।

"लो ! मैं खुद आ गया"—सफ्दर ने कहा—"तुम तो शायद काशगर जाने को तैयार हो ?"

"हाँ !"—बोला शाहजादा—"दोस्ती के नाते मैं तुम से इतनी मिन्नत करूँगा कि मेरी नामौजूदगी में शाही महल पर कोई हमला न हो..."

"शाहजादे !"—हँसकर बोला सफ्दर—"जिस बात पर वतन की आजादी मुनहसर हो, उसके लिए दोस्ती की भी कुर्बानी की जा सकती है। उधर शाहंशाह का गिरफ्तार होना और इधर तुम्हारा काशगर जाना—यह मौका हमारे हमले के लिए बेशकीमती था और हम जरूर हमला कर बैठते; अगर हमारी तैयारी पूरी हो चुकी होती और बेगम आलिया का हुक्म मिलता। मगर अफसोस कि न तो हम अभी पूरी तौर से तैयार हैं और न तो बेगम का ही हुक्म मिल सकता है। ऐसी हालत में तुम बेखौफ काशगर जा सकते हो।"

"शुक्रिया !..." शाहजादे ने कहा।

● ●

डाकुओं का गाँव।

सैकड़ों की संख्या में खड़ी हुई जीर्ण-शीर्ण झोपड़ियाँ।

सरदार के झोपड़े के आगे समग्र डाकू समुदाय उपस्थित है। सरदार भी उच्च आसन पर बैठा हुआ है। उसके सामने ही शाहंशाह तातार खड़े हैं। शाहंशाह के हाथ पैर खुले हैं, परन्तु उनके पीछे चार हथियारबन्द डाकू खड़े हैं।

"शाहेआलम को हमने बेहद तकलीफ दी"—डाकू सरदार ने कहा।

"....."

शाहंशाह चुप रहे, नीचे देखते रहे।

"मगर हम मजबूर थे"—सरदार कहने लगा—"शाहेआलम ने हमारे ऊपर जो खौफनाक हमला करने की बन्दिशें बाँधी थीं, उसके लिए ऐसा करना हमें लाजिम था..."

"....."

फिर भी चुप रहे शाहंशाह।

"शाहंशाह मेरी बातों का जवाब दें!"—रुखाई के साथ बोला दरदार—"मैं यह जानना चाहता हूँ कि शाहंशाह ने हमारे ऊपर क्यों हमला किया था?"

"मैं तुम्हारी बातों का जवाब देने से इनकार करता हूँ!"

हँस पड़ा सरदार उनकी बातें सुनकर।

बोला—"शायद शाहंशाह इस वक्त भी अपने को शाही तख्त पर ही मौजूद पा रहे हैं। महल का ख्वाब यहाँ भी देख रहे हैं आप?"

"....."

शाहंशाह की निस्तब्धता से सरदार उत्तेजित होता जा रहा था।

"यह न भूलिये कि इस वक्त आप सरदार के सामने खड़े हैं और उसके कैदी हैं—" बोला सरदार—"और अगर कैदी ने रजामन्दी से अपनी जबान न हिलाई, तो उसे इस बात के लिए मजबूर भी किया जा सकता है...बेहतर है कि शाहेआजम मुझे बेहद सख्त होने पर मजबूर न करें.."

"क्या जानना चाहते हो तुम?"—पूछा शाहंशाह ने।

"अपने ऊपर होने वाले हमले का सबब—"सरदार ने उत्तर दिया।

"तुम्हारी खुराफातों और लूटपाट के सबब से ही ऐसा हुआ..."

"हम डाकू हैं—" बोला सरदार—"लूटना तो हमारा पेशा..."

"तुम शायद यह भूल रहे हो कि रियाया के जान व माल की हिफा-

जत करना शाहंशाह का फर्ज है और उस फर्ज में दखल देनेवाले मेरे सबसे जलील दुश्मन हैं..." शाहंशाह बोले।

"इस खिताब के लिये शाहंशाह का शुक्रिया !..." सरदार मुस्करा-कर बोला—"फर्ज की बात तो शाहेआलम ने एक ही कही...आज आपकी रियासत का बच्चा-बच्चा जानता होगा कि शाहेआलम में कितनी फर्जअदायगी है !..."

"....." दाँत पीस रहे थे शाहंशाह।

"फर्जअदायगी के सिलसिले में शायद ऐश व इशरत भी आ जाती है, जिसमें शाहंशाह इतने दिनों तक डूबे रहे हैं—" सरदार ने व्यंग किया—"सलतनत के जर्रे-जर्रे को अपने शाहंशाह के लिये फख है। शाहंशाह को अपनी रियाया और अपने फर्ज का जितना खयाल है, उसी का सबब है कि आज रियाया जुल्म से इतनी घबड़ा उठी है और उसके जिस्म की रग-रग बागी हो उठी है..."

"तुम्हें मेरे अन्दरूनी मामले पर जबान हिलाने की जरूरत नहीं..."

"जरूरत है शाहेआलम !" सरदार उत्तेजित एवं दृढ़ स्वर में बोला—"आज जो हम अपना सर उठा सके हैं, इसकी सारी जिम्मेदारी खुद आपकी नाकाबिलियत पर है...जो शाहंशाह अपनी ऐशपरस्ती से रियाया की नींद हराम कर दे, उसके लिये इस दुनिया में जिन्दा रहना..."

"तुम मुझे कत्ल करोगे !—" आश्चर्य एवं भय से चीख उठे शाहंशाह।

"जरूरत पड़ने पर वह भी किया जा सकता है"—सरदार ने कहा—"हम डाकू हैं। दिनरात खून की नदी में गोता लगाते हैं। हमारे लिये, एक बदकार इन्सान की जान लेना मामूली बात है..."

"....."

अपने लिए अपशब्द सुनकर शाहंशाह ने क्रोध से अपना होंठ चबाया।

"आपके वालिद साहब के जमाने में भी हम लोग थे..." कहता

गया सरदार—"खुदा उन्हें जन्नत बख्शे !...उनकी सरपरस्ती में हमें कभी सर उठाने का मौका न मिला था। सल्तनत की तरफ से हमें जागीरें मिली थीं और हम लोग अमनचैन की जिन्दगी बसर करते हुए अपना पेशा भूल गये...."

"....." सुन रहे थे शाहंशाह।

"मगर जब से आपकी नापाक साया सल्तनत तातार पर पड़ी, आपने क्या-क्या जुल्म नहीं ढ़ाया ?...आपने बेकसों को सताया, उनपर कहर ढ़ाया, हमारी जागीरें जब्त कर लीं...तब हमारे सामने सिर्फ अपना पेशा ही रह गया। हमने मजबूर होकर सर उठाया—डाकूगिरी का बोलबाला हुआ...इन सारी खुराफातों के लिये आप जिम्मेदार हैं शाहंशाह !..."

चुप हो गया सरदार।

शाहंशाह भी कुछ न बोले।

बड़ी देर तक निस्तब्धता रही।

सरदार के झोपड़े के दरवाजे पर खड़ी हुई एक खूबसूरत लड़की ध्यानपूर्वक शाहंशाह को देख रही थी।

"हमने आपके साथ अभी तक कैदी का बर्ताव नहीं किया है, वह सिर्फ इसीलिये कि अब भी आप समझ जाँय...अपनी इतनी बेइज्जती देखकर अपनी आँखें खोलें—" सरदार बोला।

"तुम्हारा इरादा क्या है ?...तुम क्या चाहते हो ?—" पूछा शाहंशाह ने।

"हम चाहते हैं कि हमारी सब जागीरें हमें लौटा दी जायँ, ताकि हम फिर पाक व साफ जिन्दगी गुजार सकें...लूटना हमें सख्त नापसन्द है, मगर जिन्दगी की जरूरियात इन्सान को मजबूर कर देते हैं..."

"मैं इस बात पर गौर करूँगा—" शाहंशाह गम्भीर स्वर में बोले।

"आपको दो दिन का वक्त देना बेहतर होगा—" बोला सरदार—"इस दरम्यान हम आपको पहरे के अन्दर रखने को मजबूर हैं..."

"देखो !..." कुछ रुककर सरदार पहरेदारों से बोला—"शाहे

आलम को मेहमान खाने वाली झोपड़ी में रखो। इन पर पहरा दो और तकलीफ आराम का ख्याल रखो। इन्हें जरा भी तकलीफ होते ही तुम्हारी खैर नहीं..."

"जो हुक्म सरदार!" पहरेदारों ने कहा।

शाहंशाह एक बड़ी-सी झोपड़ी में लाये गये। आराम की सारी वस्तुयें वहाँ उपस्थित थीं।

शाहंशाह आगे का कार्यक्रम सोचने लगे।

उन्हें क्या करना चाहिये? क्या सरदार की माँगें स्वीकार कर लेनी चाहिये?

शाहंशाह का हृदय अपनी गिरफ्तारी से दुखित था और क्रोध भी उन्हें कम न था।

मगर करते क्या?

विवश थे।

यदि एक बार वे वहाँ से छूट कर जा सकते तो इन डाकुओं को ऐसी शिक्षा देते कि वे मरकर भी याद रखते।

मगर वहाँ से छूट कर निकल जाना असम्भव था।

दोपहर को शाहंशाह के लिये अच्छा खाना आया। और तीसरे पहर शराब की कई बोतलें उनके झोपड़े में भेज दी गईं और पिलाने के लिये एक सौंदर्यमयी साकी भी।

दुबली-पतली सोलह साल की छोकरी थी वह। रग-रग में जवानी थी और आँखों में हलाहल लहरा रहा था, परन्तु नयन नीचे थे।

उसे देखकर शाहंशाह चौंक पड़े।

अपने जीवन में उन्होंने वैसा निष्कपट सौंदर्य न देखा था।

और उसकी आँखें?

जैसे संसार की समग्र मादकता मर गई थी उनमें।

चकित थे शाहंशाह, यह देखकर कि जैसी हूर इन डाकुओं के पास है वैसी शायद दुनियाँ में एक भी न हो।

उसने झुककर शाहंशाह को कोर्निश की।

शाहंशाह इतना स्वागत होते देखकर अपना सारा अपमान भूल गये।

कदाचित् उनके इस विस्मरण का कारण था, आने वाली साकी का सौंदर्य।

डाकुओं ने शाहंशाह की दिलबस्तगी के लिये साकी और शरबते अनार की व्यवस्था कर दी थी।

उनका सरदार नीति-निपुण था। वह जानता था कि किसी से कुछ लेने के पहले, उसे कुछ देना भी पड़ता है।

वह शाहंशाह का स्वागत नहीं था, एक प्रलोभन था।

"मुझे सरदार ने हजूरे आलम की खिदमत में भेजा है—" उसने वीणा-झंकृत स्वर में कहा।

"तुम्हारे सरदार का शुक्रिया!—" शाहंशाह एकटक उसे देख रहे थे और वह अपने मदभरे नयन नीचे किये हुए खड़ी थी—"मैं तुम्हारे नाजुक हाथों से दो प्याले पीना पसन्द करूँगा..."

एक क्षण के लिये, जैसे उस युवती के मुख पर घृणा परिलक्षित हो उठी, मगर दूसरे ही क्षण उसने अपना भाव छिपाया।

आगे बढ़कर प्याला भर लिया उसने और शाहंशाह के पास आई।

शाहंशाह ने उसका हाथ पकड़कर अपनी गोद में खींचना चाहा; परन्तु वह छिटककर दूर हो गई।

"आलीजाह! मुझे माफ करें"—कहा उसने—"इस तरह की खिदमत मैं न कर सकूँगी!"

"कोई हर्ज नहीं!..." शाहंशाह बोले।

अपने अपमान की घूँट वे पी गये, क्योंकि वे जानते थे कि यह छोकरी जो अपना मादक शरीर लेकर उनके समक्ष उपस्थित है, वह उनके हरम की साकी नहीं है—वह है डाकुओं के गिरोह की कोई लड़की और वे डाकुओं के बन्दी हैं।

उन्हें ऐसा करने का अधिकार ही कहाँ था ?

शाहंशाह ने हाथ बढ़ाकर प्याला ले लिया और पी गये।

"तुम्हारा हुस्न लाजवाब है"—शाहंशाह बोले—"तुम्हारी जवानी खुशनुमा है..."

"....."

वह चुप रही।

उसकी मुखाकृति से यह प्रकट होता था कि शाहंशाह की बातों से उसके हृदय की घृणा बढ़ती जा रही है।

"तुम इन डाकुओं की कौन हो ?" पूछा शाहंशाह ने।

"कोई नहीं आलमपनाह !"—उत्तर मिला।

"कोई नहीं ?"—आश्चर्य हुआ शाहंशाह को—"ताज्जुब है !"

"मैं एक गरीब गाँव की लड़की हूँ आलमपनाह !"—बोली वह—"एक दिन ये सब मुझे रेगिस्तान से पकड़ लाये थे। मैं भी हुजूर की तरह कैदी ही हूँ..."

"कैदी ?..कैदी तो तुम नहीं मालूम देतीं"—शाहंशाह ने कहा—"तुम तो बिलकुल आजाद हो..."

"इस आजादी का एक सबब है आलीजाह !"—वह बोली—"सरदार मुझे अपने साथ रखना चाहता है और मैं उसे बातों ही में टालती आ रही हूँ..."

"कितने दिनों से तुम यहाँ हो ?—"

"करीब चार महीने से"—उसने कहा—"अब शाहंशाह सलामत यहाँ तशरीफ लाये हैं तो उम्मीद है कि मुझे इस कैद से छुटकारा मिल सकेगा..."

"तुम्हारी इस उम्मीद का सबब ?"—पूछा शाहंशाह ने।

"है सबब ?—" वह बोली।

"क्या मैं सुन सकता हूँ ?—"

"मेरा ख्याल है कि शाहंशाह इस कैद से छूटने के लिये परेशान हैं"—धीरे से बोली वह।

"जरूर !"—शाहंशाह बोले।

"अगर आज आधी रात को शाहंशाह यहाँ से निकल जा सकें, तो क्या अपनी फौज लेकर डाकुओं पर हमला करेंगे ?"—

"मैं उन्हें नेस्तनाबूद कर दूँगा। और तब तुम भी आजाद हो जाओगी..."

"तो आधी रात के वक्त तैयार रहियेगा..." धीरे से झुककर उसने कहा।

चली गई वह, तो शाहंशाह का कलेजा हर्ष से उछलने लगा।

शाम को सरदार कुछ देर के लिये शाहंशाह से भेंट करने आया और अत्यन्त नम्रतापूर्वक उसने बातें कीं।

शाहंशाह धैर्य के साथ अर्ध रात्रि की प्रतीक्षा कर रहे थे।

अर्द्ध रात्रि में, झोपड़ी के दरवाजे पर तैनात पहरेदार निद्रामग्न थे, परन्तु शाहंशाह जाग रहे थे।

दबे पाँव कोई शाहंशाह की झोपड़ी में घुसा। शाहंशाह समझ गये कि वह कौन है।

"सब ठीक है ?"—उन्होंने पूछा।

"हाँ ! सब सो रहे हैं—मौका बेहतरीन है"—फुसफुसाकर कहा किसी ने—"आप मेरे कपड़े पहन कर फौरन यहाँ से निकल जायँ। कोई देख भी लेगा तो मुझे समझकर कुछ न कहेगा..."

"और तुम..."

"मैं आपकी झोपड़ी में रात गुजारूँगी..."

"तुम भी साथ चलो न !..."

"नहीं ऐसा करने से आप पर खतरा आ सकता है..." उसने कपड़े उतार कर शाहंशाह को दे दिये। शाहंशाह ने उसे पहन लिया।

"तुम ऐसा क्यों कर रही हो ?"—पूछा शाहंशाह ने।

"अपने सुल्तान की जान बचाने का मुझे फख्र होगा"—उसने कहा—"अब देर न करें !"

"मैं जल्द फौज लेकर यहाँ आऊंगा...और तुम्हारा यह अहसान कभी न भूल सकूँगा...तुम्हें मुँहमागी मुराद मिलेगी...हाँ, तुम्हारा नाम ?—"

"शम्सुल !"—धीरे से बोली वह !

"अच्छा तो शम्सुल ! खुदा हाफिज—"

"खुदा हाफिज !"—उसने कहा।

और शाहंशाह दबे पाँव बाहर निकल गये। कोई उन्हें देख न सका।

● ●

पाँच सौ नौजवानों की सुसज्जित फौज लेकर शाहजादा रवाना हुआ।

शाहंशाह की गिरफ्तारी का समाचार पाकर उसे जितना दुख था, उससे अधिक क्रुद्ध भी हुआ था वह।

वह शीघ्र से शीघ्र काशगर पहुँचना चाहता था।

उसने काफिले को बहुत तेज चलने की आज्ञा दी।

पहली मन्जिल समरकन्द की सरहद पर समाप्त होती थी, मगर वह रुका नहीं।

एक दिन और एक रात तक बराबर आगे बढ़ता गया।

दूसरे दिन दोपहर के समय जब उसका काफिला शहर जोमन तक पहुँचा, तो सभी लोग थकावट से चूर हो रहे थे।

अतः शाहजादे ने सराय में रुक कर चार घण्टे तक आराम करने की आज्ञा दी।

जब मुमताज ने शाहजादे का आना सुना, तो वह अत्यन्त प्रसन्न हुई।

उसी पूर्व परिचित कमरे में दोनों की भेंट हुई।

"आ गये हजूरे आलम ?"—हँसकर बोली मुमताज।

"हाँ बानू ! आना पड़ा मुझे"—शाहजादे ने कहा।

"आखिर मेरी आरजू और किसी की बेकरारी आपको यहाँ तक खींच ही लाई"—मुमताज बोली—"हजूर की उम्र लाख बरस की हो..."

"मुमताज ! क्या शाहेआलम यहाँ रुके थे"—पूछा शाहजादे ने।

"हाँ एक रात !' —शर्माकर बोली मुमताज—"मगर जमीन के जर्रे और आस्मान के तारे में बहुत फर्क होता है आलीजाह..."

"क्या वह लड़की सराय में अब भी आती है मुमताज ?"—शाहजादे ने पूछा।

उसका संकेत शम्सुल की ओर था, जिसे मुमताज समझ गई।

बोली—"हजूर के दिल में जिसके लिए जगह हो, वह इस नाचीज सराय में क्यों आने लगी ? जब से आप गये, तब से उसकी सूरत तक नजर न आई..."

शाहजादे ने समझा कि शम्सुल ने अब भीख माँगना छोड़ दिया है और अपनी माँ के साथ गाँव में रहती हुई उसकी प्रतीक्षा कर रही होगी।

शाहजादे के हृदय में तीव्र आकांक्षा हुई कि एक बार इसी समय गाँव में जाकर उससे भेंट कर ले, मगर शाहंशाह पर आई हुई विपत्ति का स्मरण कर उसे अपने भावों की बलि देनी पड़ी।

"क्या शाहजादा सलामत यहाँ ज्यादे देर तक न रुकेंगे ?"—मुमताज ने पूछा।

"नहीं बानू ! मुझे जल्द से जल्द काशगर पहुँच जाना है"—बोला शाहजादा।

"अभी चार दिन पेश्तर ही शाहंशाह वहाँ गये हैं और अब शाहजादे आलम भी वहाँ जा रहे हैं, साथ में काफी फौज भी है...क्या सबब है !"

"शाहेआलम गिरफ्तार हो गये हैं, मुमताज।"—शाहजादे के स्वर से उसका हार्दिक दुःख प्रकट हो रहा था।

"खुदा का कहर !"—आश्चर्य से चीख उठी मुमताज—"किस चींटी के पर निकले हैं आलीजाह ?...शाहेआलम हजूर को गिरफ्तार करने की किस जलील इन्सान की हिम्मत हुई है ?"

"उन्हीं डाकुओं का यह काम है बानू !..."

"किन डाकुओं का ?...क्या उन्हीं का तो नहीं, जिन्हें आपने पिछली दफा माफी दी थी !"

"हाँ वही !"—कहा शाहजादे ने।

"कितने नासमझ हैं वे सब !..."

"अच्छा तो मुझे रुखसत दो बानू !"—उठता हुआ बोला शाहजादा—"जिन्दा रहा तो लौटती दफा मुलाकात होगी !"

"खुदा करे, शाहजादये आलम चाँद की भी उम्र लेकर जिन्दा रहें—"

शाहजादा बाहर आया।

काफिला तैयार था।

चल पड़े सब। पुनः वही तीव्र गतिशील यात्रा प्रारम्भ हुई।

तीन घण्टे रात जाते जाते काफिला काशगर पहुँच गया।

काजी ने जब शाहजादे का आना सुना और साथ में सुसज्जित फौज देखी तो अत्यन्त प्रसन्न हुआ वह।

एकान्त कमरे में सलाह-मशविरा प्रारम्भ हुआ।

"हजूर भाईजान की गिरफ्तारी हमारे लिए शर्मनाक बात है।" शाहजादा बोला।

"हमारे सारे मन्सूबे मिट्टी में मिल गये आलीजाह!"—काजी बोला—"हमारी फौज थोड़ी थी, इसलिये डाकुओं पर अचानक हमला करने का इरादा था, मगर डाकुओं ने ही हमला कर दिया..."

"मेरी समझ में ही नहीं आता कि डाकुओं का रवैया जानते हुए भी शाहेआलम ने ऐसी गलती क्यों कि?"—शाहजादा बोला—"उनपर, दिन के वक्त हमला होना चाहिए था काजी साहब! क्या आप नहीं जानते कि डाकू लोग दिन को सोते और रात को जागते हैं?..."

"बजा है आलमपनाह!"—काजी नम्र स्वर में बोला।

"इस वक्त आप के पास कितनी फौज है?"—शाहजादे ने पूछा।

"उनकी गिनती अंगुलियों पर ही हो सकती है आलीजाह!"—काजी बोला—"डाकुओं के इस हमले से हमारे आधे से ज्यादा सिपाही मौत के शिकार हुए और बाकी तितर बितर हो गये हैं..."

"आप उन्हें जल्द से जल्द इकट्ठा कर लें"—शाहजादे ने कहा—"कम से कम आप शहर की हिफाजत का तो इन्तजाम किये रहें।"

"शाहंशाह के पास जल्द से जल्द मदद पहुँच जानी चाहिए आलमपनाह!"—कहने लगा काजी—"वे डाकू हैं उनके हाथ में तलवार है और दिल में बेरहमी। शाहेआलम की जान पर खतरा है..."

"काजी साहब!"—हँसकर बोला शाहजादा—"सयासी मामलों में दखल देने के लिए शायद आपका दिमाग बहुत बूढ़ा हो चला है..."

"हजूर का मतलब?—"

"डाकू यह अच्छी तरह जानते हैं कि अगर वे शाहंशाह को कत्ल कर देंगे तो उन्हें कुछ न मिलेगा"...शाहजादे ने कहा—"मगर उनके जिन्दा रहने पर और उन्हें कैद रखने से उन्हें कुछ-कुछ मिलने की उम्मीद हो सकती है..."

"तो क्या आलीजाह का यह अन्दाज है कि शाहेआलम की जान खतरे से बाहर है ?"—आश्चर्य भरे स्वर में बोला काजी।

"सिर्फ खतरे से बाहर नहीं ?...मेरा अपना ख्याल है कि डाकुओं ने उन्हें निहायत आराम के साथ रखा होगा..."

"या रब ! ऐसा हो तो क्या बात है ?" काजी ने कहा।

"काजी साहब !..." शाहजादे ने पुकारा।

"इरशाद आलीजाह !..."

"मेरी फौज तो काफी है न ?"

"काफी से भी ज्यादा हैं हजूर !..."

"मैं कल सुबह ही यहाँ से कूच करूँगा—" शाहजादा बोला—"मैं डाकुओं पर दिन में हमला करूँगा..."

काजी से जब उसकी बातें समाप्त हुईं तो रात बीतने में केवल दो घण्टे बाकी थे।

उसी समय काजी के प्यादे ने आकर खबर दी—"हूजूर ! आपसे एक औरत मिलना चाहती है, उसके मुँह पर बुरका पड़ा है।"

"औरत ?—" आश्चर्य से बोला काजी—"कौन औरत है वह जो मुझसे बे वक्त मिलना चाहती है, खैर ! औरत ही है न !..."

"जी हाँ, शाहंशाह की कोई खबर लाई है"—प्यादा बोला।

"उसे फौरन भेजो !"

वह औरत आई, तो उसका डीलडौल देखकर काजी को कुछ आशंका हुई। उधर वह औरत भी शाहजादे को वहाँ देखकर कुछ चौंकी।

औरत ने अपना बुर्का हटाया तो दोनों चौंक पड़े।

"शाहंशाह सलामत !—" आश्चर्य-विस्फारित नेत्रों से देखता हुआ बोला काजी।

"हजूर भाईजान !"—शाहजादा विस्मयपूर्ण स्वर में बोला।

वे शाहंशाह ही थे। बोले—"खुदा का शुक्र! एक कमसीन छोकरी की मदद से मौत के मुँह से निकल आया... तुम कब आये रशीद?"

"मुझे कुछ ही घंटे हुए हैं यहाँ आये"—शाहजादा बोला—"काजी साहब की खबर पाकर मैं फौज के साथ बेतहाशा यहाँ भाग आया हूँ..."

"फौज भी तुम्हारे साथ है?—" बोले शाहंशाह—"तो ठीक है। इसी वक्त फौज को तैयार होने का हुक्म दो। अगर सुबह तक हमला न हुआ, तो उस छोकरी की जान आफत में पड़ जायगी...मैं खुद फौज के साथ जाऊँगा और तुम शाहजादे, सुबह होते ही यहाँ से शाहीमहल को रवाना हो जाना। यहाँ अब तुम्हारा कुछ भी काम नहीं! इस वक्त शहर तातार में तुम्हारा रहना निहायत जरूरी है—"

"आप बहुत थक गये होंगे भाईजान..."

"सात मील से पैदल आ रहा हूँ—" बोले शाहंशाह—"थक जरूर गया हूँ, मगर परवाह नहीं। इस दफा हमारी फतह जरूर होगी। तुम यहाँ से सीधे तातार चले जाना। बलवाइयों का अन्देशा है और मलिकये आलम अकेली हैं, न जाने क्या गुजरे उनपर?"

"जो हुक्म!"—शाहजादे ने कहा।

रातों रात फौज लेकर शाहंशाह, डाकुओं के कबीले की ओर रवाना हो गये।

● ●

सवेरा होते ही शाहजादा काशगर से चल पड़ा!

दो ऊँटोंवाला एक सुन्दर गाड़ी पर वह सवार था और उसके साथ थोड़े से अंगरक्षक थे।

यद्यपि शाहजादा वहाँ रुक कर, शाहंशाह की विजय का समाचार सुनकर, तब जाना चाहता था, परन्तु शाहंशाह की आज्ञा से उसे प्रस्थान करना ही पड़ा।

तीसरे पहर के लगभग वह शहर जोमन की सरहद पर पहुँचा।

उसने अपने अङ्गरक्षकों को सीधे सराय में जाकर आराम करने की आज्ञा दी और अपनी गाड़ी को, शम्सुल के गाँव में जाने वाली पगडंडी पर चलने का हुक्म दिया।

इस समय उसका हृदय अत्यन्त प्रसन्न था, क्योंकि युगों के विछोह के बाद, वह अपनी प्रेयसी से मिलने जा रहा था।

परन्तु उस प्रसन्नता के प्रवाह में, न जाने कैसा एक वैकल्य-सा भर-भर उठता था और शाहजादा चौंककर अपना हृदय टटोलने लगता था।

यह तड़पन-सी क्यों उठ रही है उसके हृदय में ?

यह जलन क्यों व्याप्त हो रही है उसकी प्रसन्नता के आवरण में ?

गाड़ी तेजी से आगे बढ़ती गई।

गाँव आ गया।

और शाहजादे का हृदय एकाएक जोरों से धड़क उठा।

लगा, जैसे गाँव में घोर निरवता-सी विराजमान हो।

जैसे वहाँ का कण-कण रुदन कर रहा हो।

जैसे समग्र वातावरण चीख-चीख कर किसी की याद में बेचैनी प्रदर्शित कर रहा हो।

गाड़ी रुक गई शम्सुल के दरवाजे पर।

उतर कर शाहजादा झोपड़ी के पास आया।

"शम्सुल ?..." उसने पुकारा।

"....."

कोई उत्तर न आया।

पास के वृक्ष पर बैठी हुई एक चिड़िया करुण स्वर से रो उठी।

झोपड़ी में से बुढ़िया के धीरे से कराहने की आवाज सुन पड़ी।

शाहजादा आशंकित हृदय से अन्दर घुसा।

बुढ़िया चारपाई पर पड़ी थी, रुग्ण अवस्था में।

"कौन है ?"—पैरों की आहट पाकर बुढ़िया ने शिथिल स्वर में पूछा।

"मैं हूँ अम्मीं !..." शाहजादे ने कहा।

"शाहजादे साहब हैं क्या ?"—बुढ़िया चौंककर बोली। उसका सारा शरीर एक बार काँप कर शिथिल हो गया। वह शाहजादे का स्वर पहिचान गई थी।

"हाँ मैं ही हूँ—" कहा शाहजादे ने।

"आओ बेटा !"—बुढ़िया उठकर बैठने की कोशिश करती हुई बोली—"घर में आग लगाकर, अब जलने का तमाशा देखने आये हो क्या ?"

व्यंगात्मक शब्द सुनकर शाहजादा दुखित हो उठा। सोचा उसने, शायद बुढ़िया अत्यधिक बीमार है।

"देख लो बेटे !"—बुढ़िया कह रही थी—"देख लो ! जो आग तुमने लगाई थी, उसकी लपटें अब तो आस्मान छू रही हैं, शायद अब जल्द ही यह छोटा-सा घर खाक हो जाने वाला है..."

"तुम्हारी बातें मैं समझ नहीं पा रहा हूँ अम्मी !—"शाहजादे ने नम्र स्वर में कहा।

"समझ भी नहीं सकते तुम शाहजादे !"—बुढ़िया बोली—"शुरू से ही तुम अमीरी में रहे हो, गरीबी की बातें समझ कैसे सकते हो तुम...."

"....."

बुढ़िया क्या बक रही है, यह पहेली थी शाहजादे के लिये।

"आग लगानेवालों की आँखों में तड़पनेवालों के लिये आँसू नहीं होते शाहजादे !"—बुढ़िया ने कहा—"उन्हें सिर्फ जलती हुई लपटों का तमाशा देखना पसन्द है..."

"तुम्हारी तबीयत ज्यादा खराब है"—शाहजादा बोला—"अपनी बेचैनी कम करो अम्मी !...शम्सुल कहाँ है !..."

"शम्सुल ?..."

एक झटके के साथ बुढ़िया उठ बैठी और उसने हाथ बढ़ाकर, शाहजादे को पकड़ना चाहा।

शाहजादा सहमकर पीछे हट गया। उसे प्रतीत हुआ कि यह पागल बुढ़िया उसका गला घोटना चाहती है।

उस समय बुढ़िया की आकृति अत्यन्त भयंकर हो उठी थी।

"शम्सुल को पूछते हो ?"—गरज कर बोली बुढ़िया—"हमें तबाह कर, हमारी दौलत लूटकर, अब फिर दौलत की खोज में आये हो ?...दगाबाज डाकू ! देख सको, तो एक माँ का सीना चीरकर देखो...मेरे दिल में तड़पती हुई माँ की मुहब्बत देखो...तुमने शम्सुल को हमसे छीन लिया, हमारी जान ले ली, अब क्या चाहते हो तुम ?..."

तेजी के साथ बोलने के कारण बुढ़िया हाँफने लगी थी।

शाहजादा चुपचाप सर नीचा किये हुए खड़ा था।

वह चौंका।

किसी ने पीछे से उसके कंधे पर हाथ रखा था।

घूमकर देखा तो नसीर !

आकृति अत्यन्त गम्भीर थी उसकी, आँखों में क्रोध की लालिमा आ बैठी थी।

"मेरे साथ आओ !"—बोला नसीर और शाहजादे का हाथ पकड़ कर झोंपड़ी के बाहर चला।

बुढ़िया चीख उठी, नसीर का स्वर सुनकर।

चिल्लाकर बोली—"यह डाकू है...यही शम्सुल को ले गया है... इसका गला उतार डालो ! इसे मार डालो..."

नसीर और शाहजादा, दोनों बाहर आये !

बुढ़िया अब तक चिल्ला रही थी—"इसे मार डालो...बेटे !... नसीर ! इसे कत्ल कर दो..."

विक्षिप्त बुढ़िया के अस्तव्यस्त स्वर से माता की प्रगाढ़ ममता झाँक रही थी।

"क्यों आये हो यहाँ ?"—अत्यन्त रूखे स्वर में पूछा नसीर ने।

"....." चुप रहा शाहजादा। कुछ कह न सका वह और कहता भी क्या ?

"अच्छा हुआ तुम आ गये"—उत्तेजित स्वर में बोला नसीर—"मैं बहुत दिनों से मिलना चाहता था और इसीलिये मैं तातार आनेवाला था...मगर तुम खुद यहाँ आगये !..."

"तुम क्यों मुझसे मिलना चाहते थे नसीर ?—" संयत स्वर में पूछा शाहजादे ने।

"हमारा खंजर तुम्हारे खून का प्यासा था शाहजादे !"

चौंक पड़ा शाहजादा, नसीर के हाथों में एक भयानक खंजर देखकर।

"मैंने क्या खता की है नसीर ?"

"अब भी नहीं समझ सके तुम ?"—गरज पड़ा नसीर—"तुमने शम्सुल को हमसे छीन लिया। हम खुद उसके हाथ तुम्हें सौंपने वाले थे मगर तुमने दगा की और चोरी चोरी उसे अपने साथ ले भागे, हमसे कहा भी नहीं। हम तड़पे, रोये और तुम्हारे जान के प्यासे बन गये..."

"क्या कहते हो तुम ?"—आश्चर्य से बोला शाहजादा—"कहाँ है शम्सुल ?"

"बड़े मासूम बन रहे हो शाहजादे !—" बोला नसीर—"लो, कान खोलकर सुन लो—शम्सुल, तुम्हारे जाने की रात से ही गायब है..."

"क्या वह लौट कर घर नहीं आई ?—" शाहजादा रोनी आवाज में बोला।

"नहीं ! जब वह तुम्हारे साथ चली गई तो यहाँ कैसे आ सकती थी ?...उस नादान छोकरी ने अपनी माँ की मुहब्बत भी भुला दी..."

सारी बातें अब शाहजादे की समझ में आ गईं। वह जान गया कि शम्सुल अवश्य किसी विपत्ति में पड़कर अपनी जान खो बैठी है।

"नसीर !...मेरे दोस्त !..." शाहजादा बोला—"अपना खंजर कमर में छिपा लो मैं बेकसूर हूँ। शम्सुल मेरे साथ नहीं गई..."

"तुम्हारे साथ नहीं गई—" नसीर के काँपते हाथ से छूटकर खंजर झन्न से जमीन पर गिर पड़ा—"या खुदा ! क्या राज है ? कहाँ गई वह ?"

"मैं खुद उसके लिए परेशान था नसीर ! और आज उसे लेने आया था—" कहा शाहजादे ने।

"तुम बेकसूर हो शाहजादे। क्या तुम सचमुच बेकसूर हो ?—" नसीर बोला—"खुदा जानता है, हम तुम्हें ही कसूरवार समझते थे..."

"कसूरवार समझते हो तो उठा लो खंजर !" कहने लगा शाहजादा—"अब शम्सुल चली गई, तो यह तड़पन मेरे लिए बरदाश्त के बाहर है। तुम अपने खंजर से मेरी तकलीफों का खात्मा कर दो। खुदा की कसम, मैं तुम्हारी इस नेकी को मौत के बाद भी याद रखूँगा..."

"शाहजादे !—" धीरे से बोला नसीर—"तकलीफों से ऊबकर अपनी जान देना चाहते हो ?...बुजदिल कहीं के !...अब मेरा खंजर कमजोर हो चला है। हाथों में उसे पकड़ने की ताकत नहीं रही...."

"तुम बूढ़ी अम्मी को समझाना नसीर !—" शाहजादा बोला—"मैं शम्सुल की खोज करूँगा..."

"हमें माफ कर दो शाहजादे, शम्सुल मुझे बहन से ज्यादा प्यारी थी। उसके गायब होने से मेरा गुस्सा तुम्हीं पर आ गया..."

"ऐसी गलतफहमियाँ हो ही जाती हैं नसीर !"—शाहजादे ने कहा—"मैं जा रहा हूँ। क्या उम्मीदें लेकर आया था और कैसी मायूसी लेकर जा रहा हूँ, यह मेरा दिल ही जानता है।"

शाहजादा अपनी गाड़ी पर बैठ गया।

गाड़ी चली, तो शाहजादे के गाल आँसुओं से भींग गये थे।

अपने को सम्हालने का प्रयत्न करते-करते करुणा का आवेग और भी तीव्रतर हो उठा।

सराय पहुँचा, तो मुमताज को यह देखकर महान् आश्चार्य हुआ कि शाहजादे की दशा अत्यन्त सोचनीय हो गई है।

"बहुत जल्दी लौटे आप ?—" पूछा मुमताज ने।

"हाँ मुमताज !..." छोटा-सा उत्तर दिया शाहजादे ने।

"शाहंशाह सलामत तो खैरियत से हैं ?—"

"वे डाकुओं की कैद से छूट चुके हैं बानू !—"

"तो शाहजादे आलम की इस मायूसी का सबब क्या है।" साहनुभूतिपूर्ण स्वर में पूछा मुमताज ने।

शाहजादे को ऐसा लगा, जैसे वह इस युवती के सामने रो पड़ेगा। उसके स्वर में इतनी सहानुभूति थी कि शाहजादे की करुणा, सागर हो उठना चाहती थी।

"मेरी दुनिया उजड़ गई मुमताज ! चमन आबाद होने के पहले ही बरबाद हो गया" बड़े कष्ट से कहा उसने।

"आलीजाह का मतलब ?—"

"शम्सुल चली गई बानू !...न जाने कहाँ ?—"

मुमताज चौंक पड़ी। शाहजादे की आँखों से कई बूँद आँसू टपककर उसके पैरों के पास गिर पड़े थे।

उस रात शाहजादे ने कुछ न खाया। मुमताज ने हठ भी न किया।

प्रातःकाल होते ही शाहजादा तातार के लिए रवाना हो गया।

● ●

प्रातःकाल का समय।

आज डाकुओं के गाँव का वातावरण उत्तेजित हो उठा।

सब डाकू, उनकी स्त्रियाँ, उनके बच्चे एक स्थान पर भयभीत खड़े हैं और उनके सामने हाथ में भयानक हंटर लिये हुए सरदार उपस्थित है।

"कैदी भाग गया!—" गरजकर बोला सरदार—"डूब मरना चाहिए तुम लोगों को ..वह अपने आप कभी भाग नहीं सकता था। उसे किसी मक्कार ने मदद दी है, किसी गद्दार ने हमारे साथ गद्दारी की है..."

"....."

सभी खड़े थे। पैरों में कम्पन था।

"तुम सब जानते हो, मैं किसी भी गद्दार को माफ नहीं कर सकता—" सरदार बोला—"बेहतर है कि जिसने उसकी मदद की हो, वह सामने आ जाय..."

"....." फिर भी चुप रहे सब।

"जवाब दो!" पैर पटककर बोला वह—"मेरी बातों का जवाब दो! बोलो, किसने भगाया?"

"....."

"चुप हो तुम?...मगर मैं कसूरवार को खोज निकालूँगा....सरदार की आँखें बिजली हैं, जानते हो तुम लोग?..."

हंटर लेकर सरदार आगे बढ़ा और पास आकर एक-एक डाकू का चेहरा ध्यानपूर्वक देखने लगा।

पर किसी डाकू की मुखाकृति पर उसे अपराध के लक्षण दृष्टिगोचर न हुए।

तब वह औरतों की ओर बढ़ा।

एकाएक एक लड़की के सामने आकर वह खड़ा हो गया।

वह आँखें नीची किये खड़ी थी।

"मेरी ओर देख शम्सुल!" सरदार चिल्लाया।

लड़की ने आँखें ऊपर उठाईं।

और सरदार के हाथ का भयानक हंटर सटाक से उसके कोमल शरीर पर जा पड़ा।

लड़की चीख पड़ी।

"नाचीज लड़की! तूने उसे भगाने में मदद दी है?"—सरदार गरजा।

सब शम्सुल की ओर देखने लगे।

"इसे उस पेड़ के साथ बाँध दो!"—सरदार ने डाकुओं को आज्ञा दी।

डाकुओं ने आगे बढ़कर शम्सुल को पेड़ से बाँध दिया। वह कुछ न बोली।

सरदार हंटर लिए हुए उसके पास आया।

"बोल, तूने उसे क्यों मदद दी?—" पूछा सरदार ने।

"मैंने कुछ नहीं किया है सरदार!"—शम्सुल ने कहा।

"कुछ नहीं किया है तूने!" गरजा वह—"मेरी आँखों को धोखा देना चाहती है?...मक्कार! तेरी सूरत ही कह रही है कि तू दगाबाज है..."

सट्ट! सट्ट! सट्ट! सट्ट!

सरदार का हंटर गतिमान हो उठा।

जहाँ उसका सम्पर्क हुआ, गोरी चमड़ी उधड़कर खून छलछला आया।

फिर भी शम्सुल चुप रही।

उसकी चुप्पी सरदार का क्रोध द्विगुणित कर रही थी और हंटर पूर्ण वेग से प्रचालित था।

"अब भी बताती है या नहीं ?"--गरज उठा वह ।

"नहीं दृढ़ स्वर में बोली वह ।

"नमक हराम !"—चिल्लाया सरदार —"नमक लाओ..."

एक डाकू दौड़कर महीन पीसा हुआ नमक ले आया ।

"छिड़क दो इसके जख्मों पर !—" सरदार ने आज्ञा दी ।

शम्सुल के रक्त-प्लावित घाव, नमक का आलिङ्गन कर उबल उठे ।

मगर तब भी उसकी जबान शान्त ही रही । मुँह से उफ तक न निकला ।

धड़ाम !

उसी समय कहीं से तोप छूटने की गम्भीर गर्जन सुन पड़ी ।

सरदार चौंक उठा ।

उसने मुड़कर देखा—

कबीले के दक्षिण ओर की बहुत-सी झोपड़ियाँ चिल्ला-चिल्ला कर जमीन पर लोट पड़ी हैं । उनमें आग लग गई है, लपलपाती हुई लपटें आसमान छूने वाली थीं ।

धड़ाम !

तोप पुनः गरज उठी ।

इस बार सरदार ने और बहुत-सी झोपड़ियाँ जलती देखी; साथ ही औरतों तथा बच्चों की करुण पुकार कानों में पड़ी ।

"हमला !..." चिल्लाकर बोला सरदार ।

उसी समय खतरे का बिगुल बज उठा । सभी डाकू हथियार से लैस हो गये ।

मगर शाही फौज का हमला अचानक और तीव्रगति से हुआ था ।

डाकू डट कर मुकाबला करने लगे । इस समय उनके सामने जीवन मरण का प्रश्न था ।

शाही फौज भी प्राणपण से युद्ध कर रही थी ।

तोप का मुँह अबाध गति से आग उगल रहा था ।

यह आक्रमण डाकुओं के लिए मृत्यु का दूत था।

देखते-देखते सारा गाँव खँडहर में परिवर्तित हो गया। आग की लपटें आकाश छूने लगीं।

सरदार ने देखा कि अब उसकी हार निश्चित है तो, वह शम्सुल को मारने के लिए लपका।

उसी समय धाँय की आवाज हुई और बन्दूक की एक गोली सरदार के पैर में आ लगी।

लड़खड़ा कर गिर पड़ा वह।

उसके पीछे थोड़ी दूर पर शाहंशाह तातार हाथ में बन्दूक लिए खड़े थे।

उनका संकेत पाकर दो सिपाहियों ने सरदार की मुश्कें कस दीं और दो ने आगे बढ़कर शम्सुल के बन्धन खोल दिए।

शम्सुल पीड़ा से बेचैन थी—मगर इस आजादी का आनन्द उस पीड़ा से बढ़कर था।

"तुम्हें बहुत तकलीफ हुई शम्सुल!"—शाहंशाह बोले—"मुझे अफसोस है कि मैं वक्त से पहुँच न सका...इस वक्त भी न पहुँच सकता, अगर शाहजादा अपनी फौज लेकर न आ पहुँचा होता...."

शाहजादे का आगमन सुनकर शम्सुल का हृदय उत्फुल्ल हो उठा।

उसे प्रतीत हुआ, जैसे दुख की घड़ियाँ बीत गई हों और अब सुख का सूर्योदय होने ही वाला है।

उसने शाहजादे को देखने की लालसा से चारों ओर दृष्टि डाली मगर वह कहीं दिखाई न पड़ा।

निराश हो उसने दृष्टि फेर ली, मगर आँखें आशा से भर कर कभी-कभी इधर-उधर देख लेती थीं।

"अब तो तुम खुश हो न कि तुम्हें इस खौफनाक कैद से निजात मिली?"—पूछा शाहंशाह ने।

"निहायत खुश आलमपनाह!" शम्सुल ने कहा।

मार-काट और तोपों के गोलों ने सब कुछ तहस-नहस कर डाला था।

जो दस-बीस डाकू बचे, वे सरदार के साथ गिरफ्तार कर लिए गये।

शाही सेना, विजयमाल पहने काशगर शहर की ओर चल पड़ी।

शाहंशाह और शम्सुल शाही ऊँट पर सवार थे।

जब काजी ने शाहंशाह के विजय का समाचार सुना, तो वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसके सर पर से एक भारी विपत्ति टल गई थी।

शाम को शाहंशाह एक सजे हुए कमरे में बैठे थे। वह मयानक तातारी औरत कमर में सैकड़ों छुरे लटकाये, उनके सामने खड़ी थी।

"खातू !..." शाहंशाह ने पुकारा।

"इरशाद आलीजाह !"—खातू ने सर झुकाया।

"वह जो नई छोकरी आई है"—बोले शाहंशाह—"उसके जख्मों की पूरी हिफाजत करो, मैं उसे जल्द से जल्द अपनी साकी बनाना चाहता हूँ..."

"उसके जख्म कारी नहीं हैं आलमपनाह ! एक रात में ही वह दुरुस्त हो जायगी" खातू ने कहा।

"तो क्या वह कल साकी का काम अंजाम दे सकेगी ?"

"बेशक हजूरेआलम !"—बोली खातू—"मगर वह लड़का बहुत गुस्ताख जाहिर होती है आलीजाह।"

"शाही रुतबा उसे अदब और तहजीब सिखा देगा"—शाहंशाह के मुख पर क्रूर मुस्कराहट थी।

कोर्निश करके चली गई खातू।

दूसरे दिन।

शाहंशाह उसी कमरे में बैठे थे।

पास ही सुराही और प्याला रखा था।

आकर्षक परिधान धारण कराकर शम्सुल उनके सामने पेश की गई।

"आओ तितली !"—वासनामिश्रित हँसी हँसते हुए बोले शाहंशाह—"वल्लाह ! क्या गजब का हुस्न है ..मरहबा !..."

सर नीचा किए हुए खड़ी रही शम्सुल ।

यहाँ का वातावरण उसे घृणित लग रहा था ।

वह यहाँ क्या आशा लेकर आई थी और क्या हो रहा था ?

"तुम्हारी आँखें !"—कह रहे थे शाहंशाह—"शबाब और शराब से भरी हुई हैं !..."

"....."

शम्सुल भयभीत हो उठी थी, शाहंशाह की भंगिमा देखकर ।

कामुकता भरी थी, शाहंशाह के रग-रग में ।

"आगे बढ़ो हूर !"—शाहंशाह फिर बोले—"शर्म छोड़ो, आज तुम्हें शाहेआलम ने साकी का रुतबा दिया है । अपने नाजुक हाथों से शरबते अनार पिलाओ..."

"....."

"मुझे मदहोश बनाकर अपने शबाब के दरिया में डूबने दो..."

"....."

फिर भी निश्चल खड़ी रही शम्सुल ।

न तो वह आगे बढ़ी और न सर ऊपर उठाया ।

"आगे बढ़ो !"—शाहंशाह की आवाज कड़ी हो गई थी—"खामोश रहकर मेरी तौहीन न करो..."

"....." बोलना चाहकर भी न बोल सकी वह ।

"जबान खोलो अपनी"—गरजे शाहंशाह—"तुम शाहंशाह के सामने खड़ी हो, मेरा हुक्म है कि आगे बढ़ो—प्याला उठाओ ।

"किसकी मजाल है कि आलीजाह की हुक्मउदूली कर सके"—धीरे से बोली शम्सुल—"मगर मुझे माफ फरमायें आलमपनाह !"

"क्या बात है ? क्या तुम यह नहीं कर सकती ?"

"नहीं हजूरआलम !"

"सबब ?...इसका सबब ?"

"मैं बदनसीब हूँ आलीजाह ! ऐसा काम मुझे नापसन्द है..." शम्सुल ने कहा।

"यह डाकुओं का गाँव नहीं है शम्सुल !"—शाहंशाह बोले—"तुम शाहंशाह की मर्जी के खिलाफ नहीं चल सकती यहाँ...सजाये मौत है इसके लिए..."

"अपनी अस्मत लुटाने के बदले मुझे मौत ही पसन्द है शाहेआलम हजूर !..."

"जबाँदराज छोकरी !—" गरज कर बोले शाहंशाह—"तुझे ऐश व इशरत से नफरत है ? तू मौत चाहती है ?..."

"....."

"चुप क्यों है ? क्या सोच रही है ?—" पूछा शाहंशाह ने

"सोच रही हूँ आलमपनाह !—" बोली शम्सुल—"कि इन्सान इतनी जल्दी अहसान कैसे भूल जाता है..."

"अहसान ?—" तड़पे शाहंशाह—"तूने मुझपर अहसान किया है। मगर यह न भूल कि शाहेआलम के पास इतनी दौलत है कि वह करोड़ों अहसान खरीद सकता है।"

"अहसान के सामने दौलत नाचीज है आलीजाह।"

"मगर दौलत ही सब कुछ है छोकरी !—"

"या रब ! डाकुओं के उस बदनसीब कैदी की आवाज में और शाहे आलम हजूर की इस आवाज में कितना फर्क है..."

न जाने कैसे कह दिया शम्सुल ने।

तड़प कर शाहंशाह उठ खड़े हुए।

"खातू !..." पुकारा उन्होंने।

"आलीजाह !...." खातू ने आकर कोर्निश की।

"यह छोकरी अपने नसीब का जगना देखकर घबड़ा उठी है—"

बोले शाहंशाह—"इसे ले जाकर, इसके नाखूनों में कीलें चुभो दो और तब तक न निकालो, जब तक कि यह रजामन्द न हो जाय..."

"जो हुक्म हजूरे आलम !—"

खातू शम्सुल को घसीटते हुए बाहर ले गई।

शाहंशाह पलंग पर आ बैठे।

थोड़ी देर के बाद बगल के कमरे से शम्सुल के चीखने की आवाजें आने लगीं।

उसके मासूम नाखूनों में कीलें चुभाई जा रही थीं।

शाहंशाह क्रूरतापूर्वक हँसते रहे, बड़ी देर तक।

खातू ने आकर कोर्निश की।

"क्या वह रजामन्द हो गई ?..." पूछा शाहंशाह ने।

"नहीं आलमपनाह !..." खातू ने कहा।

"उसके नाक और मुँह में कपड़े ठूस दो..." शाहंशाह ने दूसरा हुक्म दिया।

खातू चली गई।

थोड़ी देर बाद शम्सुल का चीखना भी बन्द हो गया।

नाक और मुँह में कपड़े ठूस देने के कारण बोलना तो क्या, साँस लेना भी दूभर हो रहा था शम्सुल के लिए।

"क्या वह तैयार हो गई ?—" खातू को देखकर पूछा शाहंशाह ने।

"उसने हजूर को शरबते अनार पिलाना मंजूर कर लिया है..." बोली खातू।

"और ?—"

"और कुछ नहीं कर सकेगी वह ?—"

"इतना ही बहुत है—" शाहंशाह बोले—"वक्त आने पर वह अपने आप रजामन्द हो जायगी...उसे कल मेरे सामने फिर पेश करो..."

दूसरे दिन।

डरते-डरते काँपते पैरों से शम्सुन्न ने प्याला भरा और शाहंशाह के पास आई।

शाहंशाह ने उसकी कलाई मजबूती के साथ पकड़ ली और उसे पलंग पर बैठा लिया। डर गई थी शम्सुन्न। चीखते-चीखते रह गई वह और प्याला उसके हाथों से गिरते-गिरते बचा।

शाहंशाह ने शरबते अनार पी।

उन्हें असीम तृप्ति का अनुभव हुआ।

मगर शम्सुन्न का चेहरा जर्द पड़ गया था।

वह न जाने किस धारा में बही जा रही थी।

शाहंशाह की साकी बनना वह कभी स्वीकार न करती, यदि उसे शाहजादे से पुनः मिलने की आशा न होती।

उसने सोचा था—यों तो उसकी जान तड़प-तड़प कर चली जायगी—

मगर यदि वह जीवित रही, तो शाहंशाह के साथ तातार चलकर वह शाहजादे का दर्शन कर सकेगी।

इसी बलवती आशा ने उसे ऐसा घृणित कार्य करने को विवश किया था।

मगर क्या उसकी यह आशा सफलीभूत होगी?

क्या वह शाहंशाह की साकी बनकर अपनी मुहब्बत की आखिरी मंजिल तक पहुँच जायगी?

चाहे जो हो मगर अपने शरीर पर कोई कलंक न आने देगी वह—यही उसका दृढ़ निश्चय था।

"मेरा ख्याल है कि अब तुम्हारा दिमाग दुरुस्त हो गया है!—" शाहंशाह ने कहा।

"आलमपनाह की मेहरबानी है!—" शम्सुन्न बोली।

"मुझे, तुमको तकलीफ देने का सख्त अफसोस है...तुम जानती हो

कि मैं शाहंशाह हूँ। मैं रहमदिल भी हूँ और बेरहम भी...अपनी मर्जी के खिलाफ मैं कुछ भी बरदाश्त नहीं कर सकता..."

"....."

"तुम खौफ न करो—" बोले शाहंशाह—"तुमने मेरी बात मान ली है, तो मैं भी तुम्हारे मर्जी के खिलाफ कभी तुम्हारे बदन से बेजा हरकत न करूँगा...मगर मेरा यकीन है कि बगैर किसी मर्द के साथ के, औरत को जिन्दगी का लुत्फ नहीं। तुम्हें भी एक न एक दिन अपनी ख्वाहिशों से मजबूर होकर मेरे सामने झुकना पड़ेगा..."

"अगर मैं न झुकूँ तो शाहंशाह मेरे साथ क्या सलूक करेंगे ?—"

"शम्सुल !—" मुस्कुरा पड़े शाहंशाह—"तुम्हारी अदा ने मेरे दिल में जगह करली है। अब मैं बुड्ढा हो चला हूँ। जिस्मानी लज्जत उठाने की चाह अब उतनी तेज नहीं रह गई है। अगर तुम मेरे आगे झुकना पसन्द न करोगी, तो मैं भी मौत तक तुम्हारे हाथ से सिर्फ शरबते अनार पीता हुआ, सब्र कर लूँगा..."

शाहंशाह इस समय अत्यन्त नम्र हो रहे थे।

पहली बार शम्सुल के होठों पर मादक हँसी खिल उठी।

बोली वह—"इसके लिये हजार शुक्रिया हजूरे आलम !....मगर शायद मैं चाहूँ कि शाहे आलम हजूर शरबते अनार से भी बाज आयें, तो ?"

"तो तुम्हारे लिये वह भी कर सकूँगा—" शाहंशाह ने कहा—"शरबतेअनार न सही, तुम्हारी आखों की शराब ही सही..."

शम्सुल के नेत्र प्रसन्नता से चमक उठे। यदि वह एक पथ-भ्रष्ट सम्राट को सुधार सकी, तो उसे कितना यश मिलेगा ?

मगर यह सुधार धीरे-धीरे क्रमशः होगा। शम्सुल ने अपने प्रियतम के बड़े भाई को बचाने का दृढ़ संकल्प कर लिया।

चौथे दिन शाहंशाह का काफिला तातार की ओर चल पड़ा। इस

बार वे शहर जोमन की सराय में न रुके। सीधे समर कन्द की सरहद तक चले आये। शम्सुल मां उनके साथ थी।

● ●

जब से शाहजादा रशीद काशगर से लौटकर आया है, उसकी अवस्था चिन्ताजनक है। वह दिन रात अपने प्रकोष्ट में पड़ा रहता है। खाना-पीना बहुत कम कर दिया है उसने।

उसकी दशा देखकर मल्का बहुत चिन्तित रहती हैं।

वे शाहजादे से यह सुन चुकी हैं कि उसकी प्रियतमा कहीं लुप्त हो गई है। ऐसी दशा में वे उसे किस प्रकार धैर्य दें, यह उनकी समझ में नहीं आता था।

इस समय शाहजादा शोकातुर होकर अपने कमरे में पलंग पर लेटा है।

उसके पास मल्का बैठी हैं।

"तुम अपने को मिटाने पर तुल गये हो शाहजादे!—" मल्का ने कहा।

"अब तो मिट जाना ही बेहतर है मामीजान!—" बोला शाहजादा।

"नादान लड़के!—" मल्का बोलीं—"तुम्हारी जिन्दगी के दौरान में वैसी बहुत-सी लड़कियाँ मिल जायँगी..."

"उन्हें लेकर मैं क्या करूँगा मल्का?—" शाहजादे ने कहा—"जिसे चाहा, जब वही न मिल सकी, तो जिन्हें नहीं चाहता वे मिलकर क्या करेंगी?"

"मगर एक बेवफा के पीछे अपनी सेहत बरबाद करना, उल्फत के थपेड़े सहना, कहाँ तक वाजिब है शाहजादे?—" पूछा मल्का ने।

"दिल नहीं मानता मामीजान ! मेरा दिल मेरे दिमाग से भी नादान है—"

"तुम मर्द हो रशीद !...मगर क्या तुममें बरदाश्त करने की जरा भी ताकत नहीं !...."

"नहीं मल्का ! लोहे का तीर इन्सान बरदाश्त कर सकता है, मगर उल्फत का तीर क्या कभी बरदाश्त कर सका है कोई..."

"कोई ?...मेरी ओर देखो शाहजादे !—" मल्का ने कहा—"मैं औरत हूँ। मेरा दिल कमजोर है...मगर मैंने उल्फत की चोट बरदाश्त की और अपने सीने से एक भी ठंडी साँस नहीं निकलने दी है, अपनी आँखों पर गम का एक कतरा भी नहीं आने दिया है..."

"मैं समझा नहीं मल्का !"

"मासूम बच्चे ! तुम समझ भी नहीं सकते—" मल्का बोलीं—"एक शादीशुदा औरत के लिए उसके खाविन्द की मुहब्बत ही जन्नत है...मगर क्या मैं कभी शाहेआलम की मुहब्बत पा सकी ?..."

"....."

सुन रहा था शाहजादा।

"नहीं रशीद ! शादी के बाद एक लमहे के लिए भी शाहंशाह ने मुझे उल्फत की नजर से न देखा। एक जवान औरत के सीने में ऐश की लालच, सिर्फ लालच ही होकर रह गई...मेरी ख्वाहिशें, मेरे आरमान, सब कुछ खाक में मिल गये...मैं तड़पती रही, जलती रही और बेसब्र निगाहों से शाहंशाह की ऐशपरस्ती देखती रही—"

"....." कुछ न बोला शाहजादा। चुप ही रहा।

"दिन रात इस शाहीमहल में नई-नई साकियाँ आती रहीं और शाहंशाह उनसे अपनी दिलबस्तगी करते रहे...और मैं मुजतरिब नजरों से, सीने पर पत्थर रखकर सब कुछ देखती रही...एक औरत के लिए यह कितना तकलीफदेह है कि उसका खाविन्द उसके सामने ही दूसरी औरतों पर बुरी निगाह डाले और वह चुपचाप खड़ी देखती रहे—खौफ

से कुछ बोल न सके, अपने दिल की आह न निकाल सके...क्या मैंने कम बरदाश्त किया है शाहजादे ?''

''आप हूर हैं भाभीजान !—'' शाहजादा बोला।

''नहीं शाहजादे ! मैं भी इसी दुनिया की एक औरत हूँ, जिसके सीने में तड़पता हुआ दिल है, दिल में सैकड़ों अरमान हैं...मगर मेरा दिल कभी खुश न हुआ...मेरे अरमान कभी पूरे न हुए...''

''.....''

''एक औरत का दिल माँ बनने के लिए भी उतना ही ख्वाहिशमन्द रहता है, जितना अपने ख्वाविन्द की मुहब्बत पाने के लिए, मगर मेरी वह ख्वाहिश भी पूरी नहीं हुई। होती कैसे ? शाहंशाह तो हमेशा दूर दूर रहे....शाहंशाह की ही तरह, दूसरे मरदों को ललचाई निगाहों से देखना, मेरे लिए गुनाह था। मेरी जवानी का उमड़ता हुआ आलम, कभी मेरे जजबात पर फतह न पा सका...''

''.....''

''उन्हीं दिनों सात महीने का तुम्हारा नाजुक बदन, मेरी गोद में आ पड़ा—'' मल्का कहती रहीं—''एक बच्चे के लिए तड़पता हुआ मेरा दिल तुम्हारी मासूम देह पाकर खुश हो उठा माँ का सच्चा प्यार मैंने तुम्हें दिया...अपने बच्चे-सा तुम्हें पाला-पोसा...मेरी तकलीफों का कुछ अन्दाज लगा सकते हो तुम शाहजादे ?''

''मल्का !...''उठता हुआ बोला शाहजादा—''भाभीजान !...मेरी अम्मी !...''

शाहजादा नन्हें बालक की तरह मल्का की गोद में लुढ़क पड़ा।

मलका ने उसे सम्हालकर अपने सीने से चिपका लिया दोनों के नेत्रों से आँसू बह रहे थे।

''तुम्हारी तकलीफ मैं समझती हूँ बेटे !—'' बोलीं मल्का—''मगर मेरी तकलीफ से तुम अब तक नावाकिफ थे...इसीलिए यह सब कहा। जब एक औरत इतना बरदाश्त कर सकती है, तो तुम तो मर्द हो और

उस शाहंशाह के भाई हो जो आज एक से मुहब्बत करता है, तो कल दूसरे से..."

"काश, मैं ऐसा कर सकता मामीजान ! तो कितना खुश होता आज"—शाहजादे ने कहा—"मगर लड़कपन से ही आपने मेरी आदत बिगाड़ दी और इसी का नतीजा यह है कि आज मैं आप जैसी माँ की मुहब्बत छोड़कर एक बेवफा लड़की के पीछे पागल हूँ..."

"यह हर इन्सान को जिन्दगी में होता है रशीद !...जवानी चन्द-रोजा है, मगर सच्ची मुहब्बत तो मौत तक कायम रहती है..."

"आपकी बातों से मुझे निहायत सब्र हुआ है मलका ! उम्मीद है कि अब मुझमें ताकत आ जायगी..." बोला शाहजादा ।

"शुक्र है खुदा का !..."

"भाईजान की कोई खबर आई थी ?"

इधर वह अपने दुःख में इतना तल्लीन था कि उसे आस-पास की कुछ भी खबर न थी।

"आज सुबह काशगर से प्यादा आया था ।"—मलका ने कहा

"क्या खबर लाया था ?...शाहेआलम तो खैरियत से हैं ?"

"सब ठीक है—डाकू गिरफ्तार कर लिए गए और उन्हें सजाये मौत दे दी गई...काशगर में अब कभी खुराफात न होगी..."

"भाईजान यहाँ कब तशरीफ ला रहे हैं ?"

"वे काशगर से रवाना हो चुके हैं"—मलका ने कहा—"कल तक शायद वे यहाँ आ जायँ..."

"अच्छा हुआ कि हजूरे भाईजान के तशरीफ लाने के पहले ही मेरा दिमाग दुरुस्त हो गया, नहीं तो मेरी हालत देखकर इन्हें बेहद अफसोस होता..."

"मैं जाती हूँ ! तुम मेरी बातों का ख्याल रखना और अपने को रंजीदा न बनाना—"

मलका चली गईं ।

उस दिन शाहजादा प्रसन्न था, परन्तु रह रहकर उसका हृदय बेचैन हो उठता था।

फिर भी उसने उस दिन खाना खाया और मल्का के साथ शाम को थोड़ी देर तक शतरंज भी खेला।

रात को जब वह अपने बिस्तर पर लेटा, तो पुनः उसका हृदय उद्विग्न हो उठा।

बड़ी देर तक जागता रहा वह।

प्रयत्न करने पर जब उसे थोड़ी बहुत नींद आने लगी, तो उसी समय गुप्त द्वार पर खटका हुआ।

शाहजादा चौंक कर उठ बैठा। आगे बढ़कर दरवाजा खोला।

सफ्दर उपस्थित था। गुप्त द्वार की राह वह अन्दर आया।

"मैं परसों ही आनेवाला था शाहजादे!"—बोला सफ्दर—"मगर बेगम आलिया से सुना कि तुम्हारी तबियत नासाज है, इसलिए नहीं आया..."

"और आज जब बेगम ने तुमसे बताया कि मैं दुरुस्त हूँ, तो तुम आ पहुँचे!..." शाहजादे ने कहा।

"बेशक!..."

"तुम्हारी बेगम तो जादू बनकर, हवा के साथ सब जगह पहुँच जाती हैं सफ्दर!"

"उनका राज समझ में नहीं आता रशीद!—अब तो तुम्हारी तबियत ठीक दिखाई पड़ रही है..."

"हाँ, कुछ ठीक है..." बोला शाहजादा—"क्या हाल है तुम्हारा?"

"हमारी तैयारी पूरी हो चुकी है"—सफ्दर ने कहा—"अब सिर्फ शाहंशाह के आने की देर है..."

"मेरी एक दिली मंशा थी सफ्दर!"

"कहो! क्या चाहते हो?"—पूछा सफ्दर ने।

"तुम्हारी जमात में चलकर मैं तुम्हारी कार्रवाई देखना चाहता हूँ...

अपना दोस्त समझकर, रियाया का हमदर्द समझकर, मुझे एक बार अपने साथ ले चलो सफ्दर।"

"क्या तुम वहाँ चलना चाहते हो शाहजादे ?"

"हाँ, बहुत ख्वाहिश है कि तड़पती हुई रियाया के दिल की आग देख सकूँ..."

"तो तैयार हो जाओ"—सफ्दर बोला—"मैं अभी तुम्हें वहाँ ले चलूँगा..."

"ले चलोगे मुझे ?"—आश्चर्य से कहा शाहजादे ने—"तुम मुझे ले चलोगे ?...सफ्दर ! क्या ऐसा तुम अपनी जिम्मेदारी पर कर सकते हो ?..."

"मुझे अपने जिम्मेदारी पर कोई काम करने की ताकत नहीं है शाहजादे !...मगर बेगम आलिया के हुक्म से हम कुछ भी नहीं कर सकते"—

"तो क्या बेगम आलिया इसके लिए इजाजत दे देंगी ?"—पूछा शाहजादे ने।

"उनकी इजाजत है शाहजादे !...मैं इस वक्त इसी काम से तुम्हारे पास आया था कि आज तुम्हें अपने साथ ले चलूँ"—सफ्दर बोला।

"बेगम ने हुक्म दे दिया है ?...क्या वे मुझपर यकीन करती है ?"—

"सिर्फ बेगम ही नहीं, सिर्फ मैं ही नहीं, हमारे जमात का हर शख्स जानता है कि शाहजादे की तरफ से उन्हें कोई खतरा नहीं..." सफ्दर ने कहा।

'तो मैं अभी तैयार हुआ जाता हूँ...." शाहजादा कपड़ा बदलने लगा।

"मगर तुम्हें आखों पर पट्टी बाँधकर, ले जाने का हुक्म हुआ है"—

"मंजूर है !"

शाहजादा तैयार हो गया।

दोनों उस गुप्तद्वार से बाहर सड़क पर आये।

कुछ दूर तक वे छिपते हुए, पैदल चलते रहे।

एक छिपे हुए स्थान पर एक ऊँटगाड़ी खड़ी थी। दोनों उसी पर आकर बैठ गये!

"अब तुम्हें आँखों पर पट्टी बँधवानी पड़ेगी शाहजादे!"—सफ्दर ने कहा।

"लाओ!..." शाहजादा बोला।

सफ्दर ने उसकी आंखों पर पट्टी बाँध दी और गाड़ीवान को कुछ इशारा किया।

दस बारह बार गाड़ी उस स्थान पर चारों ओर घूमी ताकि शाहजादे को दिशा का ज्ञान न रह जाय।

इसके बाद गाड़ी आगे भाग चली।

घण्टों तक वे लोग तेजी से आगे बढ़ते गये।

रास्ते में एक जगह शाहजादे का हाथ पट्टी पर चला गया।

सफ्दर ने मजबूत हाथों से शाहजादे की कलाई पकड़ ली बोला—"खबरदार शाहजादे!...मेरे हाथों में खंजर है। अगर पट्टी हटाने की जरा भी कोशिश की, तो मैं दोस्ती भूल जाऊँगा..."

"घबड़ाओ नहीं दोस्त!"—शाहजादा बोला—"तुमने पट्टी ऐसी कसकर बाँध दी है कि मेरा सर दर्द करने लगा..."

"यह तुम्हें बरदाश्त करना होगा शाहजादे!"—सफ्दर ने दृढ़ स्वर में कहा।

बहुत देर के बाद गाड़ी रुकी। दोनों उतर पड़े।

सफ्दर शाहजादे का हाथ पकड़ कर चलने लगा। ऊबड़-खाबड़ जमीन पर पैर रखते ही, शाहजादा समझ गया कि वह किसी बीहड़ स्थान पर आ पहुँचा है, सैकड़ों आदमियों की आहट भी मिली शाहजादे को।

जब शाहजादे की पट्टी हटाई गई, तो कुछ देर तक तो उसकी आँखें कुछ देख ही नहीं सकीं।

इसके बाद उसने देखा—

मोमबत्तियों तथा मशालों के प्रकाश में विशाल जनसमूह एकत्रित था। कई हजार व्यक्ति थे।

आजादी के उन दीवानों की संख्या शाही फौज की दुगुनी थी।

सफ्दर को देखकर सब उठ खड़े हुए और सम्मान प्रदर्शन करने के पश्चात् पुनः बैठ गये।

इतने व्यक्तियों के उपस्थित होने पर भी वहाँ जो नीरवता व्याप्त थी, उससे शाहजादे के हृदय पर बहुत असर पड़ा।

"अभी बेगम आलिया तशरीफ नहीं लाई हैं" —सफ्दर बोला—"तब तक तुम्हें अपना सामान दिखा दूँ..."

सफ्दर के साथ शाहजादा एक टूटे-फूटे कमरे में आया।

उसे देखकर महान् आश्चर्य हुआ कि वहाँ सैकड़ों तोपें गोले उगलने के लिए तैयार खड़ी हैं।

दूसरे कमरे में शाहजादे ने बारूद की राशि देखी, तीसरे में हजारों देशी बन्दूकें देखीं, चौथे में तीव्र तलवारें देखीं और पाँचवें में देखा तीर-कमान का ढेर।

"इनमें से एक-एक तीर की नोक जहर से बुझी हुई है शाहजादे !" सफ्दर ने कहा।

अब सफ्दर उसे एक ऐसे कमरे में ले गया, जहाँ मोहरों और दीनारों का ढेर लगा हुआ था।

"यह वह दौलत है, जिसे बेगम आलिया और सल्तनत के बड़े-बड़े अमीरों ने हमें बगावत का सामान इकट्ठा करने के लिए दिया है"— सफ्दर बोला।

आश्चर्यचकित था शाहजादा—उस खँडहर में युद्ध का इतना सामान इकट्ठा देखकर।

और उसकी आँखें कुछ दिन बाद का दृश्य देख रही थीं।

उसने देखा—

शाही महल तोपों की गरज से गूँज उठा है। दीवारें टूटकर जमीन पर गिर रही हैं। शाही फौज घास की तरह कत्ल कर दी गई है। शाहे-आलम कैदखाने में हथकड़ी-बेड़ी से मजबूर बैठे हैं और मल्का...

और मल्का ?

मल्का का क्या होगा ?

शाहजादे के माँ की क्या दशा होगी ?

सोचते-सोचते शाहजादे का मस्तिष्क भन्ना उठा।

"सफ्दर !" आवेग में बोला शाहजादा।

"कहो, क्या बात है ?"

"तुम लोग सब कुछ कर सकते हो"—बोला शाहजादा—"मगर मल्का को जरा भी तकलीफ नहीं पहुँचा सकते। मुझे मारकर ही मामा-जान को कैद कर सकोगे..."

"मेरे नादान दोस्त !" सफ्दर हँसकर बोला—"हमें अपना दुश्मन परखने की ताकत है। यह मत समझो कि शाही खानदान का हर इन्सान हमारा दुश्मन है..."

"हमारे दुश्मन सिर्फ शाहंशाह और उनके जुल्मी कारबरदार हैं"—सफ्दर बोला—"हमारे हथियार सिर्फ उन्हीं लोगों पर उठेंगे, दूसरों पर नहीं...और मल्का के लिए तो मैं तुम्हें यकीन दिला सकता हूँ..."

किस बात का यकीन ?"—शाहजादे ने पूछा।

"हम जानते हैं बेकस रियाया के लिए शाहजादे के दिल में जितनी हमदर्दी है, उससे बढ़कर हमदर्दी मल्का मुअजमा के दिल में है...रियाया उन्हें अपनी माँ समझती है। और एक बेटा कभी अपने माँ की तौहीन नहीं कर सकता।"

चुप हो रहा सफ्दर।

"मैं आज कितना बुजदिल हो गया हूँ सफ्दर कि अपनी सल्तनत के खिलाफ इतनी साजिश देखकर भी मेरी ताकत खामोश है—"

"यह तुम्हारी बुजदिली नहीं है शाहजादे ! यह तुम्हारी बुलन्द

हिम्मती है—तुम्हारा सहारा पाकर हमलोगों में और भी हिम्मत आयेगी—" सफ्दर ने कहा।

"मगर मेरा वह फर्ज नहीं है दोस्त!"

"जुल्म के खिलाफ बगावत करना हर इन्सान का फर्ज है रशीद!—" सफ्दर कहने लगा—"क्या तुम पर जुल्म नहीं हुआ है? क्या तुम शाहे-आलम के पैरों से ठोकरें खाने वाले एक नाचीज पत्थर के टुकड़े नहीं हो?..."

शाहजादे के दिल में दबी हुई विद्रोह-भावना ठोकर खाकर उठ खड़ी हुई।

वास्तव में शाहंशाह ने प्रजा पर ही नहीं, शाहजादे और मल्का पर भी अपनी निर्दयता का परिचय दिया है।

"चलो! अब चला जाय"—सफ्दर ने कहा।

दोनों पूर्व स्थान पर आये, जहाँ बागियों का जमघट इकट्ठा था।

जैसे ही दोनों वहां पहुँचे, बेगम आलिया भी वहाँ आ पहुँची।

और बेगम आलिया ने शाहजादे के आगे झुककर कोर्निश की। इस समय भी बेगम बुर्का और लबादा पहने हुए थीं।

उन्हें कोर्निश करते देखकर शाहजादा पीछे हट गया।

"यह आप क्या करती हैं?"—बोला वह।

"शाहजादे आलम की इज्जत न करना हमारे हक में निहायत गुस्ताखी होगी—" धीरे से बेगम ने कहा।

शाहजादे का शरीर न जाने क्यों एकबारगी सिहर उठा।

मगर तुरन्त ही उसने अपने को सम्हाला।

और जरा हँसकर बोला—"आपके सामने मैं नाचीज हूँ बेगम आलिया! मेरी कीमत ही क्या?...आप रियाया के लिए जो कुछ कर रही हैं, उसके मुकाबिले में मेरे दिल में सिर्फ हमदर्दी है और कुछ नहीं..."

"इतना ही हमारे लिये बहुत है"—बेगम ने कहा।

इसके बाद सब बैठ गये।

सफ्दर थोड़ी देर बाद खड़ा होकर कहने लगा –

"बागियों !...तुम्हें इसी नाम से पुकारना बेतरह है...तुम लोगों ने जिस जवाँमर्दी से सारा काम सम्हाला और किसी को खबर तक नहीं हुई, यह बहुत ही खुशी की बात है...अब हमारी तैयारी पूरी हो चुकी है और हम लोग बेगम के हुक्म का इन्तजार कर रहे हैं...अब हममें इतनी ताकत आ गई है कि अपने खून से शाही महल की दीवारें सराबोर कर दें और फतह हासिल करें। दोस्तों ! वह दिन अब ज्यादा दूर नहीं, जब हम आजादी की आबोहवा हासिल करेंगे..."

बैठ गया सफ्दर।

चारों ओर सन्नाटा था।

अब बेगम आलिया उठीं।

'दोस्तों !—" वे कहने लगीं —"कुछ कहने से पेश्तर हम अपने हमदर्द, शाहजादा रशीद अली बिन ताहिर साहब का शुक्रिया अदा करते हैं। हम जानते हैं कि हमने शाहजादा साहब पर जो यकीन किया है और उन्हें अपनी कारगुजारी देखने का जो मौका दिया है, वह कमी हमारे हक में बुरा न होगा। शाहजादा साहब शुरू से ही हमारे तरफदार रहे हैं और मुझे उम्मीद है कि जब हम जुल्मी सुल्तान का साया अपने ऊपर से हटाने में कामयाब हो जायँगे, तब भी शाहजादे आलम हमारे ऊपर इसी तरह मेहरबान बने रहेंगे और हमारे सरपरस्त बनकर हमें बेशकीमती नसीहतें देंगे..."

शाहजादा ध्यानपूर्वक बेगम की बातें सुन रहा था और उसकी आँखें काले बुरके के भीतर की शक्ल देखने की कोशिश कर रही थीं।

बड़ी देर तक बेगम अपने आगामी कार्यक्रम पर भाषण देती रहीं। इसके बाद सफ्दर से बोलीं—"चलो सफ्दर, शाहजादे साहब की गाड़ी तक पहुँचा दें..."

शाहजादे की आँखों पर पुनः पट्टी बाँधी गई। बेगम और सफ्दर

उसके साथ गाड़ी तक आये। शाहजादा गाड़ी पर जा बैठा। उसके साथ एक दूसरा आदमी भी बैठा।

"इन्हें ले जाकर शाहीमहल के पास उतार देना...रास्ते में इनकी पट्टी न खुलने पावे—" सफ्दर ने उस आदमी को आज्ञा दी, जो शाहजादे के बगल में बैठा था।

गाड़ी चली गई, तो बेगम और सफ्दर वापस लौटे। इस समय तक सफ्दर के हृदय में बेगम का प्रेम पराकाष्ठा तक पहुँच चुका था। उसने बेगम का हाथ आतुरतापूर्वक पकड़ लिया। बोला—"मैं आपसे कुछ अर्ज करना चाहता हूँ बेगम!"

'यही न कि तुम मुझे प्यार करते हो?—" हँसकर पूछा बेगम ने।

"हाँ बेगम! बेकरारी अब हद से बाहर हो उठी है—" सफ्दर बोला।

"मैं भी तुम्हें प्यार करती हूँ सफ्दर!—" बेगम बोलीं—"मेरे दिल में भी तुम्हारे लिए मुहब्बत है...औरत इब्तदा से मर्द को प्यार करती आ रही है दोस्त!...औरत मर्द को बेटे की तरह प्यार करती है, भाई की तरह प्यार करती है और ख्वाविन्द की तरह प्यार करती है... मगर मेरी मुहब्बत तुम्हारे लिए, जानते हो कैसी है!—जिन्दगी में मैं सब कुछ पा चुकी हूँ—जर, जमीन, दौलत, ख्वाविन्द, तकलीफ, आराम, सभी कुछ—मगर मुझे अपना कोई बेटा नहीं है। तुम्हीं हमारे बेटे बन जाओ। मैं चाहती हूँ कि इस दुनिया के हजारों आदमी मेरे बेटे बनें और मैं उन सब को माँ का प्यार दूँ...तुमने मुझे गलत समझा है सफ्दर। अपने दिल को सम्हालो। मैं तुम्हारी माँ बन सकती हूँ, तुम्हारी बहन बन सकती हूँ, मगर और कुछ नहीं..."

"बेगम!..." रुद्ध स्वर में बोला सफ्दर।

और दोनों उस खँडहर में आगे बढ़ते गये।

● ●

पिछली सारी रात शाहजादा जागता रहा था।

जिस समय वह पलंग पर निद्राभूत हुआ उस समय रात केवल एक घण्टे बाकी थी।

यही कारण था कि वह बहुत दिन चढ़ आने पर भी उठ न सका।

उधर प्रातःकाल ही शाहंशाह के लौटने का समाचार आया, तो केवल वजीर ही उनका स्वागत करने, शहर की सीमा पर गया।

वजीर को अकेला देखकर शाहंशाह को कुछ आशंका हुई।

"शाहजादा कहाँ रह गया ?—" पूछा उन्होंने।

"शाहजादा साहब जब से काशगर से लौटे हैं ..." वजीर बोला—"तब से उनकी तबियत खराब है। इस वक्त वे बिस्तरे राहत पर आराम फरमा रहे हैं !"

"शायद सफर की तकलीफों ने उसकी सेहत पर असर डाल दिया है—" शाहंशाह बोले।

शाहंशाह शाहीमहल में आये। शम्सुल भी उनके साथ थी।

शाहंशाह सीधे अपने प्रकोष्ठ में चले आये। उन्होंने शम्सुल की ओर देखा।

"शरबते अनार !—" धीरे से कहा उन्होंने।

"अब पीना छोड़ दें आलीजाह !..." शम्सुल ने प्रार्थना भरे स्वर में कहा।

"पीना छोड़ दूँ ?" शाहंशाह हँसे—"सब कुछ छूट सकता है, मगर पीना शायद न छोड़ सकूँ। तुम इसके लिये मुझे मजबूर न करो शम्सुल ! तुम्हारे कहने से रास्ते भर में एक कतरा भी न पीया मैंने... मगर अब शाहीमहल में आकर फिर पुरानी याददाश्त ताजी हो गई है..."

"मुझे उम्मीद थी कि मैं किसी दिन शाहंशाह को शरबते अनार से छुटकारा दिला सकूँगी—" शम्सुल ने कहा।

"तुम्हारी उम्मीद रफ्ता-रफ्ता पूरी होगी शम्सुल! एकबारगी नहीं—" शाहंशाह ने कहा—"इस वक्त मुझे पीने की तमन्ना है..."

"जो हुक्म आलमपनाह!—"

शम्सुल उठी। प्याला भरकर शाहंशाह के होठों से लगा दिया उसने।

उसी समय ख्वाजासरा चिल्ला उठा।

"बाअदब, बामुलाहजा होशियार! मल्का मुअज्जमा तशरीफ लाती हैं—"

शम्सुल साकी का काम करने में पटु हो गई थी।

वह दरवाजे के पास आई और कोर्निश की भंगिमा में खड़ी हो गई।

प्रवेश करते ही मल्का की दृष्टि इस नई साकी पर पड़ी। उसका सौन्दर्य देखकर वे भी चकित रह गईं।

मल्का ने शाहंशाह को आदाब बजाया।

बोलीं—"हजूरेआलम खैरियत से तशरीफ लाये, इस बात की बेहद खुशी है..."

"आओ मल्का!" बोले शाहंशाह—"मेरी गैरहाजिरी में, मुझे उम्मीद है कि शाहजादे ने तुम्हें किसी बात की कमी महसूस न होने दी होगी..."

मल्का का चेहरा लाल हो गया, शाहंशाह का व्यंग सुनकर।

मगर उन्होंने अपना भाव छिपाया।

बोलीं—"मुझे किसी बात की कमी नहीं हुई आलीजाह...हाँ! शाहजादे की मायूसी देखकर कभी-कभी दिल बेचैन हो उठता था..."

"सुना, उसकी तबियत खराब थी...अब कैसी है?"

"अब तो ठीक है। अभी-अभी उठे हैं..." मल्का ने कहा।

"उसे माबदौलत के पास जल्द से जल्द हाजिर होने का हुक्म दिया जाय !" शाहंशाह बोले।

"बेहतर है !—" कहकर मल्का दरवाजे की ओर बढ़ी। अन्तिम बार उन्होंने, सर झुकाये खड़ी हुई शम्सुल पर दृष्टि डाली।

न जाने उन्हें क्यों वह छोकरी आश्चर्य जनक प्रतीत हुई।

मल्का चली गई, तो शम्सुल शाहंशाह के पास आई।

"मल्का की आवाज से रहमदिली टपकती है हजूरेआलम !—" उसने कहा।

"बेशक !—" शाहंशाह बोले—"मगर इन्सान की आवाज और दिल हमेशा एक से नहीं होते शम्सुल !....अभी शाहजादा आता होगा। मेरा ख्याल है कि तुम उसे देखकर बेहद खुश होगी। वैसा इन्सान तुमने अपनी जिन्दगी में न देखा होगा..."

"....."

शम्सुल का शरीर सिहर उठा।

शाहजादा यहाँ आयेगा, शम्सुल को शाहंशाह के पास देखेगा—

तो क्या सोचेगा वह अपने दिल में ?

क्या वह उसे छलनामयी समझ लेगा ?

क्या वह यह नहीं सोचेगा कि इस गरीब छोकरी की आँखों में शाहंशाह की दौलत आ बसी है और वह उसे छोड़कर शाहंशाह से नेह लगाना चाहती है ?

किसलिये ?

केवल शाही दौलत और रुतबे के लिए !

क्या ऐसा सोचेगा शाहजादा ?

सोच सकता है वह, सन्देह कर सकता है वह शम्सुल पर।

कितनी लज्जाजनक एवं भयानक परिस्थित है उसकी ?

मगर क्या करे, विवश है वह !

"मुझे और पिलाओ तितली ?"—शाहंशाह ने कहा।

जब शाहजादे का नाम उसके कान में पड़ा, तो वह चौंक उठी, भयभीत हो गई।

अब शाहजादा आता ही होगा। उसके सामने वह शाहंशाह को कैसे शरबते अनार पिला सकेगी।

"जल्दी करो !..." न जाने कैसी कठोरता-सी आ गई थी शाहंशाह के स्वर में।

यह बुड्ढा निशाचर, किस समय आवेश में आ जायगा, यह वह अब तक न समझ सकी थी।

शिथिल पैरों से वह उठी और शरबते अनार का प्याला भरा।

उसी समय ख्वाजासरा पुनः चिल्लाया—

"बाअदब, बामुलाहजा होशियार !...साकिये शाहंशाह होशियार !...शाहजादये आलम तशरीफ लाते हैं...."

भयभीत दृष्टि से शम्सुल ने शाहंशाह की ओर देखा और प्याला रख दिया।

"प्याला लेकर आगे बढ़ो शम्सुल !"—तेज आवाज में बोले शाहंशाह।

"शाहजादा सलामत तशरीफ ला रहे हैं आलीजाह !—" शम्सुल ने कहा। वह बहुत भयभीत हो रही थी। उसका शरीर काँप रहा था।

"कोई बात नहीं...वह मेरा छोटा भाई है। मेरा कोई राज़ उससे पोशीदा नहीं"—शाहंशाह ने कहा।

शम्सुल लाचार थी।

वह प्याला उठाकर आगे बढ़ी और शाहंशाह के समीप आकर प्याला उनके होठों से लगा दिया।

उसी समय रेशमी पर्दा हटा और शाहजादा कोर्निश करता हुआ दृष्टिगोचर हुआ।

"आओ शाहजादे !"—शाहंशाह ने कहा—"तबियत तो तुम्हारी ठीक है न ?"

"ठीक है आलीजाह !" शाहजादे ने कहा।

परन्तु दूसरे ही क्षण उसकी दृष्टि शम्सुल पर पड़ी जो हाथ में प्याला लिये शाहंशाह से सटकर खड़ी थी और अप्सरा-सी सजी हुई थी।

यह कौन ?

कौन है यह ?

रेगिस्तान का फूल ?

वही तो है !

शाहजादे ने अपनी आँखें बन्द कीं, पुनः खोलीं।—बन्द कीं, पुनः खोलीं।

वही है !

वही शम्सुल !

जिसकी याद में वह अब तक तड़पता रहा है...

जिसकी उल्फत ने उसकी सेहत बरबाद कर दी थी...

जिसकी प्रतिमा उसके हृदय के कण-कण में नृत्य कर रही थी।

वही शम्सुल है यह !

शाहजादा का हृदय हाहाकार कर उठा। उसका रोम-रोम करुणा से सन्तप्त हो गया।

उसका मस्तिष्क चक्कर खाने लगा।

शाहीमहल की दीवारें आँखों के सामने नाचने लगीं।

शरीर के रग-रग में भूकम्प जैसा अनुभव हुआ।

"उफ् !..." उसके मुख से निकला।

और वह घबड़ाकर वहीं जमीन पर गिर पड़ा।

अनजाने में ही शम्सुल के मुख से भयानक चीख निकल गई।

यह जो अनर्थ हो रहा था, जिस प्रलय की सृष्टि हो रही थी—उससे अत्यन्त शोकाकुल हो उठी वह।

शाहजादा फर्श पर गिरकर आँखें बन्द किये पड़ा था और उसकी साँस जोरों से चल रही थी।

लपककर शाहंशाह ने उसे उठाया और पलंग पर लाकर बैठा दिया

"क्या हुआ शाहजादे ?..."

"कुछ नहीं !" विक्षिप्त-सा बोला शाहजादा—"कुछ नहीं हुआ भाईजान ! कुछ नहीं हुआ...कुछ नहीं..."

"तुम्हारी तबियत अब तक दुरुस्त नहीं हुई..."

"हाँ आलमपनाह !...अब तक दुरुस्त नहीं हुई, मगर अब हो जायगी आलीजाह ! हो जायगी अब...हो गई..."

"तुम्हें क्या चक्कर आ गया था ?"

"हाँ भाईजान !...मगर अब ठीक हूँ..." शाहजादे ने कहा।

शम्सुल ने देखा, शाहजादे के गालों पर आंसुओं की धार बह चली है।

मगर क्या कर सकती थी वह ?

आगे बढ़कर उन आंसुओं को अपने आँचल से पोंछ भी तो नहीं सकती ?

कितनी दयनीय स्थिति थी उसकी।

"तुम्हें कोई तकलीफ है शाहजादे ?"—शाहंशाह ने पूछा।

"तकलीफ ?"—उसके चेहरे पर आँसू से भरी हुई करुण मुस्कुराहट फैल गई—"थी तकलीफ भाईजान ! मगर अब सब तकलीफें रफा हो जाँयगी..."

"तुम पागलों की तरह बातें कर रहे हो"—शाहंशाह बोले—"तुम्हारी आँखों में आँसू हैं; रोते हुए तुम्हें आज पहली बार देख रहा हूँ शाहजादे !"

"ये आँसू दगाबाज हैं आलमपनाह ! खामखाह मेरी आँखों से गिर कर आपको परेशान कर रहे हैं..."

शाहजादे ने अपनी आँखें पोंछ लीं।

शाहंशाह ने शाहजादे के सर पर हाथ रख दिया। इस समय उनका भ्रातृप्रेम उमड़ पड़ा था।

"तुम्हें जरूर कोई तकलीफ है शाहजादे!"—बोले शाहंशाह—"क्या किसी ने तुम्हारा दिल दुखाया है?....मुझे बताओ—मैं उसे ऐसी सजा दूँगा कि आस्मान के फरिस्ते तक काँप उठेंगे..."

"नहीं भाईजान! अपनी इस मायूसी का सबब मैं खुद हूँ, कोई दूसरा नहीं—"

"शम्सुल!" शाहंशाह ने पुकारा।

शम्सुल करुण स्वर में बोली—"आलमपनाह!..."

"शाहजादे को उसके ख्वाबगाह तक पहुँचने में मदद दो..." शाहंशाह ने आज्ञा दी।

शम्सुल आगे बढ़ी।

परन्तु शाहजादा चिल्ला उठा—"नहीं, नहीं! मेरे बदन से हाथ न लगाना...अब जिन्दगी में मुझे किसी के सहारे की जरूरत नहीं—मैं खुद चला जाऊँगा...खुद चला जाता हूँ

लड़खड़ाता हुआ शाहजादा बाहर हो गया।

शाहजादे को क्या हो गया है, यह शाहंशाह न समझ सके। मगर शाहजादे पर जो बीत रही थी, यह उसका हृदय ही जानता था।

वह अपने प्रकोष्ठ में आकर धड़ाम से पलंग पर गिर पड़ा और फूट-फूटकर रो उठा। इस समय उसके अन्तराल में भीषण संघर्ष मचा हुआ था। वह पागल सा हो उठा था।

एकाएक वह उठ बैठा। अपने आँसू पोंछ डाले उसने और रूखी हँसी हँस पड़ा—

परन्तु दूसरे ही क्षण पलंग पर गिरकर वह पुनः सिसकियाँ भरने लगा।

वह अपनी जान दे देगा।

वह अपनी जान देना चाहता है।

मगर क्यों?

किसके लिए?

क्या एक कृतघ्न लड़की के लिए वह अपनी जान देगा?

क्या एक बेवफा छोकरी के पीछे वह घुल-घुल कर मरेगा !

नहीं ! वह मरेगा नहीं, जान नहीं देगा वह अपनी।

वह जिन्दा रहेगा !

अपने कलेजे पर पत्थर रखकर जिन्दा रहेगा, अपने अरमानों का खून देखेगा, अपनी उजड़ी हुई दुनिया को देखकर तड़पेगा ।

तड़पने और जलने में ही सुख है—

हँसने और खुश होने में ही दुःख ।

भावना के प्रवाह में वह बहा जा रहा था कि किसी ने उसके बदन पर हाथ फेरा ।

"नहीं-नहीं ! मुझे मत छुओ ! जलने दो...मरने दो..." चिल्ला उठा शाहजादा ।

"शाहजादे !..." मल्का की आवाज थी । शाहजादे की तबियत खराब होने का समाचार पाकर वे उसके पास आई थीं ।

"जाओ !..." शाहजादा बोला—"तुम भी जाओ मामीजान ! औरतें बेवफा होती हैं ।"

"मासूम लड़के !"—मल्का पलंग पर बैठ गई—"औरतें बेवफा हो सकती हैं, मगर माँ बेवफा नहीं होती । माँ हमेशा जफा के बदले वफा करती है..."

"तुम हो ?" चौंककर बोला शाहजादा—"मल्का ? मेरी माँ ?..."

शाहजादे ने मल्का की गोद में अपना मुँह छिपा लिया ।

उसके लिए मल्का अब भी उसकी माँ थी और मल्का के लिए शाहजादा अब भी उनका बच्चा था ।

"क्या हुआ है तुम्हें ?—" पूछा मल्का ने—"मैं देखती हूँ कि तुमने अपने को बरबाद कर लेने की कसम खा ली है... मगर याद रखो, मेरी मौत के बाद ही तुम्हारी कसम पूरी होगी..."

"तुम्हारी मौत से पहले ही मैं अपनी कसम तोड़ दूँगा मामीजान !"

"तुम्हारा मतलब ?"—पूछा मल्का ने ।

"मैं अब तड़पूँगा नहीं, जलूँगा नहीं" शाहजादा बोला—"और उसकी जरा भी परवाह नहीं करूँगा..."

"किसकी परवाह शाहजादे ?"

"उसी की, जो शाहंशाह के ख्वाबगाह में नई साकी बनकर आई है—"

"कौन है वह ?"—मल्का के स्वर से आश्चर्य टपक रहा था।

"वही, जिसे अपनी बनाने का ख्वाब मैं देख रहा था। और जिसने शाही दौलत की लालच में पड़कर मुझे ठुकरा दिया है...वही बेवफा शम्सुल !..."

मल्का की समझ में अब सारी बातें आईं।

उन्होंने शाहजादे को खींचकर अपने धड़कते सीने से लगा लिया।

"मेरी माँ ! तुम खुश रहो यही मेरी ख्वाहिश है"—शाहजादा बच्चे की तरह मल्का के वक्ष से लगा रहा।

"वा अदब, वा मुलाहिजा होशियार !"—किसी ने धीरे से कहा।

दोनों ने चौंककर देखा तो दरवाजे पर शाहंशाह खड़े हैं। स्वयं उन्हीं ने वे वाक्य कहे थे।

शाहंशाह की आँखें क्रोध से लाल थीं। मुखाकृति अत्यन्त भयंकर हो उठी थी।

भयभीत हो मल्का और शाहजादा उठ खड़े हुए। शाहंशाह को कोर्निश की उन्होंने।

"क्या हो रहा था ?"—क्रोधित स्वर में बोले शाहंशाह—"मुहब्बत की जलन दूर की जा रही थी?... "

"....."

मल्का चुप थीं। शाहजादा भी चुप था।

"मेरी आँखों में धूल झोंक कर तुम लोग जो कुछ अब तक करते आ रहे थे, उसे आज खुद मेरी आँखों ने देख लिया"—शाहंशाह का सन्देह इस समय मूर्तिमान हो उठा था।

"शर्म करो !"—कहते जा रहे थे शाहंशाह—"अपनी इस नापाक कारगुजारी पर शर्म करो दगाबाज भाई !...तुम भी शर्म करो फाहशा औरत !..."

"भाईजान !..." तड़पकर बोला शाहजादा। उसमें न जाने कहाँ की शक्ति आ गई थी।

"क्या है ?..."

"मल्का मुअज्जमा के लिए मैं ऐसे अलफाज बरदाश्त नहीं कर सकता !"—

"क्यों ?..." शाहंशाह लपक कर शाहजादे के सामने आ खड़े हुए—"मेरे टुकड़ों पर पलनेवाले गुलाम ! क्यों नहीं बरदाश्त कर सकते तुम ? मेरी ठोकरें खानेवाले इन्सान ! तुम भी बगावत करने पर तैयार हो..."

चट-चट चिल्लाती हुई शाहंशाह की चौड़ी हथेली, शाहजादे के गाल पर जा बैठी। मल्का का हृदय करुणा से रो पड़ा, मगर आवाज बाहर न निकली।

"तुम जाओ !..." शाहंशाह ने मल्का को आज्ञा दी—"और तुम शाहजादे ! यह याद रक्खो कि मैं अन्धा नहीं हूँ। मैं सब जानते हुए भी चुप था, मगर अब मैं तुम्हारी दगाबाजी नहीं देख सकता..."

जाने लगे शाहंशाह तो शाहजादे ने कोर्निश की और पलंग पर आ बैठा। आज शाहंशाह ने उसे तमाचे नहीं मारे थे, वरन् उनके चरित्र पर लांछन लगाया था। परन्तु वह तो गुलाम था। सर उठाने का उसे अधिकार ही क्या ? वह अपने दुःख पर आँसू भी नहीं बहा सकता था।

● ●

शाहंशाह का तमाचा खाकर विक्षिप्त सा हो उठा शाहजादा।

उनके चले जाने पर वह पलंग से उठकर टहलने लगा।

इस समय उसके मानस-पट पर अनेक प्रलयंकर विचार दौड़ने लगे—

जिस व्यक्ति का नाम मुहम्मद अलि बिन ताहिर है और जो सल्तनत तातार का बादशाह है, उसने उसे तमाचे मारे हैं।

और वह चुपचाप सब कुछ सहन करता रहा है।

प्रजा पर होता हुआ अत्याचार उसने देखा, मलका के प्रति कहे गये दुर्वाक्य तथा दुर्व्यवहार देखा है, सुना है, अपनी प्रेयसी का शाहंशाह द्वारा अपहरण होते देखा है—और चुप रहा है वह।

मगर शाहंशाह के तमाचों ने उसकी विद्रोही भावना को ठोकर मार कर उकसा दिया है।

वह शाहंशाह का भाई है। राज्य पर उसका आधा अधिकार है।

वह अपने बड़े भाई के टुकड़ों पर जीवित रहनेवाला गुलाम नहीं है।

वह विद्रोह करेगा—प्रजा के विद्रोह में वह समान रूप से भाग लेगा?

शाहंशाह से बल पूर्वक सल्तनत छीन कर, वह अपना अधिकार जमायेगा और अपनी दुःखी प्रजा को उचित अधिकार देकर उनका प्रतिपालन करेगा।

अब वह विद्रोही है, उसके विद्रोह की भावना प्रलयंकर है।

वह बागी है, उसकी बगावत शाहंशाह के जुल्मों का सामना करेगी।

टहलते-टहलते रुक गया शाहजादा।

दृढ़ निश्चय उसकी आँखों में प्रतिबिम्बित हो रहा था। हाथ की मुट्ठियाँ कसकर बँधी हुई थीं, जैसे राज्य का सारा अधिकार उसने अपने हाथों में बन्द कर रक्खा हो।

उसने आगे बढ़कर कमरे में टँगी हुई अपनी बन्दूक उठा ली। उसे खोलकर देखा—बन्दूक गोलियाँ उगलने के लिए एकदम तैयार थी।

उसने कारतूसों की पेटी कन्धे से लटका ली।

उसी समय गुप्त द्वार पर कुछ खटका हुआ।

शाहजादे ने उस ओर चौंककर देखा और तब आगे बढ़कर कमरे के सब द्वार बन्द कर दिये।

तत्पश्चात् उसने गुप्तमार्ग का दरवाजा खोला।

यह देखकर उसे आश्चर्य हुआ कि वहाँ सफ़दर नहीं, इस बार स्वयं बेगम आलिया उपस्थित हैं, अपने चिर परिचित गुप्त वेश में।

"आप ?...आप यहाँ ?..." शाहजादा विस्मयपूर्ण स्वर में बोला।

"हाँ !..." बेगम हँसकर बोलीं—"शाहजादे साहब ने उधर तमाचे खाये, इधर मैं आ गई...सोचा, शाहजादे को तसल्ली देना जरूरी है..."

बेगम का व्यंग सुनकर शाहजादा अप्रतिभ हो उठा।

"मैंने तमाचे खाये हैं, मगर अब मेरे दिल की सारी बुजदिली दूर भाग गई है—" शाहजादा बोला।

"तभी इस वक्त शाहजादे के हाथ में बन्दूक और कन्धे पर कारतूसों की पेटी है—" फिर हँस पड़ी बेगम आलिया।

"आज मैंने कसम खाई है कि मैं इस बगावत में रियाया का साथ दूँगा..."

"इसके लिए शुक्रिया !...शाहजादा साहब अगर हमारे साथ रहेंगे तो हमारी हिम्मत दुगुनी हो जायगी..." बेगम बोलीं।

"मैं चाहता हूँ कि हमला जल्द से जल्द हो जाय..." शाहजादे ने कहा।

"मैं यही इत्तिला करने आप के पास आई हूँ कि आज आधी रात को ही हमारा हमला शुरू हो जायगा..."

"हमला किस तरह पर होगा ?—" शाहजादे ने पूछा।

"मैं आप से यह कहना भूल गई थी कि हमने किले से, शाहीमहल तक, एक सुरंग बनाई है और उसका मुँह इसी पोशीदा दरवाजे के पास खुलेगा—" बेगम ने कहा —"हमले के वक्त हमारे आधे आदमी बाहर से शाहीमहल पर हमला करेंगे और आधे सुरंग की राह महल में दाखिल होंगे..."

"बेहतर—" शाहजादा बोला—"मुझे उम्मीद है कि हमले के वक्त बेगम भी मौजूद रहेंगी..."

"नहीं शाहजादे !...मैं औरत हूँ। लड़ना तो मर्दों का काम है... मैं हमले के वक्त मौजूद नहीं रहूँगी..."

"ताज्जुब की बात है—" शाहजादे ने कहा—"कि जो औरत इतने बड़े जमात को बगावत के लिए जोश में ला सकती है, वह खुद ऐन बगावत के वक्त गैरहाजिर रहेगी..."

"इसमें जरा भी ताज्जुब की बात नहीं शाहजादे !—" बेगम बोली—"आप जानते हैं कि औरतें निहायत कमजोर होती हैं....वे सिर्फ जबान चला सकती हैं मगर हाथ नहीं..."

"जिसकी जबान में इतनी ताकत है, जिसकी उँगली के एक इशारे में इतनी ताकत है, तो उसके हाथ में, उसके हथियार में कितनी ताकत होगी—यह समझने की बात है बेगम !—" शाहजादे ने कहा।

"औरतों का जिस्म और दिल निहायत मुलायम होता है शाहजादे !—" बेगम बोलीं—"वे लड़ाई के मैदान में बहता हुआ खून अपनी आँखों से नहीं देख सकतीं...खैर, मुझे अब देर हो रही है...आप आधी रात के वक्त तैयार रहियेगा..."

"बेहतर है..."

शाहजादा कुछ और कहने जा रहा था कि चौंककर रुक गया।

किसी ने जोरों से उसका दरवाजा पीटा और शाहंशाह की क्रोधित आवाज सुनाई पड़ी—"शाहजादा दरवाजा खोलो !...फौरन !"

इसके बाद पुनः भभड़भड़ाहट की आवाज आई।

"बेगम !..." उतावली के साथ बोला शाहजादा—"माईजान आ पहुँचे हैं। आप जल्द से जल्द तशरीफ ले जायँ..."

"बहुत खूब !"

बेगम उठ खड़ी हुईं और गुप्त मार्ग में जा कर विलीन हो गईं।

उसी समय पुनः दरवाजा भड़भड़ाया।

शाहंशाह का तीव्र गर्जन सुन पड़ा—"दरवाजा खोलो रशीद !"

शाहजादे ने आगे बढ़कर दरवाजा खोला।

बाहर शाहेआलम, सिपहसालार तथा सैकड़ों हथियार बन्द सिपाही खड़े थे।

शाहंशाह भीतर आये तो चौंककर दो पग पीछे हट गये—शाहजादे के हाथ में बन्दूक और कन्धे पर कारतूस की पेटी देखकर।

शाहजादे ने झुककर कोर्निश की।

"शाहजादे..." अत्यन्त क्रुद्ध स्वर में बोले शाहंशाह—"क्या बेगम आलिया यहाँ आई थीं ?..."

"नहीं आलमपनाह !..." शाहजादे ने संयत स्वर में कहा।

"जरूर आई थीं वह तुम्हारे पास !—" गरजे शाहंशाह—"मेरे खुफिये ने गलत खबर नहीं दी है...उसने खुद अपने कानों से तुम्हें उससे बातें करते हुए सुना है !—"

"यह खबर झूठ है आलमपनाह !—"

"मैंने खुद तुम्हारे कमरे से आती हुई एक औरत की आवाज सुनी है.." शाहंशाह तड़पकर बोले।

"....." चुप रह गया शाहजादा।

"जवाब दो रशीद अली बिन ताहिर ! मेरी बातों का जबाब दो..."

"हाँ हुजूरे आलम ! मैं एक औरत से बातें कर रहा था—"

"कौन थी वह औरत ?..." शाहंशाह ने पूछा।

शाहजादे ने अपना सर उठाया। उसमें उत्तेजना आ गई थी।

"यह मेरी पोशीदा बात है शाहंशाह ! आपको उसे जानने का कोई हक नहीं"—बोला वह ।

"मैं शाहंशाह हूँ—" पैर पटक कर बोले शाहंशाह—"मुझे तुम्हारी हर पोशीदा बात जानने का हक हासिल है..."

"मैं बताने से इनकार करता हूँ—" दृढ़ स्वर में शाहजादे ने कहा। और उसने अपने हाथ की बन्दूक कसकर पकड़ ली।

"तुम इनकार करते हो ? बागी शाहजादे !...क्या तुम इनकार कर सकते हो ?.. तुम अपने को समझते क्या हो..."

"मैं अपने को सल्तनत के आधे हिस्से का बादशाह समझता हूँ—" गरज कर बोला शाहजादा—"कोई मेरी मर्जी के खिलाफ मुझे मजबूर नहीं कर सकता..." युगों से सुप्त गुलाम आज जग पड़ा था।

"तुम अपने को बादशाह समझते हो ?—" क्रोध से काँप उठे शाहंशाह—"सिपहसालार ! इस बेईमान छोकरे को गिरफ्तार कर लो—"

कुछ सिपाहियों के साथ सिपहसालार आगे बढ़ा।

शाहजादे ने अपनी बन्दूक ऊँची की।

"खबरदार !..." वह चिल्लाया—"दूर रहो, मेरे बदन पर हाथ लगाने के पहले ही राहेअदम को रवाना कर दिये जाओगे..."

सिपाही ठिठक गये।

"गिरफ्तार करो !—" गरजे शाहंशाह।

सिपाही तेजी से आगे बढ़े।

धाँय ! धाँय !

बन्दूक की नली सीधी होकर गरज पड़ी। धुएँ के बीच से निकली हुई गोली तीव्र गति से दौड़ पड़ी।

और सामने के दो सिपाही चिल्लाकर जमीन पर लोट गये।

भयभीत सा सिपहसालार अपने स्थान पर ही खड़ा रहा।

"ठहरो !..." चिल्लाकर बोले शाहंशाह—"तुम लोग इसे गिरफ्तार नहीं कर सकोगे...मैं इसे पकड़ूँगा..." और वे आगे बढ़े।

शाहजादा चिल्लाया—"दूर रहिये भाईजान ! मेरी बन्दूक आज खून करेगी..."

"चलाओ गोली..." आगे बढ़ते हुए बोले शाहंशाह—"—ताकत हो तो गोली चलाओ...आज दुनिया भाई की गोली से भाई की मौत देखना चाहती है...आज शाहे तातार तुम्हारे हाथों से राहेअदम जाना चाहते हैं..."

आगे बढ़ते गये शाहंशाह।

चिल्लाये—"रशीद ! गोली चलाओ..."

बन्दूक की नली नीचे झुकने लगी। भ्रातृप्रेम के आगे शाहजादे की विद्रोही भावना पराजित हुई।

उसके हाथों से बन्दूक छूटकर जमीन पर आ रही, जिसे सिपहसालार ने लपक कर उठा लिया।

शाहंशाह ने आगे बढ़कर शाहजादे का हाथ पकड़ लिया और सिपाहियों ने उसकी मुश्कें कस दीं।

"ले जाओ इसे—" शाहंशाह ने आज्ञा दी—"ले जाकर कैदखाने में डाल दो..."

शाहजादा बन्दीगृह में बन्द कर दिया गया। वह हताश हो चुका था। अब वह मरना चाहता था। सब ओर से निराश होकर अब वह अपना प्राणोत्सर्ग करना चाहता था।

उसकी भावना भ्रातृप्रेम के आगे पराजित हो गई थी, परन्तु शाहंशाह की कलुषिता पर उसके प्रेम ने कुछ प्रभाव न डाला था।

शाहंशाह अपने सगे भाई के साथ बर्बरता का व्यवहार कर रहे थे।

रात हो गई। कैदखाने की संगीन दीवारें अन्धकार से नहा उठीं।

शाहजादा बैठा हुआ सोचता रहा। कई घन्टे हुए, जब से वह बन्दीगृह में आया था, उसकी मानसिक चंचलता उत्तरोत्तर तीव्र होती जा रही थी।

एका-एक घने अन्धकार में उसने अपने पास कोई आकृति खड़ी हुई देखी।

"कौन !...कौन है ?..." पूछा उसने।

"धीरे से बोलो शाहजादे !..." महीन आवाज आई "मैं हूँ !..."

"कौन ?...बेगम आलिया ?..."

"हाँ, मेरी वजह से आपको निहायत तकलीफ हुई—" बेगम बोली।

"मेरे तकलीफ-आराम का आप जरा भी ख़याल न करें बेगम !" —शाहजादे ने कहा—"आप जाकर अपना काम देखें..."

"मैं आपको कैद से छुड़ाने आई हूँ शाहजादे !..."

"मगर मैं यहाँ से कहीं जाना नहीं चाहता !—" शाहजादे का स्वर करुण था।

"क्यों ?..."

"मैं मरना चाहता हूँ..."

"आप मरना चाहते हैं ?—" आश्चर्य से बोली बेगम—"आप क्यों मरना चाहते हैं शाहजादे ?..."

"अब जीने की ख्वाहिश नहीं रही बेगम !"

"इसका सबब ?..." बेगम ने पूछा।

"जिस गरीब की दुनिया उजड़ चुकी हो, वह जिन्दा रहकर क्या करेगा ?..."

"उजड़ी दुनिया फिर से बसाई जा सकती है शाहजादे..." कहती हुई बेगम शाहजादे के पास बैठ गई, एकाएक उससे सटकर।

"फिर से बसी हुई दुनिया के चमन में गुल न खिल सकेंगे बेगम !..." शाहजादा बोला।

"मैं गुल खिलाऊँगी शाहजादे !—" उसका हाथ पकड़ कर नम्रता से दबाया बेगम ने—"मैं कोशिश करूँगी कि तुम जिन्दगी भर तक खुश रहो..."

शाहजादे का शरीर सिहरन से भर गया, बेगम का स्पर्श पाकर।

बोला—"मैं इन संगीन दीवारों के बीच अपनी जिन्दगी की आखिरी साँस लेना चाहता हूँ बेगम ! आप मुझे मेरी किस्मत पर छोड़ दें..."

"आखिर तुम अपनी जिन्दगी से ऊब क्यों उठे हो शाहजादे !—" प्रेममरे स्वर में बोली बेगम आलिया—"तुम्हारी जिन्दगी को प्यार करने वाले इस दुनिया में हजारों हैं..."

"ऐसा प्यार लेकर मैं क्या करूँगा, जिससे मेरी परेशानियाँ और बढ़ें—"

"तुम्हें हो क्या गया है ? अभी कुछ घन्टे पहले तुम बगावत पर कमर कस चुके थे ? "

"वह ख्वाब था बेगम !—" शाहजादा बोला—"मुझमें इतनी ताकत नहीं कि मैं भाईजान के खिलाफ जा सकूँ। मेरे दिल में भाई की मुहब्बत, बगावत से ज्यादा ताकतवर है..."

"तुम बुजदिल हो"—बेगम ने कहा—"उठो, तुम्हें मेरे साथ चलना होगा..."

बेगम ने शाहजादे का हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचा और शाहजादा लुढ़ककर बेगम के वक्ष पर आ रहा।

बेगम ने उसका शरीर अपने सीने पर सम्हाल लिया।

मंत्रमुग्ध की भाँति शाहजादा बेगम के पीछे-पीछे चला। थोड़ी ही देर में दोनों शाहीमहल से बाहर थे।

एक अन्धकारपूर्ण स्थान पर पहुँचकर बेगम बोली—"तुम यहीं रुको शाहजादे ! मैं एक जरूरी काम से फिर महल के अन्दर जा रही हूँ। थोड़ी ही देर में वापस आ जाऊँगी। तब तक तुम यहीं खड़े रहना..."

उसके उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही बेगम पुनः वापस लौट गई।

शाहजादा थोड़ी देर तक वहाँ खड़ा रहा फिर धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। वह वहाँ से जल्द से जल्द दूर भाग जाना चाहता था।

थोड़ी दूर आगे जाने पर शाहजादा दौड़ने लगा, जैसे उसे कोई पकड़ने आ रहा हो। इस समय वह पूर्णतया विक्षिप्त हो उठा था।

वह दौड़ता रहा, भागता रहा,—भागता रहा, दौड़ता रहा।

आधे घन्टे के बाद जब बेगम आलिया उस स्थान पर आईं, तो शाहजादे को वहाँ न देखकर उन्हें महान आश्चर्य हुआ। उन्होंने उसे खोजा, मगर पता न लगा।

लाचार वे पुनः शाहीमहल को लौट गईं। कदाचित उन्हें विचार आया कि शाहजादा फिर वहीं न जा पहुँचा हो।

● ●

शाहंशाह का हृदय अत्यन्त उद्विग्न हो गया था और वे चाहते थे कि मदिरा की विस्मृति में सब उथल-पुथल भूल जाँय।

उन्होंने पुकारा—"साकी !..."

शम्सुल हाजिर हुई। झुककर कोर्निश किया उसने।

"आओ तितली !—" बोले शाहंशाह—"आज पिलाते-पिलाते मुझे बेहोश कर दो...इतना पिलाओ कि मैं खुद अपने को भी भूल जाऊँ..."

"जो हुक्म आलीजाह !..." धीरे से कहा शम्सुल ने। आज महल में जो घटनायें हुई थीं, उससे शम्सुल अवगत थी और वह जानती थी कि इस समय शाहंशाह अत्यन्त उत्तेजित हैं, इसलिए उसके इनकार करने पर स्वयं उसपर आफत आ सकती है।

उसने प्याला भरा। दाहक वस्तु शाहंशाह का सीना जलाती हुई नीचे उतर गई।

शाहंशाह पीते गये—शम्सुल पिलाती गई।

न वे रुके, न वह रुकी।

मदिरा की मादकता ने शाहंशाह का अंग-अंग अवश कर दिया फिर भी वह पीते गये।

"अब बस करो—" शाहंशाह ने कहा—"इधर आकर मेरे पास बैठो !"

"....." शम्सुल चुपचाप अपने जगह पर खड़ी रही। वह जानती थी कि इस समय शाहंशाह का दिल-दिमाग बेकाबू हो गया है।

"आगे बढ़ो मेरी जान !..." लपककर शाहंशाह ने शम्सुल का हाथ पकड़ लिया।

शम्सुल चीख उठी—"मुझे जाने दें आलमपनाह !..."

"जाने दूँ ? तुम्हारा हुस्न, तुम्हारा शबाब अछूता ही रहने दूँ..."

शाहंशाह ने उसे अपने पास खींच लिया।

'मैं गरीब हूँ आलीजाह ! मेरी दौलत न लूँटें..." प्रार्थना भरे स्वर में शम्सुल बोली।

"आज तक अपने दिल पर काबू रखा, मगर अब यह नहीं हो सकता—" शाहंशाह पर इस समय शैतान सवार था—"आज तक जो चीज आरजू से न पा सका, उसे दबरदस्ती हासिल करूँगा..."

"मेरी अस्मत न लूटें आका !..." कहती रही शम्सुल।

"अस्मत ?...तेरी नाचीज अस्मत के लिए मैं अपना बेइन्तहा खजाना देने को तैयार हूँ छोकरी ! मगर तू लेना नहीं चाहती..."

शाहंशाह ने शम्सुल को अपनी बाहों में कसना चाहा—

शम्सुल चिल्ला उठी—"मुझे छोड़िए आलमपनाह ! मैं दूसरे से मुहब्बत करती हूँ..."

"दूसरे से मुहब्बत करती है ?"—बोले शाहंशाह—"किससे ?... किससे तुझे मुहब्बत है..."

"शाहजादे से !—" कहा शम्सुल ने।

"शाहजादे से ?" चौंककर शाहंशाह ने उसे छोड़ दिया—

"तू शाहजादे से मुहब्बत करती है ?..."

"हाँ हजूरे आलम ! मैं उनसे जोमन की सराय में मिल चुकी हूँ..."

"क्या वह भी तुमसे मुहब्बत करता है ?—" पूछा शाहंशाह ने।

"हाँ आलीजाह !..."

"दगाबाज लड़की। तू मुझे भुलावा देना चाहती है ?"

"नहीं हजूरे आलम !...शाहजादे ने मुझसे शादी करने का वादा किया है..."

"शादी ?—" चौंके शाहंशाह—"उसने तुमसे निकाह का वादा किया है !"

बेचैनी से शाहंशाह प्रकोष्ठ में टहलने लगे।

"हाँ ! एक दिन उसने मुझसे निकाह की इजाजत मल्का के जरिये माँगी थी—" पुनः बोले शाहंशाह—"मैं नहीं जानता था कि तुम वही हो..."

शाहंशाह कमरे में टहलते हुए सोचने लगे—

शाहजादे ने उनसे इस लड़की से शादी करने की इच्छा प्रकट की और उन्होंने अस्वीकार कर दिया—फिर स्वयं ही उस लड़की पर उन्मत्त हो गये।

क्या यह उचित है ?

वे स्वयं निकृष्ट कर्म करें और भाई को कोई भला काम करने की आज्ञा न दें—क्या यह न्याय है ?

शाहंशाह संघर्षमय विचारों से सन्तप्त हो उठे। उनके हृदय में कदाचित् सुप्त सद्भावना जाग्रत हो रही थी।

टहलते-टहलते रुक गये शाहंशाह।

शम्सुल के सामने आकर खड़े हो गये वे।

"बेईमान छोकरी !"—हताश स्वर में बोले वे—"तूने मुझसे पहले ही क्यों न बताया ?....क्यों इतने दिनों तक अपनी जबान बन्द रखी ?..."

"....." सर नीचा किए हुए खड़ी रही शम्सुल।

"आज शाहीमहल का जर्रा-जर्रा मेरे खिलाफ बगावत कर रहा है... रियाया, मेरी रियासत बरबाद करना चाहती है और तुमलोग मेरा दीनो-ईमान बरबाद करने पर तुले हो...."

चुप हो रहे शाहंशाह ।

"खातू !..." फिर-तीव्र स्वर में पुकारा उन्होंने।

"आलीजाह !..." स्वर के साथ-साथ वह भयानक औरत भी आ पहुँची ।

"इस छोकरी को मेरे सामने से दूर करो"—शाहंशाह ने आज्ञा दी ।

"जो हुक्म आलीजाह !..."

खातू ने शम्सुन्न का हाथ पकड़ लिया और उसे घसीटना ही चाहती थी कि शाहंशाह गरजे—"कम्बख्त औरत ! ऐसे नहीं !...उसे इज्जत के साथ ले जा और शाहीमहल के किसी अच्छे कमरे में रख !..."

काँप उठी खातू। उसने शम्सुन्न को कोर्निश की और अदब के साथ आगे-आगे चली । उसके पीछे-पीछे शम्सुन्न भी ।

शाहंशाह ने आगे बढ़कर रेशमी डोर खींच ली ।

सिपहसालार आ उपस्थित हुआ । कोर्निश करके शाहंशाह की आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़ा रहा ।

"देखो ! मैं शाहजादे से चन्द मिनट तक बात किया चाहता हूँ... उसे माबदौलत के सामने पेश किया जाय..." शाहंशाह ने आज्ञा दी ।

सिपहसालार सर झुकाकर चला गया । शाहंशाह पुनः टहलने लगे ।

थोड़ी ही देर में सिपहसालार लौटा । उसका चेहरा भय से सफेद पड़ गया था ।

"क्या हुआ ?"—पूछा शाहंशाह ने ।

"आलीजाह !...आलमपनाह..." इससे अधिक कुछ कह न सका सिपहसालार ।

"साफ-साफ कहो"—संयत स्वर में शाहंशाह ने कहा—"मैं इस वक्त सब कुछ सुनने को तैयार हूँ...कहर के अलफाज भी मुझे मायूस न कर सकेंगे...बोलो ! क्या शाहजादे ने खुदकशी कर ली है ?..."

"नहीं हजूरेआलम !..."

"तो !..."

"वे फरार हो गये हैं..." सिपहसालार ने काँपते हुए कहा।

"अच्छा हुआ!"—शाहंशाह का स्वर गम्भीर हो गया था—"अच्छा हुआ, जो उसने अपना रास्ता खुद अख्तियार कर लिया...अब जा सकते हो तुम!..."

सिपहसालार को जैसे जीवनदान मिला। चला गया वह।

शाहंशाह पुनः टहलने लगे।

इस समय वह बहुत बेचैन लग रहे थे। उनका वृद्ध शरीर और भी शिथिल हो गया था।

अपने आप ही बड़बड़ाने लगे शाहंशाह—"वह चला गया...वह फरार हो गया...वह मेरे सीने पर लात मार कर भाग गया...बेईमान ने इस उम्र में जो मुझे तकलीफ दी है, वह मैं बरदाश्त नहीं कर सकता...कोई भी बरदाश्त नहीं कर सकता..."

रुककर शाहंशाह ने अपने हाथों प्याला भरा और कई बार पिया।

परन्तु मदिरा की ज्वाला उन्हें और भी दग्ध करने लगी।

इस समय वे कोई दूसरे ही शाहंशाह थे, जिन पर सद्भावना ने पूर्ण विजय पा ली थी।

अपना काँपता हुआ शरीर लेकर टहलते रहे शाहंशाह। उनकी व्यथा का अन्त न था। उनके नेत्रों से अनजाने ही आँसू बह रहे थे।

आधी रात बीत गई, परन्तु टहलते ही रहे वे।

"क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ?"—दरवाजे पर से आवाज आई।

शाहंशाह ने देखा—मल्का खड़ी थीं। मुँह पर क्रोध था उनके।

"आओ मल्का!"—शाहंशाह शिथिल स्वर में बोले—"मैं देख रहा हूँ तुम्हारा चेहरा आज बहुत तमतमाया हुआ है...क्या तुम भी मुझे कुछ जली कटी सुनाने आई हो?...सुनाओ! आज मैं सब कुछ सुनूँगा, सब कुछ बरदाश्त करूँगा..."

"मैं एक बात आप से पूछने आई हूँ!" मल्का का स्वर रूखा था।

"पूछो! शौक से पूछो!..."

"शाहजादे को आपने क्यों गिरफ्तार किया ?"

"क्या यह भी तुम्हें बताना पड़ेगा मल्का ?"—शाहंशाह बोले—"उसने मेरी तौहीन की थी, इसलिये मजबूरन उसे गिरफ्तार करना पड़ा..."

"वह नादान है...मगर उसके साथ ही आपने भी क्यों नादानी की ?—" उत्तेजित स्वर में मल्का बोलीं—"वह आपका भाई है, क्या आप उसकी मुहब्बत भूल गये हैं...."

"उसके चले जाने पर मेरे दिल ने भाई की मुहब्बत जानी है मल्का !...मगर जरा सोचो तो कि जो शख्स शुरू से ही हुकूमत करता आया हो, वह अपनी हुक्मउदूली कैसे देख सकता है..."

"वह आपकी हुक्मउदूली कर सकता था...सल्तनत का वह हिस्सेदार था...उसे आप की ही तरह हर हक हासिल है..." मल्का बोलीं।

"इस वक्त हिस्सेदार का सवाल मेरे सामने कुछ नहीं है मल्का !—शाहंशाह बोले—"अगर आज वह मेरे पास होता तो सारी सल्तनत उसे दे देता...मैं बगावत नहीं चाहता, अमन चाहता हूँ..."

"चन्द दिन पहले आपके दिल में यह खयाल क्यों न आया ?...अपने जुल्मों से रियाया को बागी होने का मौका आपने क्यों दिया ?..."

"इन्सान कुछ खोकर ही सीखता है मल्का !—" शाहंशाह बोले—"आज मैं देख रहा हूँ कि सल्तनत का हर इन्सान बागी हो गया है, मल्का भी...दुनिया में मैं अपने को अकेला पा रहा हूँ—कोई साथी नहीं, कोई सहारा नहीं...मगर नहीं, अब भी मेरे दो साथी हैं, जिनकी मदद से मैं सब गम भूल जा सकता हूँ—शरबते अनार की सुराही और प्याला !...यही आखिरी साथी हैं मेरे !"

शाहंशाह ने आगे बढ़कर फिर प्याला भरा और उसे होठों से लगाया।

उसी समय शाहीमहल के फाटक पर सैकड़ों तोपें एक साथ गरज उठीं। जमीन आसमान काँपने लगे। चारों ओर कोलाहल मच गया। महल के भीतर भी चीख-चिल्लाहट प्रारम्भ हो गई।

शाहंशाह स्थिर रहे। शरबते अनार का प्याला होठों से लगा रहा।

सिपहसालार घबड़ाया हुआ दौड़ता आया।

"हजूरेआलम! गजब हो गया—" बोला वह—"बागियों का हमला हो रहा है—हम क्या करें? हुक्म फरमायें!"

"बागियों का हमला?—" क्षीण एवं करुण मुस्कराहट फैल गई शाहंशाह के होठों पर—"अच्छा हुआ, वह फैसला भी आज ही हो जायगा..."

"हमारे लिए क्या हुक्म है आलीजाह?—"

"शाही महल की तोपें खामोश रहें और हमारी फौज हथियार डाल दे—" शाहंशाह ने आज्ञा दी—"आखिरी वक्त मैं खून खराबी नहीं देखना चाहता...शाहीमहल का दरवाजा खोल दो..."

"मगर आलीजाह!..." सिपहसालार ने कुछ कहना चाहा।

"मेरे हुक्म की तामील हो—फौरन!..." शाहंशाह ने कहा।

सिपहसालार सर झुकाकर चला गया।

थोड़ी देर बाद ही शाही तोपों की गड़गड़ाहट बन्द हो गई।

"यह आपने क्या किया शाहंशाह?—" मल्का बोलीं—"बागी आपके साथ अच्छा सुलूक न करेंगे..."

उसी समय दरवाजे पर खटपट हुई। विजय की माला पहने सफ्दर आ पहुँचा। उसके साथ बहुत से हथियार बन्द बागी थे।

"आज जुल्म का खात्मा हुआ—" हँसते हुए सफ्दर बोला—"शाहीमहल आज रियाया का है...जुल्मी शाहंशाह! रियाया की आह ने तुम्हें जला डाला...अब खुद तुम जलने के लिए तैयार रहो..."

"आओ दोस्त! तुम्हारा ही इन्तजार कर रहा था—" शाहंशाह न जाने क्यों पागल से हो उठे थे—"आगे बढ़कर इन हाथों में हथकड़ियाँ डालो!"

"इन्हें गिरफ्तार करो!—" सफ्दर ने अपने सैनिकों को आज्ञा दी।

सैनिक आगे बढ़े। मल्का दौड़कर शाहंशाह के शरीर से लिपट गई, सफ्दर से बोलीं—"सफ्दर ! इन्हें छोड़ दो...इन्हें जाने दो...'!

"मल्का !..." शाहंशाह ने मल्का के शरीर को अपने से बल पूर्वक अलग कर दिया—"जो जुल्म ढाने की हिम्मत रखता है, उसके पास जुल्म बरदाश्त करने की भी ताकत है। तुम मुझे इन बागियों की नजरों में जलील बनाना चाहती हो ?...सफ्दर ! मेरा हुक्म है कि तुम आगे बढ़ो और मुझे गिरफ्तार करो..."

शाहंशाह की आवाज से अब भी रोब टपकता था ?

"बेहतर है !—" कहकर सफ्दर आगे बढ़ा और दूसरे हीं क्षण शाहंशाह गिरफ्तार करके बन्दीगृह भेज दिये गये।

मल्का रोने लगीं। सफ्दर उनके पास आया।

बोला—"मल्का ! रियाया आपको अपनी माँ समझती है। मुझे उम्मीद है कि वह अपनी माँ के साथ बेइन्साफी न करेगी। हमारी दुश्मनी सिर्फ शाहंशाह से थी...आप आजाद हैं..."

"इस आजादी से मौत ही बेहतर थी सफ्दर ?—" मल्का ने रोते-रोते कहा।

"हम मजबूर थे मल्का !..." सफ्दर ने कहा।

वह सारी रात बगावत में ही व्यतीत हुई।

● ●

जिस समय मल्का अपने प्रकोष्ठ में आयीं, उन्होंने अपने हृदय की उद्विग्नता को दूर भगा दिया था और पूर्ववत् स्वस्थ थीं।

यद्यपि शाहंशाह की गिरफ्तारी तथा बलवे के कारण होने वाले उलट-

फेर ने उन्हें पर्याप्त मानसिक कष्ट दिया था, फिर भी आए हुए कष्टों का सामना वे रोकर नहीं करना चाहती थीं।

अब तक उन्होंने कितने ही कष्ट सहे थे। और सहन करते-करते उनकी शक्ति अपरिमित हो उठी थी।

जब वे अपने प्रकोष्ट में आईं तो यह देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ कि शम्सुल पहले से ही बैठी हुई उनकी प्रतीक्षा कर रही है।

उन्हें देखकर शम्सुल ने कोर्निश की, तो मल्का ने आगे बढ़कर उसे आवेष्टित कर लिया और अपने पलंग पर ला बिठाया। स्वयं भी उसके बगल में बैठ गयीं।

"तो, तुम्हीं हो, हमारे शाहजादे की जिन्दगी में तूफान लाने वाली ?—" मल्का बोलीं।

"इन्सान की ताकत कहाँ जो तूफान ला सके..." शम्सुल ने नम्रता-पूर्वक कहा—"तूफान तो अपने आप आते हैं मल्का!"

"शाहजादा तुमको चाहता था—" मल्का कहने लगीं—"और तुम भी उसे प्यार करती थी, फिर क्या वजह हुई कि तुमने उसे छोड़कर शाहंशाह को पसन्द किया ?"

"इन्सान को मजबूर होकर भी बहुत कुछ करना पड़ता है मल्का—" शम्सुल बोली—"मैं कितनी बदनसीब हूँ कि जब से शाहजादे के रास्ते में आई, वे आराम न पा सके और जब शाहीमहल में आई तो यहाँ भी खुराफात मची..."

"मगर क्या तुम्हें यह देखकर ताज्जुब नहीं होता कि अपना सब कुछ लुटाकर भी मैं खामोश हूँ ?—" पूछा मल्का ने।

"ताज्जुब होता है मल्का। यह मेरे लिए निहायत ताज्जुब की बात है कि आप अब भी वैसी ही हैं, जैसी इस तूफान के पहले थीं..."

"तुम्हारा ख्याल ठीक है—" मल्का बोलीं—"इस तूफान ने मुझे ज्यादा तकलीफ नहीं दी है, क्योंकि बरसों पहले से मैं यह जानती थी

कि एक न एक दिन यह तूफान आकर ही रहेगा। सल्तनत का हर एक आदमी यह जानता था, सिवा शाहंशाह के..."

"सुनती हूँ शाहंशाह कैद कर लिए गये!—" शम्सुल ने पूछा।

"हाँ! जुल्म का आखिरी अंजाम कैद है—" मल्का बोलीं—"ऐसा मालूम होता है कि आखिरी वक्त शाहंशाह को अपने जुल्मों पर पछतावा हो गया था। अगर वे कुछ दिन पहले ही ठीक रास्ते पर आ गये होते, तो यह दिन देखना नसीब न होता..."

"रियाया शाहंशाह के साथ कैसा बर्ताव करेगी मल्का?..."

"वैसा ही, जैसा अब तक शाहंशाह रियाया के साथ करते आ रहे थे—" मल्का ने कहा—"मेरे ख्याल से रियाया इस वक्त खूँखार हो उठी है। वह शाहंशाह के जुल्मों को नहीं भूल सकती और जब तक वह अपने ऊपर किये गये जुल्मों का बदला नहीं ले लेती तब तक चैन न लेगी..."

"अगर ऐसा हुआ, तो क्या आपको अफसोस न होगा?"

"शुरू से ही रंजोगम मेरे रास्ते पर आते रहे हैं और अब मेरा दिल बेहद कड़ा हो गया है—" मल्का बोलीं—"ऐसी हालत में कड़ी से कड़ी तकलीफ भी मैं बरदाश्त कर सकती हूँ..."

"क्या शाहजादे साहब मुझे अब न मिल सकेंगे?—" शम्सुल ने पूछा।

"वह शाही कैदखाने से भाग गया है—" मल्का ने कहा—"बागियों के साथ भी नहीं है। वह कहाँ चला गया, यह एक राज है?...फिर, भी इधर के झंझटों से छुटकारा पाकर मैं उसकी खोज करूँगी! तुम इत्मिनान रखो।"

इसके बाद शम्सुल उठकर अपने कमरे में आई।

और मल्का पलंग पर लेटकर शाहंशाह की बात सोचने लगीं।

ऊपर से मल्का ने, चाहे अपने हृदय पर विजय पा ली हो, मगर उनके अन्तर में दारुण वैकल्य भर उठा था।

आज तक वे जिस शाहंशाह की मल्का कहलाती थीं—हो सकता है, बागी उसके साथ क्रूरता का व्यवहार करें।

उधर रात्रि के गहन अन्धकार में, कैदखाने की संगीन दीवारों के बीच बैठे हुए शाहंशाह भी इन्हीं दुर्दमनीय विचारों में व्यस्त थे।

कोठरी के दरवाजे पर सशस्त्र बागियों का पहरा था।

पहरेदारों के पास ही एक मशाल जल रही थी, जिसकी तेज रोशनी का कुछ अंश कोठरी में भी पहुँच रहा था, जिससे दीवारों की कालिमा और भी भयावह हो उठी थी।

वह रात्रि का अन्तिम प्रहर था।

कोठरी का फाटक खुला और सफ्दर अन्दर आया।

उसके हाथ में मदिरा की सुराही और एक प्याला था।

"मैंने सोचा शाहंशाह को तकलीफ होगी—" सफ्दर बोला—"इसीलिये यह लाया हूँ..."

उसने सुराही और प्याला शाहंशाह के सामने रख दिया।

शाहंशाह ने अपनी करुण दृष्टि उठाकर एक बार सफ्दर की ओर देखा फिर सिर नीचा कर लिया और कुछ सोचने लगे। बड़ी देर तक सोचते रहे वे।

"सफ्दर !..." एकाएक शाहंशाह ने अपना सर ऊपर उठाया।

"कहिये !..." सफ्दर बोला।

"तुम मेरा मजाक उड़ाने आये हो सफ्दर ?—" शाहंशाह का स्वर पहले से भी अधिक करुण हो गया था।

"नहीं शाहंशाह ! मैं आपकी जरूरत पूरी करने आया हूँ—" सफ्दर बोला।

"क्या तुम्हारा ख्याल है कि इसके बगैर मैं जिन्दा नहीं रह सकता ?" शाहंशाह ने पूछा।

"आप हमारे शाहंशाह हैं—" सफ्दर ने कहा—"आपकी तकलीफों को दूर करना हमारा फर्ज है..."

"तुम मुझे शाहंशाह कहकर जले पर नमक छिड़क रहे हो सफ्दर !—" शाहंशाह बोले—"याद रखो ! तुम्हारे अल्फाज मेरा कलेजा चीर सकते हैं, मगर मेरे चेहरे पर शिकन नहीं ला सकते..."

"आप कुछ घण्टों पहले तक हमारे शाहंशाह थे—" हिचकिचाता हुआ सफ्दर बोला।

"मगर अब मैं तुम्हारा कैदी हूँ—" दृढ़ स्वर में शाहंशाह ने कहा—"और तुम मेरे साथ कैदियों का-सा वर्ताव न करके मेरी तौहीन कर रहे हो—"

"....."

"तुम चाहते हो कि मैं तुम्हारी मेहरबानी के सामने झुक जाऊँ और अपनी इज्जत खाक में मिला दूँ—" शाहंशाह कहते गये—"मगर मैं ऐसा न होने दूँगा...बादशाह रहने पर मैं जो बर्ताव अपने कैदियों के साथ करता था, इस कैदखाने में अपने साथ भी वही बर्ताव होता हुआ मैं देखना चाहता हूँ सफ्दर !"—

"रियाया ने आपके साथ बगावत की शाहंशाह !..." सफ्दर बोला—"मगर उसके दिल का रहम अब तक वैसा ही है। वह अपने पुराने बादशाह के साथ बेहरमी नहीं करना चाहती..."

"इस बेइज्जती से तो रियाया की बेरहमी ही अच्छी है...अबतक मैंने हुकूमत की है, अब किसी की रहमदिली से अपना फायदा नहीं चाहता..." शाहंशाह ने कहा।

"मैं आपके दिल से पूछता हूँ शाहंशाह !—" सफ्दर बोला—"क्या बगावत करके रियाया ने गलती की है ?"

"रियाया अब मेरे साथ रहमदिली का बर्ताव करके गलती कर रही है सफ्दर ! शायद वह मेरा जुल्म भूल गई है, शायद उसके जिगर पर लगा हुआ मेरी ठोकरों का जख्म अच्छा हो चला है..."

"मुझे सख्त अफसोस है कि मैंने आपको तकलीफ दी—" सफ्दर

ने कहा—"मैं जा रहा हूँ...क्या शाहंशाह मुझसे कुछ दरियाफ्त करना चाहते हैं ?..."

"हाँ, एक बात पूछना है !—" शाहंशाह बोले—"अगर तुम, बगैर मेरे ऊपर मेहरबानी किए हुये, बता सको तो बताओ..."

"पूछिए ?..."

"जिसकी रहनुमाई ने तुम्हारी ताकत इतनी बढ़ा दी, वह बेगम आलिया कौन है ?..." शाहंशाह ने पूछा।

"शाहंशाह यह क्यों पूछना चाहते हैं ?"

"मरने से पहले मैं अपने दुश्मनों से वाकिफ हो जाना चाहता हूँ—" शाहंशाह बोले—"क्या तुम यह राज बताना नहीं चाहते ?"

"काश ! मैं बता सकता—" सफ्दर ने विवशतापूर्ण स्वर में कहा—"मगर हममें से कोई भी यह नहीं जानता कि वे कौन हैं ? कहाँ रहती हैं ?..."

"ताज्जुब की बात है—!" शाहंशाह बोले—"मगर क्या तुमने कुछ अन्दाजा भी नहीं लगाया है ?..."

"अन्दाजा तो बहुत कुछ लगा चुका हूँ—" सफ्दर ने कहा—"और पक्की उम्मीद है कि वह बात सच्ची है—"

"क्या तुम मुझसे बता सकते हो ?—"

"बताने में मुझे कोई एतराज नहीं—" सफ्दर बोला—"समरकन्द की सरहद पर कुछ साल पहले जो अमलदारी थी, उसके मालिक की याद तो होगी आपको ?"

कुछ सोचने लगे शाहंशाह।

बोले—"शायद तुम्हारा मतलब अमीर हबीबुल्ला से है ?"

"हाँ !"—सफ्दर ने कहा—"उन्होंने भी शाहंशाह के खिलाफ बगावत की थी, मगर कामयाब न हो सके थे और उनकी सारी अमलदारी को शाही तोपों ने खँडहर में तबदील कर दी थी...क्या वह वारदात शाहंशाह भूल गये ?..."

"नहीं ! मैं भूला नहीं हूँ...मुझे सब कुछ याद है, वह भूलने की चीज नहीं..."

"क्या अमीर हबीबुल्ला के बेगम की भी याद है शाहंशाह को ?"—सफ्दर ने पूछा।

शाहंशाह की भवों पर बल पड़ गये।

कुछ बीती बातें उनके सामने नृत्य कर उठीं।

एक जमाना वह था, जब शाहंशाह ने अमीर हबीबुल्ला की बेगम की खूबसूरती की चर्चा सुनी थी और उसे पाने के लिये बेकरार थे।

मगर उस घमंडी बेगम ने शाहंशाह की इच्छाओं पर लात मार दी थी।

शाहंशाह का क्रोध उमड़ पड़ा और जब उन्होंने अमीर हबीबुल्ला की बगावत की बात सुनी, तो उनका क्रोध चरम सीमा तक पहुँच गया और दूसरे ही दिन उन्होंने उस हरी-भरी अमलदारी को पृथ्वी पर सुला देने की आज्ञा दे दी।

अमीर हबीबुल्ला और उनके साथी पकड़ कर सूली पर चढ़ा दिये गये, मगर बेगम का पता न चला।

शाहंशाह ने सोचा, बेगम ने शायद अपनी जान दे दी हो या तोप के किसी गोले ने उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये हों।

'शाहंशाह को शायद याद नहीं पड़ रहा है !"—सफ्दर ने पूछा।

"मुझे याद है !"—शाहंशाह बोले—"मैं कुछ बीती बातें सोच रहा था..."

"हमारा ख़याल है कि वही बेगम, इस पोशीदा नाम और सूरत से हमारी मदद कर रही है"—सफ्दर ने कहा।

"इसका सबब ?..."

"बदला लेना !—"

"सफ्दर ! क्या तुम समझते हो कि औरतें बदला लेने के लिये इस हद तक जा सकती हैं"— शाहंशाह ने पूछा।

"इन्तकाम की आग कमजोरों को भी ताकतवर बना देती है शाहंशाह !..."

"हो सकता है कि तुम्हारी बात ठीक हो—मैं बेगम आलिया से भेंट करना कबूल करूँगा, अगर वे आ सकें..."

"मैं शाहंशाह की ख्वाहिश उन पर जाहिर करूँगा..." सफ्दर ने कहा।

"मगर भूलना मत—यह सिर्फ ख्वाहिश है, मिन्नत नहीं..." शाहंशाह बोले।

सफ्दर चला गया। शाहंशाह बेचैनी से बिस्तर पर करवटें बदलने लगे।

जो कल मखमली पलंग पर सोता था, वह आज एक मोटे कम्बल पर लेटा है।

जो कल शरबते अनार पीता था, वह आज पानी भी पीना नहीं चाहता।

जो कल शेर की तरह तड़पता था, आज वही शिथिल वाणी में बोल रहा है।

नियति का चक्र है यह !

सफ्दर को गये केवल आधा घण्टा ही व्यतीत हुआ था कि कैदखाने के दरवाजे पर एक शकल आ खड़ी हुई, काला लबादा तथा बुर्का पहने हुए।

बेगम आलिया को देखकर पहरेदारों ने सम्मान प्रदर्शन किया और कैदखाने का दरवाजा खोल दिया।

बेगम भीतर प्रविष्ट हुईं।

उन्हें देखकर शाहंशाह उठ बैठे।

"सफ्दर से सुना कि शाहंशाह मुझसे मिलने को बेचैन हो रहे हैं"—बेगम बोलीं—"इसीलिये आई हूँ..."

"हाँ ! मैं तुमसे मिलना चाहता था"—शाहंशाह ने कहा—"मैं

उस औरत को देखना चाहता था, जिसकी जबान में इतनी ताकत और हरकतों में कहर है..."

"बहुत मायूस हो रहे हैं शाहंशाह !"—बेगम ने व्यंग किया।

"मौत के पहले मायूसी का आना जरूरी है"—शाहंशाह बोले।

"मौत से इतना डरते हो सुलतान ?"—बेगम बोलीं—"चाहो, तो मैं तुम्हें इसी वक्त कैद से निकाल ले चलूँ। किसी को पता भी न चलेगा..."

"तुम्हारी हमदर्दी के लिये शुक्रिया !...मगर तुम्हारी मेहरबानी सर पर लादने के बदले मैं अपनी मौत बेहतर समझता हूँ..." शाहंशाह ने कहा।

"अब भी तुम्हारी आवाज से शाही बू आती है सुलतान !...क्या तुम्हें अपने दुश्मनों का खौफ नहीं ?..."

"दुश्मन से डरना मैं नहीं जानता..."

"क्या बेगम आलिया से भी नहीं डरते, जिसने तुम्हारे कैदखाने से सफ्दर और शाहजादे को निजात दी थी ?"—बेगम ने पूछा।

"क्या शाहजादा तुम्हारी मदद से फरार हुआ था ?—" शाहंशाह बोले।

"हाँ !..."

"कहाँ है वह ?..."

"उसने मुझे धोखा दिया और न जाने कहाँ चला गया"—बेगम ने कहा।

"शायद उसे तुम्हारा साथ देना पसन्द न था"—शाहंशाह ने कहा—"वह मेरा भाई था, मेरे खिलाफ बगावत करने की उसमें ताकत ही नहीं। भाई की मुहब्बत उसके रास्ते में खड़ी थी..."

"क्या तुम्हारे दिल में भी वैसी ही मुहब्बत है शाहंशाह ?"—बेगम ने पूछा।

"नहीं ?—"शाहंशाह ने उत्तर दिया—"मेरे दिल में वह पाक मुह-

ब्बत नहीं है। आज मुझे यह मानने में शर्म नहीं है कि दौलत की चमक, ऐशपरस्ती की बू और शाही ऐवान के रुतबे ने मेरी आँखों पर परदा डाल रखा था...मैं अन्धा था..."

"....."

"जो अन्धा था वह आज कैदखाने में पड़ा सड़ रहा है और जो आँखों वाला था, वह कैदखाने से निकलकर न जाने कहाँ दूर जा पड़ा है..."

ठंढी साँस ली शाहंशाह ने।

शाहजादे की याद ने उनकी आँखों में आँसू ला दिये।

"रोते हो सुलतान ?"—बेगम बोलीं—"तुम भी रोना जानते हो...?"

"....." चुप ही रहे शाहंशाह।

"तकलीफ और दर्द से तुम्हारी भी आँखों से आँसू निकलते हैं ?... ताज्जुब की बात है !..." बेगम ने कहा।

"बेदर्द औरत ! तुम इन आँसुओं की कीमत क्या जानोगी ?" बोले शाहंशाह—"ये रंज के आँसू हैं, जिनके कतरे-कतरे में पछतावा, दर्द और प्यार भरा पड़ा है..."

"मेरे साथ चलकर तुम अपनी तकलीफों का खात्मा क्यों नहीं कर देते सुलतान !"—बेगम ने कहा।

"मुझे शक है कि तुमने दिल से रियाया की रहनुमाई की है"—शाहंशाह बोले—"अगर ऐसा होता, तो तुम मुझे रियाया की आँखों में धूल झोंककर, चुपके से भाग चलने को न कहती....मैं जानता हूँ कि तुमने खुदगर्जी से ही रियाया का साथ दिया है और शायद उनके लिये तुम किसी दिन तकलीफदेह बन जाओगी..."

"मैंने अब तक रियाया के लिए जो कुछ किया है, वह किसी से छिपा नहीं है शाहंशाह !—"

"मगर अब तुम उसे धोखा देना चाहती हो"—शाहंशाह बोले—

"फरेबी औरत ! यह समझ लो तुम कि जब मैं शाहंशाह था, तो हजारों बार रियाया की जबान ने मुझे जुल्मी कहा, मगर अब, जब मैं एक बदनसीब कैदी हूँ, तो अपने को दगाबाज कहलाना पसन्द नहीं करूँगा..."

"मुझे ताज्जुब होता है कि तुम इतनी जल्द कैसे बदल गये शाहंशाह ?"

"किस्मत की एक ठोकर कयामत को भी हिला सकती है"—शाहंशाह बोले—"मेरे जिगर में तो इन्सान का दिल है और इन्सान का दिल एक लहमे में बदल सकता है..."

"क्या तुम मेरी सूरत देखना पसन्द करोगे शाहंशाह ?" बेगम ने पूछा।

शाहंशाह चौंक पड़े। उन्हें विश्वास ही नहीं था कि बेगम उन्हें अपनी सूरत दिखाना चाहेगी।

वे बोले—"मैं पसन्द करूँगा, अगर तुम अपनी खुशी से अपना बुर्का हटा सको..."

"मुझे कोई एतराज नहीं है"—बेगम ने कहा—"लो, देख लो ! पहचान लो ! समझ लो कि औरत ठुकराये जाने पर क्या कर सकती है ?..."

शाहंशाह ने सर ऊपर उठाया।

बेगम ने अपना बुर्का पीछे हटा दिया।

चाँद-सी सूरत, मशाल के मद्धिम प्रकाश में चमक उठी।

शाहंशाह एक टक उस सूरत को देखते रहे—देखते रहे। बड़ी देर तक देखते रहे, बिना हिले-डुले।

उनके मुख पर तनिक भी आश्चर्य के भाव न आये। उनकी आँखों से जरा भी उद्विग्नता न टपकी।

देखकर उन्होंने अपना सर नीचा कर लिया। बेगम ने अपना मुँह ढँक लिया।

"देख लिया शाहंशाह ?"—पूछा बेगम ने।

"देख लिया !"—बोले शाहंशाह संयत स्वर में—"तुम्हें देखकर मुझे ताज्जुब नहीं हुआ । मैं जानता हूँ कि इस दुनिया में सब कुछ मुमकिन है...तुमने जो मेरे जुल्मों से ऊबकर, बागी रियाया का साथ दिया, उसमें तुम्हारा कसूर नहीं । मैंने तुम्हारे साथ जो बेइन्साफी की थी, उसका यही नतीजा ठीक है । मुझे खुशी है कि अब मैं अमन से मौत का इन्तजार कर सकूँगा...."

"तुम्हें मौत का इन्तजार न करना पड़ेगा शाहंशाह"—बेगम ने कहा—"रियाया तुम पर हमदर्द है, वह मौत की सजा तुम्हें न देगी..."

"रियाया की यह हमदर्दी मैं बरदाश्त नहीं कर सकता..." शाहंशाह ने कहा ।

बेगम आलिया चली गयीं ।

● ●

आज शाहीमहल के प्राङ्गण में बहुत भीड़ है ।

बागियों का पूरा समूह वहाँ एकत्रित है । सभी चुपचाप बैठे हैं ।

सफ्दर एक ऊँचे आसन पर आसीन है और बेगम आलिया का स्थान खाली है ।

थोड़ी देर के बाद सफ्दर उठा और गम्भीर स्वर में बोला—"दोस्तों ! आज हम एक नई दुनिया में आ गये हैं ! वही शाहीमहल, जो चार दिन पहले हमारे लिए खौफ का सबब था, आज हमारे रहने की जगह है...जो कुछ हुआ, वह आप लोगों की जवाँमर्दी, बहादुरी और जाँनिसारी से ही हो सका है । आपने अपने फौलाद जैसे सीने पर शाही तोपों की मार बरदाश्त की है और उसी का नतीजा यह है कि आज हमारे सुलतान और उनके कारिन्दे हमारी कैद में हैं..."

कुछ देर के लिये रुका सफ्दर।

जनसमूह पूर्णतया शान्त था।

"अपनी बगावत और आपकी बहादुरी के दौरान में, हम उस नेक-दिल औरत को नहीं भूल सकते, जिसकी रहनुमाई की बदौलत हमारे हाथों और पैरों में ताकत आई और हमने शाहंशाह के खिलाफ हथियार उठाया..." सफ्दर कहने लगा—"बेगम आलिया शुरू से आखिर तक हमारे लिए एक राज बनी रही, मगर उन्होंने हमारी जो मदद की, हमारे जिस्म के ठण्ढे खून में जो गर्मी पैदा की, उसका बदला हम अपनी मौत से भी नहीं दे सकते..."

बागियों की सभा सुन रही थी।

"मुझे अफसोस है कि आज इस मजलिस में आना, बेगम आलिया ने कबूल नहीं किया—" सफ्दर बोलता रहा—"मगर क्या समझकर उन्होंने ऐसा किया, यह भी हमारे लिए राज़ ही हैं। फिर भी उन्होंने वादा किया है कि हमारी ओर से होने वाले, पहले, दरबारेआम में वे जरूर तशरीफ लायेंगी...आज जो कुछ काम यहाँ होंगे, उसके अंजाम देने का सारा अख्तियार उन्होंने मुझे दिया है। क्या यह आप लोगों को मन्जूर है?"

"हमें बेगम आलिया का हर हुक्म मंजूर है—" समूह से आवाज आई!

"बहुत खूब!—" सफ्दर बोला—"अब हमारे सामने पेचीदा सवाल यह है कि हमें शाहंशाह और मल्का मुअज्जमा के साथ कैसा बर्ताव करना चाहिये..."

सब ने ध्यानपूर्वक सफ्दर की ओर देखा।

"आप सभी जानते हैं कि शाहंशाह चाहे जितने भी बदकार रहे हों, मगर मल्का की हमदर्दी हमेशा रियाया के साथ रही है...इस बात को सबसे ज्यादा मैं जान सकता हूँ, क्योंकि शाहजादे का दोस्त होने के नाते मैं कई बार उनको कदमबोसी कर चुका हूँ और हर बार उन्होंने मुझे बेटे जैसा प्यार दिया है..."

"ऐसी मल्का के खाविन्द शाहंशाह के साथ हम क्या करें यह हमारी समझ में नहीं आता—" सफ्दर कहता रहता—"जब हम शाहंशाह की बदफेलियों की ओर देखते हैं, तो आँखें लाल हो जाती हैं और जब हम मल्का की हमदर्दी याद करते हैं तो सर अपने आप झुक जाता है... शाहंशाह को हम सजाये मौत दे सकते हैं, मगर मल्का के खाविन्द की हम बेइज्जती भी नहीं कर सकते ऐसा करना, उस पाकदिल औरत की बेइज्जती होगी...यह मेरे लिए ऐसी पहेली है, जिसका जबाब हमें बहुत सोचकर निकालना होगा...क्या आप इस बारे में कुछ अपनी राय जाहिर करेंगे ?"

चुप हो गया सफ्दर।

जनसमूह सर नीचा करके कुछ सोचने लगा।

कुछ देर के बाद एक व्यक्ति खड़ा होकर बोला—

"मेरा अर्ज है, कि अगर हमारे दिल में मल्का के लिए इतनी इज्जत है, तो शाहंशाह की जान बख्श दी जाय और उन्हें कोई जागीर दे दी जाय...."

दूसरा खड़ा हुआ।

बोला—"मेरी भी यही राय है। हमारे ख्याल से अगर हम शाहंशाह के जुल्मों का बदला रहमदिली से चुकाएँ, तो मल्का की हमदर्दी का बदला अपने आप अदा हो जायगा।"

तीसरा बोला—"बुराई का बदला रहम से देना हर इन्सान का पहला फर्ज है..."

चौथा खड़ा हुआ, तो कुछ देर तक वह चुप होकर सोचता रहा

फिर बोला—"मेरी राय अपने दोस्तों से कुछ मुख्तलिफ है...मेरा ख्याल यह है कि शाहंशाह के बारे में खुद मल्का मुअज्जमा से ही पूछा जाय..."

उसकी बात सुनकर चारों ओर सन्नाटा छा गया।

फिर कोई न उठा।

"क्या राय है आपकी ?"—एक बार फिर पूछा सफ्दर ने।

"मल्का से पूछा जाय"—इसबार सब एक स्वर से बोले।

सफ्दर ने दो प्रहरियों की ओर देखा।

"मल्का मुअज्जमा को इज्जत के साथ पेश किया जाय—" उसने आज्ञा दी।

एक महीन रेशमी पर्दा खींच दिया गया।

थोड़ी देर बाद मल्का आकर उसमें बैठीं।

सफ्दर पर्दा उठाकर उनके सामने आया।

"किसकी हिम्मत जो आपको हुक्म दे मल्का !"—सफ्दर बोला "मैं रियाया की तरफ से आपसे मिन्नत करने आया हूँ।"

"रियाया क्या चाहती है ?"—पूछा मल्का ने। उनका मुख उदासीनता धारण किए हुए था।

"हम आपसे यह पूछना चाहते हैं कि शाहंशाह के साथ कैसा बर्ताव किया जाय ?"

"शाहंशाह की इतनी बेइज्जती करके अब तुम लोग मुझसे यह पूछना चाहते हो कि उन्हें क्या सजा दी जाय ?...यही है न तुम्हारा मतलब ?..."

"हम मल्का का हुक्म सुनना चाहते हैं" सफ्दर बोला।

"जब तुम लोगों ने बगावत का झगड़ा खड़ा किया, उस वक्त भी क्या रियाया ने मेरा हुक्म जानना चाहा था ?"—मल्का करुण स्वर में बोलीं—"यह मेरी सख्त बेइज्जती है सफ्दर ! सब कुछ करके अब पूछने का मतलब यही है कि तुम लोग मेरे मुँह से यह सुनना चाहते हो कि शाहंशाह को सजाये मौत दी जाय..."

"नहीं-नहीं मल्का..."

"शाहंशाह को क्या सजा दी जाय, वह खुद रियाया ही सोच सकती है"—मल्का ने कहा।

"रियाया चाहती है कि शाहंशाह छोड़ दिये जाँय !..."

"छोड़ दिये जाँय ?"—आश्चर्य से बोलीं मल्का—"रियाया उन्हें क्यों छोड़ना चाहती है सफ्दर ?...वे कैदी हैं, उनके साथ भी वही बर्ताव होना चाहिए, जो एक मामूली कैदी के साथ होता है और उन्हें भी वही सजा मिलनी चाहिए, जो वैसे कसूरवारों को मिलती है..."

"हम शाहंशाह के साथ रियायत करना चाहते हैं मल्का !..."

"क्यों ?...क्या तुम अपने जख्मों को भूल गये ?...क्यों तुमलोग ऐसा करना चाहते हो सफ्दर ?"

"महज आपका खयाल कर मल्का !..."

"रियाया ने मेरा कैसा ख्याल किया है, यह मैं बखूबी जानती हूँ"—मल्का बोलीं—"कल तक मैं मल्का थी, तुम लोगों पर हुकूमत करती थी और आज अपना सब कुछ लुटाकर भी, इज्जत न लुटा दूँगी....मैं तुम लोगों से कभी यह न कहूँगी कि मुझपर रहम करो...कभी यह न कहूँगी कि मेरे खाविन्द को छोड़ दो..."

"....." सुन रहा था सफ्दर।

इस समय मल्का के मुख से उनका सन्तप्त हृदय बोल रहा था।

"रियाया मेरे नाते, शाहंशाह पर रहम करना चाहती है"—मल्का कहती रहीं—"मगर मैं रियाया की मिहरबानियों से फायदा उठाना नहीं चाहती...मैं नहीं चाहती कि मेरा खाविन्द तुम्हारे सामने घुटने टेककर अपनी जान की हिफाजत माँगे..."

"....." सफ्दर का सर नीचा हो गया।

"रियाया ने बहादुरी के साथ जो बगावत की, मैं उसकी दाद देती हूँ"—मल्का बोलीं—"मगर अब वह हमारे लिए अपनी रहमदिली जाहिर करके क्यों हमारे जख्मी दिल पर नमक छिड़कती है ? जिस बहादुरी के साथ उसने यह सब किया, क्यों नहीं उसी बहादुरी के साथ शाहंशाह को सजाये मौत देती है...."

"हम ऐसा करने से मजबूर हैं...."

"तो मैं आगे कुछ कहने से इनकार करती हूँ सफ्दर !—" मल्का

बोलीं—"जो मन में आये करो। जितना चाहो, हमारी बेइज्जती कर लो..."

सर झुकाकर सफ्दर बाहर आया, जनसमुदाय उत्सुकदृष्टि से उसकी ओर देख रहा था।

"मल्का ने कुछ कहने से इनकार कर दिया दोस्तों!—" सफ्दर बोला—"ऐसी हालत में क्या शाहंशाह को एक दफा इज्जत के साथ लाना ठीक न होगा..."

"उन्हें यहाँ बुलाया जाय और कोई सजा न दी जाय..."

"हम शाहंशाह की जान लेना नहीं चाहते..." एक स्वर से आवाज आई।

"बेहतर है!—" सफ्दर ने प्रहरियों को इशारा किया। प्रहरी शाहंशाह को लेने चले गये। परन्तु थोड़ी ही देर में वे अकेले लौट आये। उनके चेहरे जर्द थे।

"क्या है?"—सफ्दर ने पूछा।

"शाहेआलम ने खुदकुशी कर ली..." प्रहरियों के मुख से निकला।

रेशमी परदे के अन्दर से करुण रुदन का स्वर सुनाई पड़ा।

जनसमुदाय के सर नीचे झुक गये। सबने अपनी टोपियाँ उतार लीं और बहुत देर तक निस्तब्ध रहकर मृत आत्मा के प्रति अपना सम्मान प्रकट किया।

जुल्म ढानेवाले शाहंशाह ने, विद्रोहियों की दया पाने के बदले मृत्यु का आलिङ्गन करना श्रेयस्कर समझा था।

कैदखाने में उनका निर्जीव शरीर पड़ा था।

उधर परदे के अन्दर मल्का चेतनाहीन पड़ी थीं!

● ●

शम्सुल गई, तो जैसे उसकी माँ, अन्धी बुढ़िया की कमर ही टूट गई।

वह बिस्तर पर पड़ी तो उठ न सकी। उसकी अवस्था चिन्ताग्नी से झुलसकर, शोचनीय होती गई।

शम्सुल का नाम उसकी जबान पर था, शम्सुल की सूरत उसके दिल में थी और शम्सुल की प्यारी प्यारी आवाज़ दिन रात उसके कानों में गूँजती रहती थी।

नसीर उसे समझाता था।

कहता था "घबड़ाओ मत चाची! तुम्हारी तबियत ठीक होते ही मैं घूम-घूमकर उस छोकरी का पता लगाऊँगा। दुनिया के किसी कोने में भी वह होगी तो उसे जरूर तुम्हारे पास ला बिठाऊँगा—तुम अपनी सेहत जल्द से जल्द सुधार लो।"

मगर पागल बुढ़िया जैसे समझती ही न थी।

और नसीर भी उसे, उस हालत में छोड़कर कहीं जा नहीं सकता था। उसके चले जाने पर बुढ़िया को दो बूँद पानी कौन देगा?

उसके सामने यह प्रश्न अत्यन्त जटिल था।

यद्यपि नसीर के समझाने पर, बुढ़िया का, शाहजादे के प्रति क्रोध विलीन हो गया था और वह जान गई थी कि शम्सुल के लुप्त होने में शाहजादे का कोई अपराध नहीं—फिर भी उसके हृदय में शम्सुल के लिए जो प्रेम, जो वात्सल्य निहित था, उससे बुढ़िया दिन प्रति दिन मृत्यु के निकट होती जा रही थी।

उस दिन जब नसीर बुढ़िया के झोपड़े में घुसा तो यह देखकर उसे आश्चर्य हुआ कि नित्य की भाँति आज बुढ़िया बड़बड़ा नहीं रही थी, वरन टूटी चारपाई पर शान्त एवं निश्चल पड़ी है।

कदाचित मृत्यु का भयानक हाथ उसका सर थपथपा रहा था।

"चाची!"—नसीर ने पुकारा।

"....." कोई उत्तर न मिला।

नसीर का हृदय आशंका से भर उठा। आज तक जो वह बुढ़िया को मृत्यु के मुख से छीनने का प्रयत्न करता आ रहा था अब उसे लगा, जैसे वह असफल हो गया हो और मानव एवं प्रलय के संघर्ष में प्रलय की ही विजय हुई हो।

"चाची !..." जोरों से चिल्ला उठा वह।

उसकी घबड़ाहट भरी चिल्लाहट झोपड़ी में गूँज उठी ?

चारपाई पर पड़ी, फटे चिथड़ों की उस गठरी में, जरा-सा कम्पन हुआ। तीक्ष्ण आवाज आई—"आओ नसीर !"

नसीर को बुढ़िया का स्वर सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई। उसने आगे बढ़कर उसके मस्तक पर हाथ फेरा। सारा शरीर तवे के समान तप्त था।

"कैसी तबीयत है चाची ?"—पूछा नसीर ने।

"मैंने चलने की तैयारी कर ली है बेटा !"—टूटती आवाज में बुढ़िया बोली—"जानती हूँ, आज नहीं तो कल मुझे जाना ही है। अफसोस यही है कि तुम इस जंग में कामयाब न हुए और मुझे शम्सुल की आवाज सुने बगैर ही जाना पड़ रहा है। अगर एक दफा शाहजादे से मिल लेती तो दिल की आग कुछ कम हो जाती..."

"घबड़ाओ मत चाची ! मैं अभी हकीम साहब के पास जा रहा हूँ..."

"क्या फायदा हकीम साहब की मिन्नत करने से ?...जो होना है, वह तो होकर ही रहेगा और जो हो रहा है उसे होने दो बेटा !"

"नहीं चाची !" उतावली के साथ बोला नसीर—"तुम थोड़ी देर और ठहरो...अपने सफर की तैयारी रोक दो...मैं अभी आया..."

झपट कर नसीर झोंपड़े से बाहर आया।

हकीम का घर वहाँ से दो मील दूर था।

नसीर वहाँ तक जल्द से जल्द पहुँच जाना चाहता था।

यह बुढ़िया, उसके सारे किये कराये पर पानी फेर कर चली जाना चाहती है, पर वह उसे सरलतापूर्वक न जाने देगा।

वह जमीन आस्मान एक कर देगा।

एक बार मौत से भी लड़ेगा वह।

सरपट दौड़ चला नसीर, गाँव की ऊबड़-खाबड़ पगडंडी पर।

अभी वह कुछ ही दूर गया था कि एक दीन-हीन युवक उसके सामने आ पड़ा।

नसीर ने बगल से होकर निकल जाना चाहा, परन्तु फटे चीथड़े पहने हुए उस गरीब युवक ने उसका हाथ पकड़ लिया और विनीत स्वर में बोला—"नसीर भाई..."

नसीर ने झटका देकर अपना हाथ छुड़ा लिया।

बोला—"मुझे जाने दो...इस वक्त मैं जरा भी नहीं ठहर सकता... मुझे अभी बहुत दूर जाना है...और वक्त बहुत कम है...."

"थोड़ी देर के लिये रुको नसीर भाई!..." आगन्तुक पुनः प्रार्थना भरे स्वर में बोला।

इस बार उसकी आवाज सुनकर नसीर चौंक पड़ा।

उसने उस युवक के चेहरे पर दृष्टि डाली।

युवक के शरीर पर दरिद्रता से सने हुए वस्त्र थे, परन्तु मुख पर प्रतिभा थी—"तुम...आप .."

ठीक से कुछ कह न सका नसीर। आश्चर्य उसके चेहरे से टपक रहा था—महान् आश्चर्य!

"हाँ, मैं ही हूँ नसीर!..." युवक बोला।

"शाहजादे साहब! आप यहाँ?...इस हालत में?"—नसीर ने कहा।

"अब मुझे शाहजादा न कहो नसीर!" युवक करुण आवाज में बोला—"मैं रशीद हूँ, तुम्हारा पुराना दोस्त रशीद!..."

"आप की यह हालत कैसे हो गई आलमपनाह?"

"किस्मत जो कुछ कराती है वही होता है नसीर !"—शाहजादा बोला—"मैं यतीम हूँ ! तुम्हारे पास रहने के लिये जगह और पेट भरने के लिये खाना माँगने आया हूँ..."

"मेरी जान तक शाहजादे के लिये हाजिर है"—नसीर बोला—"मगर ताज्जुब होता है यह देखकर कि जो शख्स एक दिन गरीबों को मोहरें लुटाता था, वह खुद आज अपना सब कुछ लुटाकर यहाँ कैसे आ पहुँचा ?..."

"दास्तान बहुत लम्बी है नसीर !" शाहजादे ने कहा—"फिर कभी बताऊँगा...तुम इस वक्त कहाँ जा रहे हो ?"

"हकीम साहब के पास जा रहा हूँ...चाची की हालत ज्यादा नाजुक हो गई है"—नसीर ने कहा।

"तो तुम जल्दी करो नसीर ! मैं अम्मी के पास चलता हूँ ..."

"बेहतर है"—नसीर ने कहा—"वह आप से मिलना भी चाहती है..."

नसीर दौड़ता हुआ चला गया।

धीरे-धीरे शाहजादा झोपड़ी के दरवाजे पर आया !

अन्दर जाकर पुकारा—"अम्मी...."

उसकी आवाज ने बिजली का काम किया।

बुढ़िया के मुख से तुरन्त ही शिथिल स्वर निकला—"यह मैं किसकी आवाज सुन रही हूँ ?"

शाहजादा पास चला गया।

बोला—"मैं हूँ अम्मी !..."

"तुम हो ! शाहजादे बेटा !"—बुढ़िया चिल्ला पड़ी—"आओ, खुदा जानता है कि मैं तुमसे मिलने को बेहद बेताब थी..."

"मैं आ गया अम्मी !..."

"खुदा का लाख शुक्र है बेटा ! कि मरने से पहले तुमसे मुलाकात

तो हो गई"—बुढ़िया बोली—"इधर आओ ! मेरे बदन पर हाथ रखकर मुझे माफ कर दो बेटा !"

"तुमने कसूर ही कौन-सा किया है अम्मी ?"—शाहजादे ने पूछा।

"कसूर !...कसूर तो बहुत बड़ा किया है बेटे !...मगर जिसके पास फरिश्ते का सा दिल है वह अपने ऊपर किये गये जुल्म को भी भूल जाता है..."

"यह तुम कह क्या रही हो ?..."

"बेटा, पिछली दफा जब तुम मेरे पास आये थे, तो मैंने तुम्हें बुरा-भला कहा था। उस वक्त बेटी की मुहब्बत ने, मेरी आँखों के साथ दिल को भी अन्धा बना दिया था..."

"मामूली सी बात के लिए तुम्हें इतना रंज है अम्मी ?"

"नहीं बेटे ! तुम्हारी आवाज सुनकर दिल का सारा गम जाता रहा है"—बुढ़िया बोली—"तुम और शम्सुल एक दूसरे की जान हो। मेरे लिए जैसे तुम, वैसे ही शम्सुल। वह नहीं आई तो क्या हुआ, तुम जो आ गये हो, तो मैं अमनचैन से मर सकूँगी..."

"शम्सुल खैरियत से है अम्मी !" शाहजादे ने कहा।

इस वाक्य ने मानो बुढ़िया के निर्जीव रगों में नवजीवन का संचार कर दिया।

उतावली के साथ बोली वह—"या खुदा ! कहाँ है वह ?"

"शाहीमहल में !..." शाहजादे ने कहा।

"क्या तुम दोनों ने निकाह कर लिया शाहजादे ?"

"नहीं अम्मी !—" बोला शाहजादा—"मेरे साथ फरेब किया गया...शम्सुल आजकल शाहंशाह के साथ है। बहुत खुश है वह !..."

"वह शाहंशाह के पास है ?"—बुढ़िया डूबते स्वर में बोली—"उसने तुमको धोखा दिया ?...बेईमान छोकरी ने मेरे कलेजे पर एक और लात मार दी। पैदा होते ही मर जाती तो यह दिन देखना नसीब

न होता...शाही दौलत की लालच में पड़कर उसने एक फरिश्ते को ठुकरा दिया और एक जिन्न के प्यार में मशगूल हो गई..."

"उसका कुछ कसूर नहीं अम्मा !—"

"तुम ठीक कहते हो शाहजादे !"—बुढ़िया बोली—"उसका कुछ कसूर नहीं। कसूर तो सारा मेरा है, जिसने उसे पैदा किया और उसे पाल पोसकर कहर ढाने की ताकत दी..."

"मैं सब कुछ छोड़कर तुम्हारे साथ रहने आया हूँ अम्मी।"—शाहजादे ने कहा—"सोचा, शम्सुल के न रहने पर तुम्हारी खिदमत कौन करेगा ?"

"यह दुनिया ही कुछ अजीब है बेटा !...अपने पराये हो जाते हैं और पराये अपने बन बैठते हैं...काश, शम्सुल की जगह मेरे पेट से तुम पैदा हुए होते !..."

बुढ़िया चुप हो गई।

नसीर दवा लेकर आ पहुँचा। दवा दी गई। कुछ फायदा भी हुआ।

शाहजादा वहीं रहने लगा।

वह अब उसी परिवार का एक अंग बन गया।

जब बुढ़िया की हालत कुछ सम्हली, तो भीख माँगने के लिये शाहजादा चल पड़ा।

नसीर ने उसे समझाया।

बुढ़िया ने बहुत कुछ कहा।

मगर शाहजादा तो शम्सुल की जिन्दगी अपनाना चाहता था।

और एक दिन फटे चीथड़े लिये हुए पहुँच गया शाहजादा शहर जोमन की सराय के दरवाजे पर।

मुमताज ने कई महीने बाद जब एकाएक वही पुराना दर्द भरा गाना—"दिल की दुनिया में बसाया था जिसे—" सुना, तो उसे महान आश्चर्य हुआ।

वह लपक कर बाहर आई।

उसने शाहजादे को देखा—और शाहजादे ने उसे।

शाहजादे का सर नीचे झुक गया—

और मुमताज की आँखें रो उठीं, उस बदनसीब को देखकर !

● ●

शाहीमहल में आज दरबारे आम है।

परन्तु इस दरबार में शाहंशाह मुहम्मद अली बिन ताहिर के जमाने जैसी रौनक नहीं है।

सल्तनत के हर भाग से सुयोग्य नागरिक आये हैं। बागियों के प्रमुख नेता भी उपस्थित हैं।

क्रांति की अधिष्ठात्री बेगम आलिया भी उचित आसन पर आसीन हैं।

जनता अपने अग्रणी को देखकर अत्यन्त प्रसन्न है। उसके हृदय में बेगम के लिये श्रद्धा का भाव है।

बेगम आज भी अपने प्रच्छन्न रूप में ही हैं। चेहरे पर काला बुर्का और शरीर पर काला लबादा है।

बेगम कुछ कहने के लिए उठीं।

तो सारी जनता चिल्ला उठी—"बेगम आलिया जिन्दाबाद"

बेगम ने हाथ उठाया और सारे दरबार में मृत्यु की सी नीरवता छा गई।

"दोस्तों !..." बेगम आलिया कहने लगीं—"आज तुम्हें यहाँ, इस हालत में मौजूद देखकर मुझे कितनी खुशी हो रही है, इसे या तो खुदा जानता है या मेरा दिल। जिस बात की तमन्ना कई वर्षों से मेरे दिल में थी, वह आज तुम्हारी आजादी देखकर पूरी हो गई।...मैं जानती हूँ कि तुम्हारे दिल में मेरे लिए कितनी इज्जत है, क्योंकि तुम्हारे ख्याल से

तुम्हारी इस कामयाबी में मेरा सबसे ज्यादा हाथ रहा है...मगर मैं औरत होकर इतना सब कुछ कैसे कर गई, इस बात का मुझे सख्त ताज्जुब है और मैं जान गई हूँ कि खुदायेपाक जो कुछ चाहता है वही होता है। इन्सान कुछ भी नहीं कर सकता...और यह सच है कि शाही ताकत के आगे एक कमजोर औरत क्या कर सकती थी, अगर खुदा उसके सर पर न होता ?...इसलिए हमारा फर्ज है कि हम उस रब्बुल इज्जत की, खामोश रहकर कुछ देर तक इबादत करें..."

चुप हो रहीं बेगम।

सब सर झुकाकर खामोश रह गये!

बड़ी देर तक सन्नाटा रहा।

इसके बाद बेगम ने अपना सर उठाया।

बोलीं—"मेरे हमदर्द दोस्तों! आज इस बड़ी सल्तनत का सारा बोझ तुम्हारे कन्धों पर आ पड़ा। गरीब रियाया जुल्म से छूटने के लिए बेताब हो रही है...तुम जानते हो कि कोई भी सल्तनत बगैर किसी ताजवर के चल नहीं सकती, आज सल्तनत तातार बगैर ताजवर के हो गई है। इस लिए हमारा पहला फर्ज यह है कि अपने लिए कोई काबिल ताजवर चुनें..."

बेगम चुप हो गईं जनता चिल्ला उठी—

"हम बेगम साहिबा को ही चुनते हैं...बेगम साहिबा ने अब तक हमारी रहनुमाई की है, इसलिए हमारी ख्वाहिश है कि वे आखिर तक हमारे साथ रहें..."

"दोस्तों!"—बेगम बोलीं—"मैं औरत हूँ और एक औरत सल्तनत की जिम्मेदारी नहीं सम्हाल सकती।....मैंने तुम्हारे लिए अबतक जो कुछ किया है वह सल्तनत पाने की लालच से नहीं, अपना फर्ज समझ कर किया है। तुम्हें इतने से सब्र करना चाहिये। तुम्हारी और कुछ भलाई कर सकना मेरे लिए नामुमकिन है। मैं अपनी तरफ से अमीर सफदर का नाम चुनती हूँ। उन्होंने भी तुम्हारे लिए कुछ कम नहीं किया है। अगर

थे हमारे साथ न होते, तो खुदा जानता है, मैं नाकामयाब रहती। मेरी मिन्नत है कि हमारी आखिरी बात भी तुम लोग उसी तरह कबूल करो, जिस तरह अब तक करते आये थे...बोलो! तुम्हें मंजूर है?..."

"हमें मंजूर है!—" जनता जयघोष कर उठी।

बेगम ने सफ्दर की ओर देखा और सफ्दर ने उठकर जनता के आगे सर झुकाया।

बोला—"भाइयों! आज तुमने जो रुतबा दिया है, मुझे यकीन नहीं कि उसे मैं कायम रख सकूँगा; फिर भी आप की हमदर्दी के लिए निहायत शुक्रगुजार हूँ मैं!...आज मेरी आँखों के सामने अपने प्यारे दोस्त शाहजादा रशीद की सूरत नाच रही है और दिल उसकी जुदाई पर रो रहा है। वह फरिश्ता हमें दगा देकर न जाने कहाँ जा छिपा है। अगर आज वह हमारे सामने होता, तो हमारी आवाज सबसे पहिले उसे अपना ताजवर बनाती। मगर खुदा की मरजी के आगे इन्सान को हमेशा झुकना पड़ता है..."

शाहजादे की याद में सारी जनता शोकाकुल हो गई।

बेगम आलिया भी शाहजादे के विछोह से, अत्यन्त सन्तप्त दिखाई पड़ीं।

वे उठकर बोलीं—"मैंने शाहजादा रशीद को आखिरी बार जेल से बचाया था, इस उम्मीद पर कि आगे चलकर वे हमारे लिए बहुत कुछ करेंगे। मगर अफसोस, हमारे सारे अरमान खाक में मिलाकर, हमें ऐन वक्त पर धोखा देकर, वे चले गये। आखिरी वक्त ऐसा मालूम होता है कि उनके दिल पर निहायत सदमा गुजरा था, जिससे वे एकदम पागल से हो रहे थे..."

बड़ी देर तक जनता में कानफूसी होती रही और शाहजादे के गुणों की चर्चा चलती रही।

अन्त में सफ्दर ने कहा—

"अब हमें अपना काम शुरू करना चाहिए..."

इसके बाद बड़ी देर तक सफ्दर भाषण देता रहा।

उसने प्रजातन्त्र शासन के सम्बन्ध में वह नीति बताई, जिसे उसने और बेगम आलिया ने मिलकर निर्धारित की थी और जिसे प्रजा ने बहुत पसन्द किया।

अन्त में केन्द्रीय शासन परिषद का चुनाव हुआ। सल्तनत के हर शहर में प्रजातन्त्र शासन कायम रखने के लिए स्थानीय परिषद का निर्वाचन हुआ।

सभी पदों पर सुयोग्य नागरिक रखे गये।

कानून बनाने के लिए विधान निर्मातृ समिति भी बनाई गई, जिसने अपने अधिकार से, प्रजा पर लगाये गये काले कानूनों को तुरन्त बहिष्कृत कर दिया।

दरबार समाप्त होने का समय आया, तो सफ्दर उठकर बोला—आज का काम खत्म हुआ। मगर एक बात रह गई। अब तक हम अपने में बेगम आलिया के लिए सैकड़ों अन्दाज लगा चुके हैं। आज सारी रियाया की तरफ से मैं बेगम के सामने घुटने टेककर मिन्नत करता हूँ कि अब वे अपने चेहरे पर से राज का पर्दा हटा लें। रियाया उनकी सूरत देखना चाहती है..."

"मेरी सूरत देखकर रियाया मुझसे नफरत करने लगेगी"—बेगम बोली—"मगर रियाया का हुक्म मानने में मुझे कोई एतराज नहीं..."

बेगम ने अपना बुर्का पीछे उलट दिया।

जनता उनके मुखमंडल को आश्चर्य चकित नेत्रों से देखती रही।

सफ्दर तो गिरते-गिरते बचा।

● ●

शम्सुल आज कल मल्का के साथ रहती है।

उसे शारीरिक सुख है, मगर मानसिक अशान्ति उसका पीछा नहीं छोड़ रही है।

रात को सुलायम बिस्तर पर पड़े-पड़े वह अपने विगत जीवन की घटनायें याद करती है और उस सिलसिले में शाहजादे का प्रेम उमड़ पड़ता है। आँखों में पानी भर आता है और उस पानी से मखमली तकिया भीग उठता है।

उसके दिन तड़पते-तड़पते बीत रहे हैं और रातें रोते-रोते गुजर रही हैं।

उसे चैन नहीं है।

इस लम्बी चौड़ी दुनिया में वह अपने लिए शान्ति की जगह नहीं खोज पाती।

वह अब अपने गाँव को लौट जाना चाहती है।

वह गाँव !

जहाँ शैशव की उमंगें लहलहाई थीं।

जहाँ कि मिट्टी ने उसका बदन सँवारा था।

जहाँ की वायु ने उसकी बाल-सुलभ चपलता पर यौवन का रंग चित्रित किया था।

आजकल अपनी माँ के विछोह से वह दुखी है। उसकी माँ को कितना दुख होता होगा, यह वह अच्छी तरह जानती है।

वह उठी और मल्का से मिलने के लिए उनके प्रकोष्ठ में आई।

मल्का को शाहंशाह की मृत्यु से दुःख था और वे शोकसूचक काले वस्त्र धारण किये पलंग पर बैठी थीं।

शम्सुल को देखकर बोलीं —"आओ शम्सुल !..."

शम्सुल जाकर उनके पास पलंग पर बैठ गई।

"बहुत गमगीन नजर आ रही हो ?"—पूछा मल्का ने।

"....." चुप रही शम्सुल ।

"मैं जानती हूँ"—मल्का बोली—"औरत होने के नाते मैं तुम्हारी मायूसी का सबब जान सकती हूँ...मगर क्या अब भी तुम शाहजादे को पाने की उम्मीद रखती हो ?"

"उम्मीद ही तो इन्सान का सहारा है मल्का !"—शम्सुल ने कहा—"इतनी तकलीफें बरदाश्त की मगर अपनी अस्मत को अछूता रखा, सिर्फ इस उम्मीद पर कि एक न एक दिन उन्हें जरूर पाऊँगी..."

"मैं जानती हूँ कि तुम साफ व पाक हो, मगर शाहजादे के दिल में जो गलतफहमी उठ खड़ी हुई है, क्या वह कभी दूर हो सकेगी ?"—मल्का ने पूछा ।

"खुदा जानता है कि शाहजादे ने मेरे साथ कितना जुल्म किया है ?...अगर एक दफा उनसे मुलाकात हो जाती, तो सारी गलतफहमी लहमे भर में दूर कर देती..."

"अगर शाहजादा जिन्दा है, तो एक न एक दिन तुम्हारी जिन्दगी में जरूर आयेगा ! फिलहाल अगर तुम अपने गाँव वापस जाना चाहती हो, तो मेरे साथ कल चलो । यहाँ मेरी भी तबियत ऊब गयी है । कुछ दिन तक तुम्हारे गाँव में रहने से तबियत बहल जायगी..." मल्का ने कहा ।

"आप मेरे साथ चलें तो मैं निहायत अहसानमन्द होऊँगी—" शम्सुल बोली ।

"तो कल सुबह के लिए सारी तैयारी कर लो..."

दूसरे दिन ।

प्रातःकाल सात-आठ ऊँटों का एक छोटा-सा काफिला, मल्का और शम्सुल को लेकर तातार से चल पड़ा ।

रास्ता खतरनाक था, इसलिए केवल दिन में ही काफिला चलता था और रात में किसी कसबे के पास विश्राम करता था ।

चौथे दिन शाम को एक छोटा-सा काफिला शहर जोमन की सराय में ठहरा ।

सराय के जिस कमरे में शाहजादा ठहरता था, उसी में शम्सुल को स्थान मिला।

मल्का उसके बगल वाले कमरे में थीं।

यहाँ आकर शम्सुल के हृदय में पुरानी स्मृतियों ने करुणा की वृष्टि कर दी।

एक दिन वह था—

जब इसी कमरे में सल्तनत तातार का चाँद था।

जब यहाँ का जर्रा-जर्रा शम्सुल को मदहोश बना देने वाला था—

और एक दिन आज है—

जब शामदान की रोशनी में भी, शम्सुल की आँखों के समक्ष अँधेरा ही अँधेरा है—

यहाँ का कण-कण उसके हृदय में शूल की तरह चुभ रहा है।

मुमताज आई तो शम्सुल को देखकर चौंक पड़ी। उसके नेत्रों के समक्ष उस दीन-हीन मदभरे नयनों वाली भिखारिन की आकृति स्पष्ट हो उठी।

आज वही भिखारिन शाही लिबास में उसके सामने खड़ी थी।

आँखों की पुतलियों में, मदिरा की छलछलाहट की जगह, करुणा के आँसू थे।

"तुम..." शम्सुल भी उसे देखकर चौंक पड़ी—"अच्छी तो हो?—"

"शुक्र है..." कहा मुमताज ने।

"पहचानती हो मुझे?—" शम्सुल ने पूछा।

"भला आपको न पहचानूँगी?—" बोली मुमताज—"जिसने आपकी आँखें देखी हों, वह आपको कभी भूल सकता है?..."

"तुम्हारी सूरत से जाहिर है कि मुझे यहाँ देखकर तुम्हें सख्त ताज्जुब हुआ है..." शम्सुल ने कहा।

"आपको यहाँ देखकर मुझे ताज्जुब नहीं हुआ है, क्योंकि आप तो

यहाँ रोज आया करती थीं, चन्द महीनों पहले !—" मुमताज बोली—"ताज्जुब मुझे हुआ है जरूर मगर इस वजह से नहीं !"

"तब किस वजह से ?" शम्सुल ने पूछा।

"दुनिया की तब्दीली देखकर मुझे ताज्जुब हुआ—" बोली मुमताज —"मेरी जबान पर 'तुम' के बदले 'आप' है और आपके बदन पर, गरीबी के बदले, दौलत का तमाशा...जहाँ एक दिन कोई दूसरा था, वहाँ आज आप हैं और जहाँ एक दिन आप थीं वहाँ आज कोई दूसरा है...क्या यह ताज्जुब की बात नहीं ?"

"मैं तुम्हारी बातों का मतलब समझ न सकी..." शम्सुल ने कहा।

"समझ भी नहीं सकेंगी आप !—" मुमताज फीकी हँसी हँसकर बोली—"कुदरत का तमाशा कोई समझ सका है कभी ?"

मुमताज चली गई तो शम्सुल उसकी बातों का मतलब सोचने लगी।

यद्यपि मुमताज की बातें इतनी गूढ़ नहीं थीं, मगर शम्सुल के लिए तो यह पहेली दुर्भेद्य थी।

रात गुजरती जा रही थी और शम्सुल की करवटों से पलंग काँप उठता था।

नींद नहीं आ रही थी उसे। विचारों की श्रेणी अन्त तक जा पहुँची थी।

बहुत देर बाद उसकी आँखों में नींद आई। फलतः वह सुबह होने के बहुत देर बाद तक सोती रही।

काफिला चल पड़ने को तैयार था और मल्का उसके कमरे में दो बार आ चुकी थीं दोनों बार उसे निद्रामग्न पाकर लौट गई थीं। वे उसे जगाना नहीं चाहती थीं।

खिड़की की राह सूर्य की किरणें आकर शम्सुल के अलसित शरीर पर क्रीड़ा कर रही थीं।

मगर शम्सुल बेसुध थी।

और शायद बहुत देर तक बेसुध रहती, यदि कहीं से एक दर्दभरे गाने की आवाज न आती।

न जाने क्यों शम्सुल का शरीर अचानक सिहर उठा और वह पलंग पर उठकर बैठ गई।

उसने सुना।

सालों से बिसुड़ा हुआ वह पुराना गाना। सुनकर उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा।

सुनने लगी वह।

एक पुरुष की करुण आवाज वही गाना दुहरा रही थी—

दिल की दुनिया में बसाया था जिसे,

और आँखो ने चुराया था जिसे।

बेचैन हो गई शम्सुल। उस स्वर के दर्द से वह भली-भाँति परिचित थी।

अपने कमरे में बैठी हुई मल्का भी वह स्वर सुनकर विस्मित हो उठी थीं।

उस आवाज ने उनके हृदय में पैठकर उनका कलेजा मरोड़ डाला था।

फिर भी वे शान्त थीं। जमाने की गर्दिश ने उन्हें शान्त रहने की शिक्षा दी थी।

मगर शम्सुल शान्त न रह सकी।

बदहवास-सी निकलकर वह उस ओर को दौड़ी जिधर से वह स्वर आ रहा था। वह दर्दभरी आवाज अब भी हवा पर तैर रही थी—

दिल की दुनिया में बसाया था जिसे,

और आँखों में चुराया था जिसे।

स्वर बन्द हुआ, तो तीव्र आर्तनाद करती हुई शम्सुल गाने वाले के पैरों पर गिर पड़ी।

बोली—"मेरे शाहजादे !..."

गाने वाला एक भिखारी था।

उसने चौंककर शम्सुल को देखा और तब बलपूर्वक अपना पैर खींच लिया।

शम्सुल वेदनापूर्ण स्वर में बोली—"मेरे दिल ! मुझे माफ कर दो..."

"शम्सुल !..." रूखे स्वर में बोला भिखारी—"क्यों आई हो मेरे पास ?"

"तुम्हारी तलाश करते-करते यहाँ आ गई शाहजादे !"—बोली शम्सुल ।

भिखारी हँसा, एक करुण हँसी ।

बोला—"मेरी तलाश तुम्हें कब से थी शम्सुल ?...दौलत की तलाश करो...मेरे पास अब क्या रखा है ?..."

"मुझे तुम्हारी मुहब्बत चाहिये शाहजादे ! दौलत नहीं..."

"शाहेआलम से तुम्हें मुहब्बत भी मिल जायगी और दौलत भी"—शाहजादा बोला—"तुम उन्हीं के पास जाओ..."

"वे अब नहीं रहे..." शम्सुल बोली ।

"यह बात है !"—व्यङ्गपूर्ण स्वर में शाहजादे ने कहा—"भाईजान अब नहीं रहे, तो तुम्हें मेरी तलाश करनी पड़ी...शाही ऐवान की बाँदी ! एक दफा तुम मुझसे दगा कर चुकी हो, अब मेरे सामने आकर क्या मेरी गरीब जान भी लेना चाहती हो ?..."

"तुम्हें गलतफहमी हुई है शाहजादे !"—शम्सुल ने शाहजादे का हाथ पकड़ लिया । आँखों से आँसू बरस पड़े ।

"खुदा करे मेरी यह गलतफहमी हमेशा कायम रहे ताकि तुम मेरे साथ फिर दगाबाजी न कर सको..."

शाहजादे ने निष्ठुरतापूर्वक शम्सुल का हाथ झटक दिया ।

उसी समय मल्का भी आकर शाहजादे के सामने खड़ी हो गईं । उनका मुख अतिशय गम्भीर था ।

शाहजादे ने उन्हें देखा, फिर सर नीचा कर लिया ।

फिर देखा और देखता रहा ।

उसके हृदय में ममत्व का शोर हो रहा था ।

"शाहजादे !..." मल्का ने करुण वाणी में पुकारा।

"....." शाहजादा चुप रहा। फिर सर नीचा कर लिया उसने।

"दगाबाज बच्चे ! जवाब भी नहीं देना चाहते तुम ?"—मल्का की आवाज जैसे रो रही थी।

एकाएक शाहजादा उठ खड़ा हुआ !

मल्का उसकी ओर बढ़ी।

दूसरे ही क्षण शाहजादे का कृश शरीर, मल्का के वक्ष से चिपट गया।

"मल्का !...मेरी माँ..." रुद्ध कंठ से शाहजादे ने कहा।

"मेरे बेटे !..." मल्का बोलीं।

अरसे से बिछुड़े हुए माँ बेटे आज मिले थे।

उनकी आँखें रो रही थीं। चेहरा आँसुओं से तर था।

"यह तुमने अपनी क्या हालत बना रखी है रशीद ?" मल्का ने पूछा।

"खुदा को यही मंजूर था मामीजान !" बोला शाहजादा।

"यह क्यों नहीं कहते कि अपने को मिटाना तुम्हें मंजूर था"-मल्का ने कहा—"अपनी तबाही के लिये तुम खुद जिम्मेदार हो। तुमने अपनी तन्दुरुस्ती मिट्टी में मिला दी है...जानते हो, तुम्हारी जिस्म को मैंने अपना खून दे-देकर तन्दुरुस्त बनाया था। तुम्हें कोई हक नहीं था कि तुम मेरी अमानत के साथ इस कदर पेश आते...."

"....."

चुप हो रहा शाहजादा। कोई उत्तर न दे सका।

शम्मुख भी चित्रलिखित-सी खड़ी रही।

"आज सल्तनत में चारों तरफ जलसे हो रहे हैं"—मल्का बोली—"रियाया बहुत खुश है। बेताबी के साथ तुम्हारी खोज कर रही है और तुम गर्दोगुबार में सने हुए यहाँ पड़े हो..."

"आपका ख्वाब तो पूरा हो गया मामीजान !"—व्यङ्गपूर्ण मुस्क-

राहट एक क्षण के लिए शाहजादे की मुखाकृति पर खेल गयी, मगर तुरन्त ही वह गम्भीर हो उठा।

"मेरा ख्वाब ?...यह तुम क्या कह रहे हो शाहजादे ?"

मल्का को अत्यन्त आश्चर्य हुआ, शाहजादे की बातें सुनकर ?

"हाँ ! आपका ख्वाब बेगम आलिया !"

"तुम्हारा मतलब ?"—

"मेरा मतलब है कि बेगम आलिया बनकर आप जो ख्वाब देख रही थीं, वह पूरा हो चुका न ?"—बोला शाहजादा।

मल्का ने शाहजादे के सरपर हाथ फेरा।

बोली—"तो तुम मुझे पहचान गये थे शाहजादे ?"

"भला एक बेटा अपनी माँ को न पहचानेगा ?"—शाहजादे ने कहा—"बेगम आलिया की आवाज कानों में जाते ही मैं समझ गया था सब कुछ। जो आवाज बच्चेपन से ही सुनता आ रहा था, उसे पहचानने में मुझसे भूल कैसे होती मामीजान ?" इतने में ही एक युवक, सड़क पर से दौड़ता हुआ आया और शाहजादे के सामने खड़ा हो गया। उसके चेहरे से उद्विग्नता टपक रही थी।

"गजब होना चाहता है रशीद !..." वह युवक घबराहट के साथ शाहजादे से बोला।

परन्तु दूसरे ही क्षण उसकी दृष्टि शम्सुल पर पड़ी। वह चौंक उठा।

"तुम !..." इससे अधिक वह कुछ न कह सका।

"नसीर भाई !..." शम्सुल उसकी ओर बढ़ी।

वह नसीर ही था। शम्सुल को देखकर उसके मुखपर घृणा की छाप अंकित हो उठी थी।

शम्सुल ने नसीर का हाथ पकड़ना चाहा, परन्तु वह दो पग पीछे हट गया—

और चिल्लाया—

"दूर रहो !...मेरे जिस्म पर अपना नापाक हाथ मत लगाना—"

नसीर के स्वर में जो उपेक्षा का भाव था और उसके शब्दों में अन्तराल भेद देने की जो शक्ति थी, उससे शम्सुल मर्माहत हो उठी।

उसने आकुल स्वर में कहा—"मुझे माफ कर दो नसीर भाई !..."

"माफ कर दूँ ?—" बोला नसीर—"उसे माफ कर दूँ, जिसने हमारी जान तक ले डाली है ?...बेवफा की पुतली ! मुझसे दूर ही रहना। मेरे हाथों की ताकत अब भी मौजूद है। मैं तुम्हारा गला घोंट दूँगा।"

"......" कुछ कहना चाहते हुए भी शम्सुल कुछ न कह सकी।

नसीर ने शाहजादे का हाथ पकड़ लिया।

बोला—"जल्दी चलो शाहजादे !...चाची की जान निकल रही है। वे आखिरी वक्त तुमसे कुछ कहना चाहती हैं..."

शाहजादे का हाथ पकड़कर नसीर उसी प्रकार दौड़ता हुआ, दृष्टि से ओझल हो गया।

जब शाहजादा झोपड़ी में पहुँचा, उस समय बुढ़िया का आखिरी वक्त था। साँस अटकी हुई थी, उससे कुछ कहने के लिए।
सुबह जब शाहजादा गया था, तो बुढ़िया की हालत और दिनों से कुछ अच्छी थी।

मगर वह नहीं जानता था कि बुझने के वक्त शमा की लौ तेज हो उठती है।

"अम्मीं !..." शाहजादे ने पुकारा !

मरती हुई बुढ़िया की जबान काँपी। मुँह से कुछ अस्फुट स्वर निकलने लगे।

शाहजादे ने बुढ़िया के मुख से अपने कान लगा दिये।

अत्यन्त क्षीण स्वर में बुढ़िया कह रही थी—

"मेरे बेटे !...मुझे याद है...तुमने एक दिन कहा था कि तुम और शम्सुल आखिरी दफा किसी नखलिस्तान में मिले थे...मेरी तमन्ना है कि मेरी कब्र वहीं बने जहाँ कि सरजमीं और हवा ने दो बुलबुलों की चहचहाहट सुनी...मेरी यह ख्वाहिश तुम पूरी करना रशीद !"

बुढ़िया की आवाज क्षीण होती गई।

जलती हुई शमा बुझने के करीब आ गई और तीव्र वायु के एक झोंके ने उसका काम तमाम कर डाला।

शाहजादे ने अपनी नम आँखें पोंछ लीं।

नसीर रोता हुआ झोंपड़े के बाहर आ रहा।

उसी पगडण्डी पर एक ऊँटगाड़ी आ खड़ी हुई, जिस पर से शम्सुल और मल्का उतरीं।

मल्का धीरे-धीरे झोंपड़े की ओर बढ़ीं, मगर शम्सुल उनसे पहले ही दौड़कर दरवाजे पर पहुँच गई।

वह अन्दर जाना ही चाहती थी कि नसीर ने लपककर, उसका हाथ पकड़ लिया।

बोला तुम अन्दर नहीं जा सकती।"

"जाने दो नसीर! आखिरी बार माँ के मुँह से निकली हुई आवाज सुनने दो..."

"अब चाची की जबान बेजबान हो गई है—" नसीर ने कहा—"मरकर भी उसे चैन न लेने दोगी..."

"अम्मीं!..." तीव्र आर्तनाद कर उठी शम्सुल।

नसीर से अपना हाथ छुड़ाकर वह दौड़ पड़ी झोंपड़े के अन्दर। रास्ते में शाहजादे से वह टकरा गई।

जाकर धड़ाम से बुढ़िया के निर्जीव शरीर पर वह गिर पड़ी।

शाहजादे ने उसका हाथ पकड़कर उठाया?

रुद्ध स्वर में कहा—"उठो!...लाश को मुझे उठाने दो..."

"कहाँ ले जाओगे?...तुम मेरी अम्मीं को कहाँ ले जाओगे?..."

"उसी नखलिस्तान में, जहाँ एक दिन तुम्हारे नापाक कदम पड़े थे..."

"मत ले जाओ!..." इन्हें मत ले जाओ..." शम्सुल रोने लगी।

"हट जाओ!..."

कहकर शाहजादे ने शम्सुल को बलपूर्वक लाश से अलग किया। और उस निर्जीव शरीर को उठाकर कन्धे पर रख लिया।

झोपड़ी के बाहर आकर वह सीधे पगडण्डी पर चल पड़ा। नसीर भी उसके पीछे हो लिया।

दोनों चुप थे।

शाहजादा बढ़ा जा रहा था, बुढ़िया की लाश पीठ पर रखे और नसीर भी तेजी के साथ उसका अनुसरण कर रहा था।

उस समय रेगिस्तानी वातावरण क्षुब्ध, अत्यन्त क्षुब्ध-सा लग रहा था।

हवा की तेजी और गर्मी बढ़ती जा रही थी।

बहुत दूर जा चुकने पर नसीर ने पीछे घूमकर देखा—दूर बहुत दूर, पीछे पगडण्डी पर शम्सुल और मल्का चली आ रही थीं!

उन स्त्रियों के लिये, पुरुषों की गति का अनुसरण करना असम्भव था।

अब शाहजादा पगडण्डी छोड़कर, रेगिस्तानी मार्ग पर अग्रसर हुआ।

नसीर ने सामने नजर उठाई तो स्तब्ध रह गया।

शाहजादे के पास आकर बोला वह—"शाहजादे!..."

"कहो क्या है?"—गम्भीर स्वर में शाहजादे ने पूछा।

"हवा की यह गर्मी और तेजी देख रहे हो?"

"देख रहा हूँ..."

"और इधर सामने देखो!"—नसीर ने कहा—"धूल गर्द और बालू की एक खौफनाक दीवार आस्मान छूती हुई चली आ रही है..."

मूक दृष्टि से शाहजादे ने उस ओर देखा—

नसीर ने जो कुछ कहा था, सच था।

"आँधी है"—नसीर बोला—"रेगिस्तानी आँधी!"

"तूफान इस वक्त मेरा रास्ता नहीं रोक सकता नसीर!—"शाहजादे ने कहा—"मुझे किसी तरह जल्द उस नखलिस्तान तक पहुँचना है..."

शाहजादा, रेगिस्तान की आँधी और उसकी भयंकरता को जानता था।

"मेरी बात मानों, कुछ देर के लिये रुक जाओ शाहजादे! यह तूफान, अपने थपेड़ों से इन्सान की जान तक ले सकता है"—नसीर ने कहा।

"मुझे अपनी जान की परवाह नहीं नसीर! अगर तुम्हें अपनी जान का खौफ हो तो लौट जा सकते हो!"—बोला शाहजादा।

वह बढ़ता गया।

नसीर भी पीछे-पीछे चलता रहा।

तूफान की दीवार हाहाकार करती हुई बढ़ी आ रही थी।

हवा के साथ अगणित बालू के कण उड़-उड़कर आँखों में पड़ने लगे थे।

"रुक जाओ शाहजादे! अपनी जान मत दो..."

नसीर ने पुनः हठपूर्वक कहा।

"मैं कहता हूँ कि तुम लौट जाओ नसीर!"—शाहजादा बोला—"मैं तो पहले से ही मुर्दा हो चुका हूँ। यह तूफान मेरी जान क्यों ले सकता है?"

देखते-देखते चारों ओर अन्धकार छा गया।

घबड़ाकर नसीर रुक गया।

मगर शाहजादा बढ़ता ही गया, आँखें मूँदकर।

हवा के झोंके के साथ ढेर के ढेर बालू सट्ट--सट्ट उसके बदन से लग रहे थे।

परन्तु अब शाहजादे की मंजिल भी खत्म हो चुकी थी।

नखलिस्तान थोड़ी दूर पर था।

उस समय चारो ओर प्रलय मच गया था। तूफान का वह दृश्य अत्यन्त भयानक था।

नखलिस्तान तक पहुँचते-पहुँचते शाहजादा गिर पड़ा।

उसके काँपते हाथों से लाश छूटकर जमीन पर गिर पड़ी।

शाहजादे को खुशी थी, कि उसने बुढ़िया की आखिरी इच्छा पूर्ण कर दी।

वह वहीं जमीन पर बैठ गया।

वहाँ से उठ सकने का साहस उसमें न था। शक्ति ने जवाब दे दिया था।

शाहजादा समझ गया कि अब उसकी भी कब्र उसी रेगिस्तान में ही बनेगी और थोड़ी ही देर में हवा के साथ उड़कर गिरती हुई बालू की ढेर में उसका शरीर लुप्त हो जायगा।

उसने आँख खोलने की कोशिश की, मगर खोल न सका।

उसी समय किसी का कोमल शरीर उसके ऊपर लुढ़क पड़ा।

वह चौंका। बोला—"कौन है ?...कौन है, जो मुझे मरने भी नहीं देना चाहता।"

"मैं हूँ !..." एक क्षीण स्वर सुनाई पड़ा।

"शम्सुल, तुम "—शाहजादा आश्चर्य से बोला—"जहाँ तक सिर्फ मैं पहुँच पाया, वहाँ तुम कैसे पहुँच गई ?..."

"मुझे अपने साथ मरने का इजाजत दो शाहजादे !" शम्सुल बोली—"तुम्हें जिन्दा न पा सकी, तो मर कर ही सहा—"

"यह नहीं हो सकता...नहीं हो सकता यह !...तुम्हें अपने साथ नहीं ले जा सकता...तुम जन्नत में भी मेरे साथ दगा करोगी..."

"शाहजादे !..." शम्सुल ने कसकर शाहजादे का शरीर अपनी बाँहों में पकड़ लिया—"अपनी गलतफहमी दूर करो...तुम्हारी कसम, इस तूफान की कसम और अपनी अम्मी की कसम खाकर कहती हूँ कि मैं अब तक बिलकुल साफ व पाक हूँ...शाहंशाह ने मेरे साथ ज्यादती की थी...."

'क्या तुम सच कह रही हो !..."

"बिल्कुल सच !..."

"तो आओ !"—शाहजादा बोला—"अब हम दोनों साथ ही मरेंगे। खुदा ने चाहा, तो हम मरकर भी अलग न होंगे..."

दोनों एक दूसरे की बाँहों में लिपट गये।

इस जीवन में पहली और आखिरी बार दोनों ने एक दूसरे का चुम्बन किया।

उनके शरीर निचेष्ट हो रहे थे और उधर बालू की राशि उनके बदन पर पुष्प-सी गिर रही थी, जिससे उनका शरीर धीरे-धीरे बालू के भीतर छिपता जा रहा था।

उनकी मंजिल समाप्त हो चली थी।

× × × ×

दूसरे दिन !

तूफान शान्त था ! हवा निश्चल थी।

सूर्य की किरणें दूर-दूर तक रेगिस्तान पर चमचमा रही थीं।

दो व्यक्ति उस नखलिस्तान के समीप खड़े थे—एक पुरुष और दूसरी स्त्री।

कल के तूफान ने रेगिस्तान में कहीं-कहीं गड्ढे बना दिये थे और कहीं-कहीं ऊँचे टीले दृष्टिगोचर हो रहे थे।

पुरुष ने, बालू के एक टीले की ओर दिखाकर कहा—"यही है !"

"यही है उनकी कब्र ?..." गम्भीर स्वर में स्त्री ने पूछा।

हँसते थे जिन्दगी में जो, अपनी बहार देखकर।
रोती है आज बेकसी, उनकी मजार देखकर॥

वह था नसीर !

वह थीं मल्का !

"हाँ ! यही उनकी कब्र है मल्का !" नसीर ने कहा।

"दुनिया भी कितनी अजीब है नसीर ?"—मल्का बोली—"यहाँ दगाबाजों को ही आराम मिलता है...इन दोनों दगाबाजों को देखो !... बालू की गोद में क्या आराम से सो रहे हैं ?...बेइमान कहीं के !..."

मल्का टीले के पास घुटने के बल बैठ गईं।

शम्सुल और शाहजादे के कब्र पर फातिहा पढ़ने लगीं। इसके बाद वे उठ खड़ी हुईं।

"चलो नसीर!"—बोली मल्का—"वे दोनों दीवाने चले गये हमें अकेला छोड़कर मगर हम मरेंगे नहीं। सीना खोलकर रंजोगम बरदास्त करेंगे हमलोग..."

आगे आगे मल्का, और उनके पीछे-पीछे नसीर!

दोनों चलते गये।

बालू के सागर में दूर क्षितिज के पास जाकर उनकी आकृति विलीन हो गई।

❀ बस ❀